सिंहावलोकन

हिन्दुस्तानी-समाजवादी-प्रजातन्त्र सेना द्वारा भारत मे
सशस्त्र क्रान्ति के प्रयत्नो के सम्बन्ध मे लेखक के सस्मरण

यशपाल

विप्लव कार्यलय, लखनऊ की ओर से

लोकभारती प्रकाशन

१५-ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-१

मेरी यह स्मृतिया अपने उन साथियो की स्मृति मे समर्पित है जिनके साथ परस्पर विश्वास और सहयोग मे अपने देश की जनता के लिये मनुष्यता के अधिकार पाने के संघर्ष मे मृत्यु का भय भी हमारे मार्ग मे रुकावट न डाल सका था ।

और

आज के अपने उन साथियो को भी जो पहले किये जा चुके प्रयत्नो मे असफलता के अनुभवो के बावजूद और भविष्य मे भय की आशकायें देखकर भी जनहित के लिये अपना सर्वस्व बाजी पर लगाने मे झिझक नही दिखा रहे है, अपने यह अनुभव उनके लिये उपयोगी हो सकने के विश्वास मे प्रस्तुत कर रहा हू ।

यशपाल

प्रसंग-क्रम

छिन्न सूत्रों की खोज : ९—१६

जम्मू में दल के जमाव और नये ढंग के बम के अधिकार का प्रयत्न जेल में सुखदेव का अनशन। सूत्रों की खोज के लिये भेस बदल जेल में सुखदेव से मुलाकात।

सहारनपुर बम-फैक्टरी १७—३४

आगरा से सहारनपुर में केन्द्र का परिवर्तन। सहारनपुर की फैक्टरी का सुराग। शिववर्मा, जयदेव कपूर की गिरफ्तारी के समय पुलिस का व्यवहार और अफसर की बहादुरी। कांग्रेसी नेताओं के बचाव के लिये गयाप्रसाद का संकट। तत्कालीन कांग्रेसी सज्जनों और आधुनिक कांग्रेसी-मन्त्रियों का व्यवहार।

कलकत्ता और नये बम की विफलता ३४—४१

कलकत्ता में भगवती भाई से मेल। बंगाली क्रान्तिकारियों से परिचय। नये बम की विफलता।

बम के नुसखे की खोज में कश्मीर यात्रा ४२—५३

विदेशी गुलामी के विरोध की भावना से जनता की प्रतिक्रिया। डल झील की लहरों पर फांसी के मार्ग की ओर कदम।

दिल्ली और रोहतक में बम बने : ५४—७०

दिल्ली में फरारी का अड्डा। फरार जीवन का ढंग। रोहतक की सफल बम-फैक्टरी। नौकर के भेस में। जयचन्द्र जी से मुलाकात।

तेहखंड में लाइन के नीचे बम : ७१—९४

इन्द्रपाल साधु के भेस में। पुलिस की बुद्धि और ईमान। रेल लाइन के नीचे बम दबा दिये गये। मौत के मार्ग पर प्रतिद्वन्द्विता। आजाद का विश्वास। कांग्रेसी नेता के अनुरोध से घटना स्थगित।

सूत्रों का विस्तार : ९५—११३

हंसराज वायरलेस, कैलाशपति, भैया आजाद, बाबा सावरकर और दिल्ली के दूसरे साथी तथा अड्डे।

वाइसराय की गाड़ी के नीचे विस्फोट : ११४—१३२

हंसराज के वायरलेस का यथार्थ । फिर कांग्रेसी नेताओं का हस्तक्षेप । अंतिम क्षण में निश्चय परिवर्तन । विस्फोट । बचाव की निराशा में बचाव ।

बम का दर्शन : १३३—१४८

दल का व्यापक आयोजन । 'बम का दर्शन' । क्रान्तिकारी और गांधी जी ।

भगतसिंह और दत्त को जेल से निकालने की योजना : १४९—१८४

हंसराज का मूर्छा गैस का प्रपंच । जाली सिक्का । कोकीन की चोरी । सुखदेवराज की व्यग्रता । प्रकाशवती से परिचय और उनकी फरारी । चतुर दयालु पड़ोसिन । सुशीला जी और दुर्गा भाभी की फरारी ।

भगवती भाई की शहादत : १८५—१९२

रावी नदी के तट पर बम का परीक्षण ।

जेल पर आक्रमण और बहावलपुर रोड विस्फोट : १९१—१९२

जेल के दरवाज़े तक । बंगले में विस्फोट के कारण भगदड़ ।

जलगांव अदालत में मुखबिर पर गोली : १९३—१९७

उत्तर भारत में हिंसप्रस के प्रयत्नों और बंगाल में सशस्त्र क्रान्तिकारी प्रयत्नों के प्रति जनता की प्रतिक्रिया ।

दिल्ली की बड़ी बम-फैक्टरी : १९८—२०१

दल में जनतन्त्रात्मक ढंग के अभाव के कारण निर्बलता और अनुशासन की कमी ।

यशपाल को प्राण दण्ड का निर्णय : २०२—२१२

दल में उपदलों की फूट और साथियों की सैद्धान्तिक निर्बलता ।

आतिशीचक्कर : २१३—२३०

दृष्टिकोण के आपसी भेद ।

दल भंग : २३१—२४५

आत्मालोचन ।

भूमिका

पुस्तक के परिचय के सम्बन्ध मे प्राय सभी आवश्यक बातें सिंहावलोकन के पहले भाग के आरम्भ मे लिखी जा चुकी है। अब फिर पुस्तक का परिचय देने की आवश्यकता नहीं है।

पहले भाग के प्रकाशन के बाद पाठकों की प्रतिक्रिया-रूप कुछ विचार या आलोचनायें सुनने को मिली है। हि० स० प्र० स० के अधिकांश साथियो ने उस भाग म तथ्यों को बहुत निष्पक्ष और तटस्थ रूप म लिखा गया समझा है। दूसरा भाग प्रकाशित करते समय उन्हे विश्वास दिलाना चाहता हू कि मैंने इस भाग मे भी अपनी चेतना मे वैसा ही व्यवहार और दृष्टिकोण बनाये रखने का यत्न किया है।

एक-दो साथियो ने मुझे ऐसे भी सुझाव मिले है कि मेरी पुस्तक म कुछ साथियो या प्रकरणो की चर्चा छूट गई है। ऐसा हुआ है और इस का कारण है कि मैं पुस्तक को इतिहास क रूप म नहीं, अपनी स्मृतियो के रूप म लिख रहा हू। यह स्मृतिया इतिहास का अश जरूर है परन्तु पूर्ण इतिहास नहीं। जिन व्यक्तियो या घटनाओं स मेरा पर्याप्त अधिकारिक परिचय नहीं था, उनके विषय मे चुप रहना ही मैंने उचित समझा है। जिन घटनाओ और व्यक्तियो की चर्चा मैं आलोचनात्मक ढंग म न कर सकता था, उन्ह भी छोड दिया है।

एक आध जगह से दबे दबे स्वर म यह भी सुनने को मिला है कि मुझे जो बातें अपने अनुकूल जान पडी, मैंने अपनी स्मृतियो मे उन्ह ही स्थान दिया है और जो मेरे प्रतिकूल जा सकती थी, उन्ह छोड गया हु। इस प्रकार की आलोचना का उत्तर यही दे सकता हू कि अतीत की उन घटनाओ के विषय म लिखने का अधिकार और अवसर सभी को है। जो साथी अपनी स्मृति द्वारा उन घटनाओं या उस समय पर अधिक प्रकाश डालकर वास्तविकता के विश्लेषण म सहायता दे सकते है, उन्ह ऐसा अवश्य करना चाहिए।

दूसरी ओर बहुत अधिक मुखो से सुना है कि मैंने अपनी अपेक्षा दूसरो की ही चर्चा और श्लाघा अधिक की है, मैं केवल पृष्ठभूमि म सहायक-पात्र के रूप मे ही दिखाई देता हू। प्रथम भाग म वर्णित घटनाओं म मेरा जितना भाग था, उससे अधिक अपनी बात कैसे कह सकता था। मैंने उस भाग मे भी अपने आप को विनय से या सकोच से छिपाया नही है। मुझे समझने या आन्दोलन मे मेरा भाग जानने की इच्छा इस भाग मे अपेक्षाकृत अधिक पूरी हो सकेगी।

इस भाग मे अपनी समझ से आन्दोलन को बढाने और हानि पहुचाने वाली दोनो ही तरह की प्रवृत्तियो, घटनाओ और उन से सम्बन्धित साथियो का भी वर्णन मैंने किया है। उन घटनाओ पर लीपा-पोती कर भडकीले आवरण चढा देने से कोई लाभ न हो सकता था। 'सिंहावलोकन' की उपयोगिता उन सफलताओ और असफलताओ का विश्लेषण कर उन से कुछ निष्कर्ष निकाल सकने मे ही है। अनेक भूलो म मैंने भी भाग लिया है। अपनी आलोचना करने म मैंने ममता या सकोच नही किया है। भूलो का ठेका मैंने ही नही ले लिया था। जिन दूसरे साथियों से भूलें हुईं, उन की चर्चा भी मैंने उसी स्पष्टवादिता से करना उचित समझा है, जैसे अपनी भूलो की।

आज मैं और मेरे उस समय के दूसरे साथी अपनी उन दिनो की सफलताओ और विफलताओ की पूजी पर निर्भर नही कर रहे है। उस समय हमने जो कुछ भी किया था आज छोटे-मोटे इतिहास का अग बनकर समाज के लिये विश्लेषण की चीजें बन चुकी है। हम उस समय स्वय उन घटनाओ के पात्र होने के कारण उन घटनाओ का विश्लेषण करके उनके कार्य-कारण के सम्बन्ध नही जोड सकते थे। उस समय हमारे उद्देश्य और भावनायें ही हमारे दृष्टिकोण और परख को निश्चित कर सकती थी। आज हम उन घटनाओ के परिणामो को कसौटी बनाकर अपने तत्कालीन दृष्टिकोण और भावनाओ के औचित्या-नौचित्य की जाच कर सकते है। उन घटनाओ से व्यक्तिगत नाते का मोह छोडकर हम आलोचक बन सकें, यही हम लोगो को अब शोभा देता है।

होली
१२ मार्च, १९५२
प्रथम सस्करण

यशपाल

छिन्न सूत्रों की खोज

कांगड़ा पहाड़ी नदियों की लम्बी-लम्बी गोरी बाहों के आलिंगन में लिपटी हरी-हरी पहाड़ियों पर छिटकी संक्षिप्त-सी बस्ती है। सबसे ऊंची पहाड़ी की चोटी पर एक बहुत बड़े किले के भग्नावशेष नीले आकाश की ओर सिर उठाये खड़े हैं। उत्तर-पश्चिम की ओर बहुत समीप ही सदा बर्फ से ढकी पहाड़ियां चांदी के उजले ढेरों की तरह आंखों को चकाचौंध करती रहती हैं। मेरे मन में कांगड़ा की घाटी के लिये सदा ही प्रबल आकर्षण रहा है, अब भी है। अनेक पहाड़ों में घूम-फिर कर भी मन सदा कांगड़ा की ओर उड़ जाने के लिये छटपटाता रहता है।

फरारी की उस अवस्था में कांगड़ा की प्राकृतिक शोभा मुझे कुछ भी संतोष न दे रही थी। मैं उसे देख ही न पा रहा था। प्रतिक्षण यही चिन्ता थी कि इस छोटी-सी बस्ती में ऐसे बहुत से लोग मुझे पहचानते हैं, जिन्हें मैं अपनी फरारी का कारण और उद्देश्य नहीं बता सकता। मेरा यहां बने रहना निरापद नहीं। कांगड़ा में अपने सम्बन्धी वकील साहब के घर में शरण लेना मेरे लिये ही आशंका का कारण न था बल्कि वकील साहब के लिये भी।

मेरे सामने एक ही मार्ग था कि किसी ऐसे बड़े नगर में जाकर टिकूं जहां हजारों-लाखों आदमी एक-दूसरे को जाने पहचाने बिना अपने-अपने काम-काज में लगे, आस-पास बने रहते हैं। ऐसी जगह जाकर अपने दल के शेष रह गये साथियों का पता लगाऊं और कुछ नये लोगों को अपने विचारों के प्रति आकर्षित करके अपने दल का साथी और सहायक बनाऊं। विदेशी सरकार पर चोट करने के लिये फिर हथियारों का संग्रह किया जाय। उस समय तक ऐसे एक ही नगर लाहौर से मैं परिचित था परन्तु वहां परिचितों की संख्या बहुत ही अधिक थी। लाहौर की पुलिस भी मुझे थोड़ा-बहुत पहचानती ही थी। मैंने जम्मू जाने का निश्चय किया।

जम्मू कांगड़ा की अपेक्षा उस समय भी बहुत बड़ा नगर था। सन् १९२६ २७ में दो अढ़ाई महान बना रह चुका था। फिरोजपुर में काग्रेस का काम करते समय और लाहौर के कालेज में पढ़ते हिन्दू सभा के दफ्तर में रहते समय कृष्णजी से खूब घनिष्टता हो चुकी थी। वे उन दिनों से नेशनल आनन्द स्वामी जन चुके थे। उन्होंने जम्मू में वेद और धर्म में राष्ट्रीय भावना से हिन्दू संगठन का एक केन्द्र बनाया था। उन्होंने इस केन्द्र में सहायता देने के लिये मुझे भी बुला लिया था। नेशनल कालेज में गर्मी की छुट्टियाँ थीं, इसलिये मैं जम्मू चला गया था।

स्वामी जी गीता का उपदेश देकर भीम अर्जुन और कर्ण के आदर्श नौजवानों के सामने रखते थे। मैं नौजवानों को लाठी गतका, फिरीआट, जुजुत्सू छुरा से लड़ने और आत्म रक्षा की तरकीबें सिखाता था और निजी तौर पर उन से स्वदेशी आन्दोलन और भारत में अंग्रेजी शासन के विरोधी लोगों की बात करता था। कुछ नौजवान मेरी बातों से और भी प्रभावित भी होने लगे थे। गर्मी की छुट्टी समाप्त होने पर कालेज की नौकरी के कारण वह सम्बन्ध छोड़ कर लौट गया था। अब पुराने सम्पर्कों से लाभ उठा सकने की इच्छा और आशा थी। वहाँ साधारणतः परिचितों की संख्या भी कम थी।

जम्मू में मेरे एक सम्बन्धी चिरकाल से रियासत की नौकरी में थे। उन्हीं के यहाँ पहुँचा। मेरे राजनैतिक दृष्टिकोण या विचारों में तो उन्हें क्या सहानुभूति होती परन्तु मेरे साहस के प्रति जरूर थी। उन्होंने घर में न रख कर अपनी फरारी की बात कह दी। वे डरे नहीं। उन्हीं के यहाँ ठहरा। फरारी का अनुभव नहीं था इसलिये आरम्भ में दिन में बाहर निकलने से डरता। अवसरवश उन की स्त्री और बाल बच्चे उस समय जम्मू से बाहर अपने सम्बन्धियों के यहाँ गये हुए थे। मैं दिन भर पड़ा कोई पुस्तक पढ़ा करता और रात में निकल कर पुराने साथियों से सम्पर्क स्थापित करने की चेष्टा करता।

जम्मू के पुराने साथियों में से केवल तीन चार से सम्पर्क स्थापित किया। इन में से एक थे मास्टर साहब दुबला पतला लम्बा शरीर सावला सा रंग। चौबीस वर्ष बीत चुके हैं नाम याद नहीं आ रहा। इन की मारफत एक नये साथी भागराम से परिचय हुआ। साथी भागराम और मेरा साथ बहुत दिन तक निभा। कई बार दोनों ने एक साथ जोखिम, भूखी और मौत का सामना साथ साथ किया। आखिर वह मुझ से पहले ही गिरफ्तार हो गया। परिचितों में जो काफी शिक्षित थे उन से प्राय सैद्धांतिक बातचीत करता रहता। अभिप्राय था कि एसे लोग अपने परिचय के क्षेत्र में विदेशी सरकार से मुक्ति के लिये संघर्ष और एक नया आर्थिक और राजनैतिक व्यवस्था के लिये इच्छा और यत्न की चेतना जगा सकें। इस प्रयोजन से कुछ पुस्तकों की भी

आवश्यकता हुई।

इन्द्रपाल तब लाहौर की पुरानी अनारकली में ही जमा हुआ था। अभी तक उस पर पुलिस के सन्देह का कोई कारण नहीं था। उसने लिखा कि प्रेमनगरी और हुगा भर्ती में कुछ पुरानी पुस्तकें मौजूद हैं। इन पुस्तकों में से एक पुस्तक पामदत्त की लिखी हुई माडर्न इण्डिया थी। यह पुस्तक उस समय सरकार द्वारा जब्त थी। माडर्न इण्डिया को मैंने बहुत ध्यान से पढ़ा। इस पुस्तक से मुझे अंग्रेजी शासन के शोषक रूप को समझने में विशेष सहायता मिली। दिन के समय घर में निष्क्रिय बैठा रहता था। मैंने 'माडर्न इण्डिया' का अनुवाद सरल हिन्दी में कर डाला। एक दो वर्ष बाद लाहौर के किसी प्रकाशक ने 'वर्तमान भारत' नाम से प्रकाशित कर दिया था परन्तु उस पर न मेरा नाम था, न पामदत्त का परन्तु उस से हमारे उद्देश्य में कुछ सहायता मिली ही होगी।

माडर्न इण्डिया का अनुवाद कर देने और परिचितों के सीमित क्षेत्र द्वारा विदेशी सरकार से संघर्ष की भावना का प्रचार आरम्भ कर देने से ही मैं संतुष्ट नहीं हो सका। इस विचार से कि रियासतों में ब्रिटिश भारत की अपेक्षा हथियारों पर रोक के कानून शिथिल हैं, यहां हथियार पा सकना सुविधाजनक होगा, परिचितों द्वारा हथियार खरीदने की चेष्टा भी आरम्भ की। हथियार मिले तो परन्तु प्रायः देशी बने हुए और पुराने ढंग के। उदाहरणतः गज से भरे जाने वाले या टोपी लगा कर चलाये जाने वाले पिस्तौल या रिवाल्वर। यह हमारे लिए बेकार थे। बम बनाने की धुन भी लगी हुई थी। लाहौर की बम-फैक्टरी में सुखदेव के साथ बम का मसाला बनाने का जो प्रयत्न किया था, उस का अनुभव याद था। मैं निरन्तर अनुमान कर रहा था कि मसाला बनाने में जो भयंकर धुआं और गन्ध उठती थी उसी के कारण पड़ोसियों को हम पर सन्देह हुआ होगा या हमारे रासायनिक पदार्थ खरीदने अथवा बम के खोल ढलवाने की जगह से ही हमारी फैक्टरी के सूत्र पुलिस को मिले होंगे।

अपनी पूरी बुद्धि, कल्पना और इस काम के अति सीमित अनुभव के आधार पर मैं बम बनाने का ऐसा तरीका सोच रहा था जिस से कोई सन्देह के कारण पैदा किये बिना, कोई बाहरी सहायता लिये बिना बम बनाया जा सके। बम बनाना और हथियार इकट्ठे करना ही मुझे उस समय क्रान्ति के लिये सब से प्रमुख और आवश्यक बात जान पड़ रही थी। इस क्रान्ति को आरम्भ करने का साधन अपने अन्य साथियों की भांति मेरी कल्पना में भी मुट्ठी भर सचेत साहसी और आत्मत्यागी नौजवान और शस्त्रास्त्र ही थे।

अनेक वर्ष बाद अर्थात् स्वयं जेल से मुक्त हो जाने के बाद कई दूसरे साथियों, आधुनिक क्रान्तिकारियों को भी क्रान्ति के उद्देश्य से फरारी की अवस्था में देखा

है। यह लोग क्रांति के लिये हथियार इकट्ठे करने और बम बनाने की बात नहीं सोचते थे और न मध्यम श्रेणी में क्रांति की भावना उत्पन्न कर देने से सन्तुष्ट थे। इन लोगों के लिए भी हम लोगों की भांति गिरफ्तारी का भय था। समाजवादी क्रांति में विश्वास रखने वाले कुछ मजदूर कार्यकर्ता भी परिवार छोड़ कर क्रांति को ही जीवन का लक्ष्य बनाये थे। भारद्वाज, सतसिंह मुगुट और निर्वानसिंह भी अनेक कार्यकर्ताओं को मैंने इसी अवस्था में देखा है। इन लोगों ने पुलिस पर कभी गोली नहीं चलाई। ये गिरफ्तारी का भय सिर पर होते हुये भी निर्द्वंद्व, साधारण भेष बदल, रात-दिन मजदूरों की बस्तियों में क्रांति के संगठन जमाते फिरते थे। हम लोगों ने भी, विशेष कर मैं हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र संघ की बात कह रहा हूं, अपना लक्ष्य तो समाजवादी क्रांति ही माना था परन्तु उस क्रांति का साधन मध्यम और निम्न-मध्यम वर्ग के गिने-चुने नौजवानों द्वारा क्रांति की विदेशी शासन-विरोधी चेतना जगाना ही समझा था। उसी के साधन स्वरूप मैं एक नये बम का आविष्कार करने और शस्त्र जुटाने की चेष्टा जम्मू में कर रहा था।

मेरी कल्पना में एक नये बम की योजना तैयार थी। जम्मू में इस प्रकार के कामों के सहयोगी साथी भागराम और मास्टर साहब ही थे। बम का निर्माण कर सकने के लिये विस्फोटक पदार्थों के सम्बन्ध में जो कुछ साहित्य मिल सका, वह पढ़ डाला था। अपनी योजना साथी भागराम और मास्टर साहब को समझायी। उन्हें भी विश्वास हो गया कि इस नये तरीके से, बिना विशेष जोखिम के आवश्यक संख्या में बम तैयार किये जा सकेंगे। मेरी उस कल्पना या योजना का तत्व समझने के लिये सेना में व्यवहार किये जाने वाले साधारण बम (हैन्ड ग्रेनेड) का कुछ परिचय आवश्यक है।

बम लोहे का एक अन्डाकार खोखला गोला होता है। इस गोले पर कुछ आड़े और खड़े कटाव बने रहते हैं। भीतर विस्फोटक पदार्थ भरा रहता है। बम के ऊपर तमंचे के ढंग का एक घोड़ा या खटका (स्ट्राइकर) लगा रहता है। बम के खोल के मुंह पर स्पर्श-मात्र से आग पकड़ लेने वाला कोई पदार्थ टोपी में भरा रहता है। बम गिरने पर घोड़ा बम के मुंह पर लगी विस्फोटक पदार्थ की टोपी पर चोट लगा कर चिंगारी पैदा कर देता है। यह आग तोड़े के सूत्र से खोल के भीतर भरे विस्फोटक पदार्थ में पहुंच जाती है। लोहे का गोला फट कर छोटे-छोटे टुकड़ों में छितरा जाता है और यह टुकड़े दूर-दूर तक सब ओर घातक मार करते हैं।

इस प्रक्रिया के आधार पर मैंने नये बम की आयोजना तैयार की थी। जम्मू रियासत में तोड़ेदार बन्दूकों पर कोई लाइसेंस न होने के कारण बारूद अनायास मिल सकता था। बारूद से कारतूस भर लेना कोई कठिन बात नहीं

है। शिकारी लोग प्राय कारतूस के खोलों को स्वय भर लेते हैं। विलायती कारतूसों पर निर्भर न करने के लिये हम लोगों ने आध इच व्यास की पीतल की नली लेकर एक-एक इच के टुकडे काट लिये। इन टुकडों का एक सिरा महीन छेद की हुई टिकिया से मूद कर कारतूस बना लेने का स्वतत्र उपाय भी कर लिया। ऐसे दो कारतूस बनाये गये। एक कारतूस को जगल में जाकर उसमें धाका लगा कर आजमा भी लिया। अगला कदम था, खोल तैयार करने का। उसके लिये मेरी तजवीज थी कि खोल 'प्लास्टर आफ पेरिस' का ढाल लिया जाय और उसमें शरीफे के दानों की तरह सब ओर कारतूस जड दिये जायें।

उपरोक्त बम के आविष्कार की सफलता में हम तीनों को पूरा विश्वास था परन्तु पर्याप्त सख्या में कारतूस बना सकने और दूसरे विस्फोटक पदार्थ खरीद कर नये बम का परीक्षण कर सकने योग्य सामान खरीदने के लिये दाम नहीं थे। दो कारतूस बनाने के लिये पीतल की नली बाजार में एक लोहार से ही कटवा ली थी और उसके एक सिरे पर टाका भी उसी से लगवा लिया था। ऐसे अधिक खोल दुकान में बनवाने पर लोहार को सदेह हो जाने की आशका थी। अपने आविष्कार के प्रति भरोसा कर मैंने बम के सम्बन्ध में सब काम स्वय ही कर सकने के लिये आवश्यक औजार खरीद लेने का निश्चय किया परन्तु पैसे की कमी के कारण इस योजना को तुरन्त व्यवहार में लाने की सुविधा नहीं थी।

पैसे की कमी के अतिरिक्त दूसरे साथियों से अलगाव भी मुझे खल रहा था। सुखदेव कुछ दूसरे साथियों सहित गिरफ्तार हो चुका था, जो शेष थे उन में से भगवती भाई को छोड कर कोई मुझ से अधिक जानने वाला न था। मुझे फरार हुये लगभग एक मास होने को आ रहा था। इस बीच में भगवती भाई के बारे में कुछ भी न जान सका था। मैं जानता था कि दिल्ली तथा युक्त-प्रात और देश के दूसरे भागों में हमारे दल का सगठन मौजूद था। लाहौर में समय-समय पर दिल्ली अथवा युक्त-प्रात से आये अनेक साथियों को सुखदेव के साथ देखा भी था परन्तु उनके वास्तविक नाम-धाम मालूम न थे, जो मालूम थे वे उपनाम या अस्थायी पते थे।

जम्मू में मिले पत्रों से मुझे यह मालूम हो गया था कि बहिन प्रेमवती घूघट निकाल सुखदेव के सम्बन्धियों के साथ जेल में जाकर उससे मिल आई है। मैंने इन्द्रपाल की मार्फत उन्हें सुखदेव से दल के कुछ सूत्रों का पता ले लेने के लिये लिखा।

इसी समय समाचार-पत्रों में पढा कि सुखदेव ने लाहौर जेल में अनशन व्रत कर दिया है। मेरे पत्र के उत्तर में, लाहौर से इन्द्रपाल ने भी उस समाचार का समर्थन किया और लिखा कि सुखदेव सात दिन से अनशन किये हुए है।

मुखदेव से मिलने जा रहा हूं यह बात दुर्गा भाभी को भी मालूम थी। उन्होंने वर्मी किसी दुस्साहस से बचने की सलाह किसी को नहीं दी। जेलों से घिरी रहने के कारण स्वयं मुख से मिलने न जा सका थी परन्तु सलाह दी कि जेल वालों को संदेह बचाने के लिये मैं सुशीला दीदी की मंझली छोटी बहिन शकुन्तला को मुखदेव की बहिन के रूप में साथ ले जाऊं।

शकुन्तला उस समय लाहौर के कालेज में पढ़ रही थी। एक डेढ़ बरस से भाभी के यहां ही थी। उनके घर की बार बार तलाशियों के कारण वह जब्त साहित्य छिपाने और पुलिस का सामना करने में खूब चतुर हो चुकी थी। स्वभाव से प्रायः चुपचाप भाभी के मकान में इकट्ठा हुई—क्रान्तिकारी बन्दियों के सम्बन्धियों की भीड़ के भोजन आदि का प्रबन्ध वही संभाले थी। मेरे फरार होने की अवस्था में मेरे साथ झूठमूठ सुखदेव की बहिन बन कर मुखदेव से मिलने के लिये जाने में उसके लिए भी कम जोखिम न थी परन्तु उन दिनों हम लोगों में भय और झिझक किसी को छू नहीं गयी थी।

मैं कालर टाई और सूट से दुरुस्त ऐनक पहने हुए (जो नम्बर ठीक न होने के कारण मुझे बार-बार उतार कर हाथ में लेनी पड़ती थी) शकुन्तला के साथ जेल पहुंचा। जेल के अधिकारियों को अपना परिचय इंगलैंड से ताजा लौटे लायलपुर के बैरिस्टर के रूप में दिया। जबान घुमा घुमा कर विलायत से आये नौजवान की तरह अंग्रेजी में जेलर से बहुत सौजन्य से बात की। कानून के प्रति अपना आदर प्रकट करने के लिये जेल में सिगरेट निकाल पहले पूछ लिया—यहां सिगरेट पीना नियम विरुद्ध तो नहीं है? और फिर कहा —

'अभियुक्त सुखदेव के ताऊ लाला अचिंतराम को यह समाचार पाकर बहुत दुख और चिन्ता हुई है कि उनका भतीजा एक हफ्ते से अनशन किये है। मैं उनकी ओर से अभियुक्त को यह समझाना चाहता हूं कि उसके ऐसे व्यवहार से उसके सम्बन्धी बहुत दुखी और नाराज हैं। यह समाचार सुन कर सुखदेव की मां भी अनशन करने पर तुली हुई है। यह अवस्था बहुत चिन्ताजनक है। इसके अतिरिक्त मैं अभियुक्त से उनकी सफाई के बारे में भी परामर्श करना चाहता हूं।

शकुन्तला अपने भाई की चिन्ताजनक अवस्था के प्रति दुख प्रकट करने के लिये आंसू बहाने लगी। वह लायलपुर से आई आयी देहातिन गृहस्थिन की सी पोशाक पहने वैसा ही व्यवहार भी कर रही थी। मैंने जेलर के सामने शकुन्तला को सम्बोधन किया— रोने से क्या फायदा? तुम अपने भाई को समझाओ कि यह मूर्खता छोड़े।

जेलर को विश्वास हो गया। सुखदेव को उसकी बाठड़ी से जेल के दफ्तर में बुलवाया गया। वह मैले से कपड़े पहिने था और अनशन के कारण बीमार जान पड़ रहा था।

सुखदव की ओर सकेत कर मैंन शकुन्तला स प्रश्न किया—'क्या यही तुम्हारा भाई है ?

शकुन्तला भाई क स्नेह म रो पडी ।

सुखदेव परिस्थिति समझ गया और अपरिचित की तरह मुझ म मरा परिचय पूछन लगा तो मैंन जलर की उपस्थिति म सुखदेव को उसकी मूर्खता के लिये फटकारा और कानून के महत्व और आदर की बात समझाई और उसक गिरफ्तार होन की परिस्थिति के बारे म प्रश्न किये और सहसा जलर की ओर घूम मुस्कराकर शका की— एस प्रश्नो का उत्तर अभियुक्त अपनी सफाई के विचार स सरकारी अफसर की उपस्थिति म कैस द सकता है ?

जेलर कुछ दूर हट गया । सुखदेव के और समीप होकर मै धीम स्वर म बात करने लगा । उनके बिना विरोध गिरफ्तार हो जान का कारण पूछा ।

सुखदेव न उत्तर दिया— जो होना था हो गया । सक्षेप म क्या बता सकता हू । समय आने पर पता लग ही जायगा ।'

मैंन सुखदेव को साथियो स अपना सम्बन्ध विच्छेद हो जाने की कठिनाई बताई और प्रभात (शिववर्मा) कालीचरण (कैलाशपति) ठाकुर भाई (महावीरसिंह) आदि स सम्बन्ध जोडन का सूत्र पूछा । मैं इन लोगो के वास्तविक नाम उस समय नही जानता था परन्तु लाहौर म दल के कार्यकर्ता के रूप म इन लोगो से परिचय हो चुका था । यह भी मालूम था कि य लोग पजाबी नहीं युक्त प्रात के है ।

भगवतीचरण का खोज लन का कोई सूत्र सुखदव को मालूम न था । यू० पी० दल के शष लोगो स सम्पर्क जोडन के लिये उस न मुझे सहारनपुर म प्रभात का पता द दिया । पजाब म पुन सम्पर्क स्थापित करन क लिये पडित जयचन्द्र जी विद्यालकार और लाला रामशरणदास जी स मिलन की सलाह दी । बातचीत क अत म मैंन सुखदव को फिर ऊचे स्वर म तुरन्त अनशन छोड दन की सलाह दी और वकालतनामे पर उस क हस्ताक्षर कराकर शकुन्तला को साथ लकर जल स लौट आया ।

फरारी की अवस्था म यह दुस्साहसपूर्ण काम करन की बात जो भी सुनता, मरे साहस और चतुराई की सराहना करन लगता था परन्तु मैं जानता हू कि आशका स मेरा हृदय धुक धुक कर रहा था । जल क फाटक क भीतर रहत समय तो यही आशका हो रही थी कि चूहदानी के भीतर चल जाना कठिन नहीं है निकल भी जाऊ तभी गनीमत है परन्तु दल स सम्पर्क जोडना अत्यन्त आवश्यक था और उसक लिय सुखदव स मिलन क सिवा कोई उपाय मुझे सूझ नहीं रहा था ।

× × ×

सहारनपुर बम-फैक्टरी

सुखदेव के बताये तीन सूत्रों में से एक सहारनपुर की लकड़मंडी में डाक्टर निगम की डाक्टरी की दूकान थी। सुखदेव ने बताया था कि यदि उसकी गिरफ्तारी के समाचार से मकान बदल न लिया गया होगा तो प्रभात वहां मिल जायगा।

दूसरा पता लाला रामशरणदास जी का था। रामशरणदास जी १९१४-१८ के अंग्रेजी सरकार विरोधी षडयन्त्र में लम्बी सजा काट कर दो एक वर्ष पूर्व ही काला पानी से लौटे थे। भगतसिंह और सुखदेव उन्हें अनुभवी मानकर उनकी मारफत पुराने क्रांतिकारियों से सम्बन्ध जोड़ने के लिये उन्हें घेरे रहते थे। रामशरणदास जी से मेरा अपना भी कुछ परिचय था ही। उस समय रामशरणदास जी अमृतसर में थे। भाग्य की बात, उसी सन्ध्या इन्द्रपाल की बैठक में ही मुझे उन की गिरफ्तारी का भी समाचार मिल गया।

सुखदेव ने तीसरा पता जयचन्द्र जी विद्यालंकार का दिया था। जयचन्द्र जी भी पुलिस की नज़रों में चढ़े हुये सन्दिग्ध थे। वे गिरफ्तार नहीं हुये थे। फरार न होकर अब भी खुलेआम 'ग्वालमंडी' में रह रहे थे। सन्दिग्ध होकर भी इनके गिरफ्तार न किये जाने का एक कारण यह भी हो सकता था कि पुलिस उन से मिलने-जुलने वाले व्यक्तियों की पहचान कर क्रान्तिकारियों के सूत्रों का पता लगाना चाहती हो। उनके मकान पर जाना उचित न था और उन्हें बुला भेजना वे अपने महत्व और प्रतिष्ठा के अनुकूल न समझते। भगवती भाई के विरुद्ध जयचन्द्र जी के षड्यन्त्र की याद ने भी उन से मिलने के लिये उत्साहित न किया। मैंने सहारनपुर जाकर प्रभात या शिव वर्मा से ही मिलने का निश्चय किया।

शिव वर्मा से लाहौर बम-फैक्टरी में परिचय हो चुका था। मैं उनके संयत व्यवहार और विचार से प्रभावित भी था। सब से बड़ा आकर्षण सुखदेव द्वारा दिलायी आशा थी कि शिव वर्मा की मार्फत आज़ाद से सम्पर्क हो सकेंगे।

ही आकस्मिक था जितना कि लाहौर की बम फैक्टरी पकड़ी जाने वाली रात मेरा फैक्टरी में न रहना। अब कतराते जाने के सिवा उपाय न था।

सहारनपुर की बम फैक्टरी का पकड़ा जाना हमारे दल के लिए बड़ी भारी चोट था। उस समय हि० स० प्र० स० का केन्द्र सहारनपुर में ही था।

अवसर की बात थी कि केन्द्र में उस समय अधिक आदमी मौजूद नहीं थे। आजाद का व्यक्तिगत परिचय और प्रभाव झाँसी और ग्वालियर में अधिक होने के कारण वे वहाँ ही रहते थे। उन दिनों हिसप्रस का फैलाव प्रायः उत्तर प्रदेश, दिल्ली और पंजाब में ही था। भौगोलिक दृष्टि से सहारनपुर आगरा की अपेक्षा अधिक सुविधाजनक तो था ही परन्तु आगरा से केन्द्र बदलने का एक और भी कारण हो गया था।

असम्बली धमकाण्ड से पहले भगतसिंह काम काज के सिलसिले में इलाहाबाद भी जाता रहता था। इलाहाबाद के स्थानीय नेता यतीन सन्याल ने भगतसिंह का परिचय ललित मोहन बनर्जी से भी करा दिया था। ललित दल के काम में दूसरे साथियों की शिथिलता की शिकायत कर काम को आगे बढ़ाने और फैलाने की उत्सुकता प्रकट करता रहता था। भगतसिंह ने उसे विशेष रूप से उत्साही और लगन का साथी समझा था।

ललित इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में एम० एस० सी० में पढ़ रहा था। जिस समय यतीन्द्र दास बम बनाने की शिक्षा देने के लिए कलकत्ता से आगरे आया था, दूसरे अनेक चतुर और महत्वपूर्ण साथियों के साथ भगतसिंह ने ललित को भी इस शिक्षा के लिए उपयोगी समझ आगरा बुलवा लिया था।

ललित ने आगरा आकर जब तीन मकानों में कई साथियों का जमघट, बम बनाने का विराट आयोजन और शस्त्रों का जमाव देखा तो उत्साहित होने के बजाय उसके हाथ पाँव फूल गये। उसने तुरन्त इलाहाबाद लौट जाना चाहा। उस की घबराहट और कायरता इतनी स्पष्ट थी कि इस की ओर आजाद, सुखदेव, शिव और यतीन्द्र कई साथियों का ध्यान गया। ऐसे आदमी को केन्द्र में बुला लेने की भगतसिंह की लापरवाही पर सब लोगों ने एतराज किया।

यतीन्द्र ने सावधान किया— इस आदमी की कायरता दल को ले डूबेगी। इसे इलाहाबाद न जाने देकर यहाँ ही यमुना किनारे किसी सुनसान जगह ले जाकर गोली मार यमुना में ही बहा देना चाहिये।

भगतसिंह ने यतीन्द्र की बात का विरोध किया। दूसरे साथियों को भी इतनी उग्रता उचित न जँची। ललित को इलाहाबाद लौट जाने दिया गया लेकिन इस बात पर सभी सहमत थे कि ललित के पहचाने स्थान को तुरन्त बदल देना चाहिये। यतीन्द्र की आशंका ठीक ही प्रमाणित हुई। ललित इलाहाबाद में गिरफ्तार होते ही, क्षमा मिल जाने की आशा से सरकारी

ही आकस्मिक था जितना कि लाहौर की बम फैक्टरी पकड़ी जाने वाली रात मेरा फैक्टरी में न रहना। अब कलकत्ते जाने के सिवा उपाय न था।

सहारनपुर की बम फैक्टरी का पकड़ा जाना हमारे दल के लिए बड़ी भारी चोट थी। उस समय हि० स० प्र० स० का केन्द्र सहारनपुर में ही था।

अवसर की बात थी कि केन्द्र में उस समय अधिक आदमी मौजूद नहीं थे। आजाद का व्यक्तिगत परिचय और प्रभाव झांसी और ग्वालियर में अधिक होने के कारण वे वहां ही रहते थे। उन दिनों हिमप्रस का फैलाव प्रायः उत्तर प्रदेश, देहली और पंजाब में ही था। भौगोलिक दृष्टि से सहारनपुर आगरा की अपेक्षा अधिक सुविधाजनक तो था ही परन्तु आगरा से केन्द्र बदल देने का एक और भी कारण हो गया था।

असेम्बली बमकांड से पहले भगतसिंह काम काज के सिलसिले में इलाहाबाद भी जाता रहता था। इलाहाबाद के स्थानीय नेता यतीन्द्र सान्याल ने भगतसिंह का परिचय ललितमोहन बनर्जी से करा दिया था। ललित दल के कार्य में दूसरे साथियों की शिथिलता की शिकायत कर काम को आगे बढ़ाने और फैलाने की उत्सुकता प्रकट करता रहता था। भगतसिंह ने उसे विशेष रूप से उत्साही और लगन का साथी समझा था।

ललित इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में एम० एस० सी० में पढ़ रहा था। जिस समय यतीन्द्र दास बम बनाने की शिक्षा देने के लिये कलकत्ते से आगरे आया था, दूसरे अनेक चतुर और महत्वपूर्ण साथियों के साथ भगतसिंह ने ललित को भी इस शिक्षा के लिए उपयोगी समझ आगरा बुलवा लिया था।

ललित ने आगरे आकर जब तीन मकानों में कई साथियों का जमघट, बम बनाने का विराट आयोजन और शस्त्रों का जमाव देखा तो उत्साहित होने के बजाए उसके हाथ पांव फूल गये। उस ने तुरन्त इलाहाबाद लौट जाना चाहा। उस की घबराहट और कपकपी इतनी स्पष्ट थी कि इस ओर आजाद, सुखदेव, शिव और यतीन्द्र कई साथियों का ध्यान गया। उस आदमी को केन्द्र में बुलाने की भगतसिंह की नादानी पर सब लोगों ने एतराज किया।

यतीन्द्र ने सावधान किया— इस आदमी की कायरता दल को ले डूबेगी। इसे इलाहाबाद न जाने देकर यहां ही यमुना किनारे किसी सुनसान जगह ले जाकर गोली मार यमुना में ही बहा देना चाहिये।

भगतसिंह ने यतीन्द्र की बात का विरोध किया। दूसरे साथियों को भी इतनी उग्रता उचित न जंची। ललित को इलाहाबाद लौट जाने दिया गया लेकिन इस बात पर सभी साथी सहमत थे कि ललित के पहचाने स्थान को तुरन्त बदल देना चाहिये। यतीन्द्र की आशंका ठीक ही प्रमाणित हुई। ललित इलाहाबाद में गिरफ्तार होते ही, क्षमा मिल जाने की आशा से सरकारी

गवाह बन गया।

दल के अनुशासन के अनुसार उस समय आगरा और दिल्ली के मकानों को बदल देना तो यों भी आवश्यक हो गया था क्योंकि भगत और दत्त जल्दी ही असेम्बली में बम फेंक कर गिरफ्तार होने वाले थे। नियमानुसार उनकी जानी हुई जगह बदल दी जानी चाहिये।

डाक्टर गयाप्रसाद को सहारनपुर में एक मकान किराये पर ले लेने का आदेश दिया जा चुका था परन्तु वे अभी सुविधाजनक जगह ले नहीं पाये थे। घटना की आशंका से आगरा का वह मकान जहां ललित गया था, तुरन्त छोड़ दिया गया। और वहां का सामान अस्थायी रूप से दिल्ली में, बाजार सीताराम के एक मकान में पहुंचा दिया गया था।

अवसरवश सीताराम बाजार के मकान को भी जल्दी ही बदल देना आवश्यक हो गया था। यहां किराये पर लिये हुये कमरे तिमंजिल पर थे। सब से नीचे की मंजिल पर रहने वाले लोग 'झापड़ मार देंगे' या 'उठा कर फेंक देंगे' की धमकी दिये बिना बात करना भी अपनी हेठी समझते थे। इनके इस व्यवहार के कारण ही बाजार में इनका दबदबा भी था। वे लोग अपने दबदबे के प्रदर्शन का किसी भी अवसर से चूकना नहीं चाहते थे। इन्हें 'गुरु' या 'उस्ताद' सम्बोधन किया जाता था और पीठ पीछे कुछ और।

एक दिन नीचे गली में दरवाजे के सामने साइकिल रख दी जाने के कारण इनसे जयदेव कपूर का झगड़ा हो गया। साधारणतः दल के लोग अपनी ओर किसी प्रकार से ध्यान आकर्षित न करने के लिये झगड़े फिसाद से बच कर, विनय से ही रहते थे। कहावत तो है कि 'ताली एक हाथ से नहीं बजती' परन्तु कभी निश्चल हाथ पर ही दूसरा हाथ इतने जोर से आ पड़ता है कि बचाने पर भी ताली बज ही जाती है। ऐसी ही बात यहां भी हो गयी और जगह बदलनी पड़ी। इतनी सी बात का कोई महत्व न होता पर हुआ क्या ? वह आगे पता चलेगा।

सहारनपुर में डाक्टर गयाप्रसाद ने दल के काम के बहुत अनुकूल एक मकान मुहल्ला 'चाहनकाशा या लकड़मण्डी' में किराये पर ले लिया था। मकान तो ले लिया परन्तु पैसे की कमी के कारण उसमें डाक्टर की बैठक और डिस्पेन्सरी का सरंजाम न जमा सके थे। इससे पूर्व डाक्टर फिरोजपुर में दल के लिये ऐसा बहुत अच्छा अड्डा रख चुके थे। वहां वे तुरन्त ही विश्वस्त और सम्मानित नागरिक बन कर कायस्थ बिरादरी के सेक्रेटरी भी हो गये थे।

गयाप्रसाद को होमियोपैथी, एलोपैथी और हकीमी की मिली-जुली प्रैक्टिस से निर्वाह लायक आमदनी भी होने लगी थी लेकिन सहारनपुर में पैसे की कमी के कारण जुगाड़ न जम सका था।

कर कानपुर तक का एक ही टिकट का दाम निकला। डाक्टर अपने किसी सम्बन्धी से रुपया लेने जाने के लिये कानपुर चले गये। शिव और कपूर के पास केवल दस आने रह गये थे। आशा थी डाक्टर १२ बजे रात या सुबह तक लौट आयेंगे। दो दिन तो चने चबेना से काटे जा सकते थे।

देहरादून के मकान का पता पुलिस को कैसे लगा, यह बात ध्यान देने योग्य है। सहारनपुर में शिव और कपूर को बहुत दिन तक यही डर लगा रहा कि साधन न होने के कारण डाक्टर की दुकान का पर्दा न बन सका और पुलिस भीतर की असलियत जान गई। लेकिन पुलिस में इतनी चातुरी कम ही देखी है। इससे पूर्व देहरादून के मकान से जानने वाले दो व्यक्ति गिरफ्तार हो चुके थे एक गुरुदेव और दूसरे फणीन्द्रनाथ घोष। गुरुदेव ने इस मकान का पता पुलिस को दिया होता तो यह मकान दो तीन सप्ताह पहले ही पकड़ा जाता। दूसरी बात वह मुख यहां जाने के लिये तैयार न था।

गुरुदेव ने बयान तो जरूर दिया था लेकिन कुछ दूसरे ढंग से। उस के बयान से कोई भी गिरफ्तारी नहीं हुई थी। गुरुदेव ने आगरा के उसी मकान का पता पुलिस को दिया था जिसे दल इस की गिरफ्तारी से पहले ही बदल चुका था।

फणीन्द्र घोष सहारनपुर का मकान पकड़ा जाने से दो तीन दिन पहले ही कलकत्ते में गिरफ्तार हुआ था और गिरफ्तार होते ही क्षमा की आशा में मुखबिर भी बन गया था।

फणीन्द्रनाथ घोष १९१४-१९१८ के क्रांतिकारी आन्दोलन में भी भाग ले चुका पुराना विश्वस्त क्रांतिकारी था। वह नजरबन्दी भी काट चुका था। हि० स० प्र० स० में भी उस का स्थान महत्वपूर्ण था। बिहार के संगठन का पूरा उत्तरदायित्व उसी पर था। काकोरी काण्ड के बाद दल के छिन्न भिन्न हो जाने पर संगठन फिर से जमाने में उस ने आजाद और भगतसिंह की बहुत सहायता दी थी परन्तु इस समय उस में कुछ शैथिल्य आ रहा था। इस का कारण उस के अपने मन का चोर ही था। हि०स०प्र०स० के नियमों के अनुसार दल में विवाहित लोगों के सम्मिलित होने की मनाही नहीं थी परन्तु दल के अविवाहित लोगों को विवाह करने में पहले दल की अनुमति ले लेना आवश्यक था। साधारणतः इस नियम का अधिक महत्व न था क्योंकि विवाह का प्रश्न उठता न था। दूसरी ओर इस नियम की ओर साथियों का ध्यान दिलाये बिना नियम भंग हो जाने पर कड़ाई दिखाई गई। परिणाम में दो तीन विकट घटनायें हो गईं। फणीन्द्र के सम्बन्ध में ऐसा अवसर भी न आया। अपने विवाह की बात वह साथियों से छिपाये था परन्तु अब जालिम से कतराने भी लगा। उन के जाने माने पुराने क्रांतिकारी होने के कारण असेम्बली बम काण्ड और लाहौर

उठा और उस ने डाक्टर के लिये दरवाजा खोल दिया। देखा तो पुलिस ! सिपाहियों ने उसे घेर लिया।

शिव डाक्टर के लिये दरवाजा खोलने आया था इसलिये खाट पर सिरहाने रखा पिस्तौल हाथ में न लिया था।

पुलिस ने प्रश्न किया—"आप ही डाक्टर है ?"

शिव ने इन्कार किया—"नहीं, मैं उन का रिश्तेदार हूं। बनारस हिन्दू-विश्वविद्यालय में पढ़ता हूं। गरमी की छुट्टी में एक मित्र के साथ मसूरी गया था। लौटते हुये यहां परसों आया हूं। डाक्टर साहब घर में किसी जरूरत के कारण कानपुर गये हैं।

शिव ने अनुमान किया, पुलिस सन्देह कर यहां आई है। चतुरता से बात-चीत करके यदि उन का सन्देह दूर कर दिया जाये तो लौट जायगी परन्तु पुलिस निश्चित जानकारी के आधार पर आयी थी। डिप्टी सुपरिन्टेंडेंट पुलिस मथुरादत्त जोशी, कोतवाल और पुलिस के सशस्त्र दस्ते के साथ स्वयं आया था। बरोठे से भी एक दरवाज़ा बैठक में था।

जोशी शिव को बैठक में ले गया। पूछा—"क्या पढ़ते हो ? बनारस में कौन-कौन प्रोफेसर है ?" तहकीकात करते हुये जोशी बैठक की आलमारियों में रखी पुस्तकों की पड़ताल करने लगा और कुछ पुस्तकों को जब्त साहित्य बता दिया। इसी समय भीतर से पुकार आई, "हजूर, इधर आइये, यहां बहुत कुछ है।"

कोतवाल आंगन और दूसरी कोठरियों की ओर चला गया था। कपूर अभी गाढ़ी नींद में सो ही रहा था। कोतवाल ने उसे हाथ पकड़ कर उठाया और तीन सिपाहियों के बीच एक ओर खड़ा कर दिया था।

जोशी कोतवाल की पुकार सुन कर शिव को साथ लिये भीतर की कोठड़ियों की ओर गया। आंगन में शिव ने कपूर को घिरा हुआ देखा।

भीतर के कमरे की आलमारियों में बम बनाने के रासायनिक वर्णन और सामान रखे हुये थे। एक सन्दूक में तैयार बम और छोटे बेग में दो पिस्तौल तथा कारतूस भी थे। जोशी शिव से इस सामान के सम्बन्ध में पूछताछ करने लगा। चतुरता से बात बना कर बच जाने की सम्भावना अब नहीं रही थी लेकिन चारों ओर से पुलिस से घिर जाने के कारण झपट कर हथियार उठा लेने का भी अवसर न था। बातचीत में ही ऐसा कोई अवसर आ सकता था। जोशी शिव से ही आलमारियां खुलवा कर पूछताछ कर रहा था—"यह क्या है, वह क्या है ?"

"मुझे क्या मालूम ! डाक्टर साहब का सामान है। वह हकीमी भी करते है। दवाइयां बनाने और कुश्ते फूंकने का सामान होगा।" शिव ने अनुमान

प्रकट किया। जोशी और शिव दोनों पैनरेबाजों से बात कर रहे थे।

एक बक्स की ओर संकेत करके जोशी ने शिव को हुक्म दिया—"उसे खोलिये ?"

'सब कुछ मैं ही खोलूँ ? तलाशी आप ले रहे हैं, आप स्वयं खोलिये !" शिव जरा अकड़ा।

'नहीं, आप को खोलना होगा।' जोशी ने जिद की।

'अच्छा ?' शिव ने बक्स का ढक्कन उठाकर भीतर हाथ डाल कर ललकारा, "अब मरो तुम सब ! यह बम है !" सन्दूक से एक बम निकाल कर उस ने ऊपर उठाया।

जोशी ने चिल्ला कर हुक्म दिया—'पकड़ो ! भागो !" और सब से आगे स्वयं ही भागा। दूसरे लोगों ने भी 'पकड़ने' के बजाय 'भागने' की ही आज्ञा का पालन किया।

शिव दूसरी ओर की आलमारी की तरफ लपका। भरा हुआ बम उस के हाथ आ गया था परन्तु आकस्मिक विस्फोट की दुर्घटना से बचाव के लिये बमों के तोड़े इस आलमारी में रखे हुये थे। वहीं दो पिस्तौल भी एक छोटे बैग में थे। शिव के इस आलमारी की ओर घूमने से उस की पीठ अपनी ओर होती देख कर कोतवाल लौट पड़ा और प्रत्युत्तर में ललकार कर बोला—"रेवोल्यूशनरियों को पकड़ने आये तो मौत का क्या डर ?"

कोतवाल ने झपट कर शिव को कमर से उठा कर फर्श पर पटक दिया और उस के दोनों कंधों को अपने घुटनों से दबा लिया। कोतवाल शरीर का तहीम शहीम, दिल और जाति से राजपूत था।

शिव का हाथ तोड़े या पिस्तौल तक न पहुँच पाया। सिपाही भी लौट पड़े। शिव की खूब पिटाई हुई और उस के दोनों हाथ पीठ के पीछे बाँध दिये गये। कपूर को भी हथकड़ी पहना दी गयी।

डिप्टी सुपरिन्टेंडेंट जोशी भय से चिल्लाता हुआ भाग कर मकान के बाहर पहुँच गया था। शत्रु के काबू कर लिये जाने की खबर पाकर पिस्तौल से धमकाता हुआ लौट आया। बदहवासी में आँगन में खड़े, पुलिस से घिरे कपूर को ही पिस्तौल दिखा कर धमकाने लगा—'बम को रखो नीचे ! नहीं तो अभी गोली मारता हूँ।"

नींद की बेखबरी में गिरफ्तार हो जाने और अप्रत्याशित हो-हल्ले में कपूर औसान खो बैठा होगा नहीं तो उस भगदड़ में कुछ न कुछ करने का यत्न करता परन्तु जोशी को स्वयं से भी अधिक घबराया देख कर उसे मजाक सूझा—'होश कीजिये जनाब, मेरे हाथ बंधे हुये नहीं दीखते ? देखिये, आपके पिस्तौल की नली कहाँ जा रही है !"

वास्तव में ही जोशी के हाथ हवा में हिलते पत्तों की तरह कांप रहे थे और पिस्तौल की नली जमीन की ओर थी।

इन लोगों के बांध-बूंध लिये जाने पर डिप्टी सुपरिन्टेंडेंट जोशी अभियुक्तों और सामान को कोतवाली पहुंचाने का हुक्म देकर इस घटना का वृत्तान्त डिप्टी कमिश्नर को स्वयं सुनाने के लिये उस के बंगले की ओर चला गया। उस के चले जाने के बाद कोतवाल पराजित शत्रु के प्रति राजपूती उदारता से बोला—"इतने पिस्तौल-कारतूस और बम होते हुए भी आप लोग बिना कुछ करे-धरे गिरफ्तार हो गये ? आप लोग चाहते तो हम सब को मार कर मजे में भाग जाते !"

"आप लोगों को मारने से हमें क्या मिलता ! हिन्दुस्तानियों का राज कायम करने के लिये तो हम लड़ रहे हैं। उन्हीं को मारने लगें ? गोरी चमड़ी वाले आते तो आप तमाशा देखते !" इस उत्तर के सिवा और हो ही क्या सकता था परन्तु यह उत्तर केवल सिपाहियों की व्यक्तिगत सहानुभूति के लिये बहका लेने का प्रयत्न ही नहीं समझ लिया जा सकता। हि० स० प्र० स० की भावना क्रान्ति को सर्वसाधारण के सहयोग पर उठाने की थी। निरन्तर उसी दृष्टि-कोण से सोचते रहने के कारण या उस विचार को बिलकुल जड़ता से अपना लेने के कारण कपूर और वर्मा शत्रु सरकार के हाथ-पांव (पुलिस) को भी सर्व-साधारण जनता का अंग और अपना देशवासी मान कर आक्रमण करने से चूक गये। यह कायरता नहीं, भावना को जड़ता से अपना लेना ही था।

सिपाहियों पर इस बात का असर भी हुआ—"अरे बाबू, हम लोगों का क्या, टुकड़खोर कुत्ते हैं। मर ही जाते तो क्या था ? यों भी हम जैसे सैंकड़ों रोज मरते हैं। आप लोगों की ही जिन्दगी की कीमत है जो दूसरों के लिये कुछ कर रहे हैं।" सिपाहियों ने उत्तर दिया और दो-तीन की तो सचमुच आंखें छलछला आयीं।

एक सिपाही खिन्न स्वर में बोला—"हम लोग क्या जानते थे कि आप लोग कौन हैं ? हमें तो कहा गया था—कोकीन फरोशों को पकड़ने जा रहे हैं।"

दोनों ओर की बातों में कितनी सचाई थी, वह जाने दीजिए परन्तु शिव और कपूर के संयत व्यवहार से कोतवाल और सिपाहियों को इन के खानदानी, शरीफ और ईमानदार होने में सन्देह न रहा। बाद में वे इन्हें सभी प्रकार की कानूनी सुविधा देते रहे। कोतवाल तो प्रायः देश के लिये इन के त्याग की प्रशंसा और अपनी गद्दारी के प्रति ग्लानि भी प्रकट करता रहता। अपनी स्पष्ट-वादिता में कोतवाल ने अपने इस व्यवहार का रहस्य भी प्रकट कर दिया। शिव को गिरफ्तार किया था कोतवाल ने अपनी जान पर खेल कर। उसे इस बहादुरी के लिये बहुत प्रशंसा और पदोन्नति की आशा थी लेकिन डिप्टी

सुपरिन्टेंडेंट जोशी ने कलक्टर को दी रिपोर्ट में बहादुरी और चतुरता का सब श्रेय स्वयं ही समेट लिया। कालवाल को जब न माया मिली न राम तो वह विदेशी सरकार के टुकड़ाखोर कुत्ते बनने की ग्लानि और भी अधिक अनुभव करने लगा या बसी बात करने लगा।

डाक्टर गयाप्रसाद रुपये के लिये सभी सम्भव उपाय करके तीन दिन बाद खाली हाथ ही लौटे। यदि अखबार पढ़ लिया होता तो उन्हें सहारनपुर लौटना ही न चाहिये था। साधारणतः फरार क्रान्तिकारी दल के भिन्न-भिन्न भागों में होने वाली घटनाओं के प्रति चौकस रहने के लिये सुबह ही अखबार पढ़ लेते थे। डाक्टर ने रास्ते में अखबार नहीं पढ़ा। पढ़ा इसलिये नहीं कि कानपुर से लौटने भर का किराया भी मुश्किल से मिला था। सोचा कि सहारनपुर में तो अखबार खरीदा ही गया होगा, पहुँच कर पढ़ लेंगे। सहारनपुर के स्टेशन पर ही पुलिस उन की प्रतीक्षा में चौकस थी परन्तु डाक्टर अपनी स्वाभाविक शान्त और निश्चिन्त मुद्रा के कारण भीड़ में उलझ कर मकान तक निरापद पहुँच गये।

डाक्टर की प्रतीक्षा में पुलिस के सिपाही मकान के भीतर ही ठहरा दिये गये थे। किवाड़ खटखटाने पर उन में से एक ने दरवाजा खोला और झपट कर गयाप्रसाद को कड़े आलिंगन में बाँध लिया। सिपाही का गला डाक्टर के गले से सट कर, चेहरे एक दूसरे के कंधे पर नजर से बाहर हो गये थे। डाक्टर ने भी उसे उतने ही गहरे आलिंगन में कस लिया। दोनों ही स्नेह प्रदर्शन की होड़ में आलिंगन का जोर एक दूसरे से अधिक बढ़ाये जा रहे थे। आखिर इस प्रेम से ऊब कर गयाप्रसाद बोले—"बस-बस, बहुत हो गया, यार अब छोड़ो! बात भी तो सुनो?"

दल के लोगों में काशीराम को भी ऐसा ही गूढ़ आलिंगन करने की आदत थी। वह बहुत समय से डाक्टर से मिला न था। दिल्ली से काशी के आने की प्रतीक्षा भी थी। गूढ़ आलिंगन में बँध कर और चेहरा न देख पाकर डाक्टर ने अनुमान कर लिया था कि उन की अनुपस्थिति में काशीराम आ गया है और प्रेमविह्वल हो रहा है।

डाक्टर को आलिंगन में बाँधने वाले ने, बात सुनने की नसीहत के उत्तर में अपने साथियों को पुकारा—"दौड़ो, दौड़ो! तीसरा भी आ गया!"

गयाप्रसाद जब तक परिस्थिति समझें, भीतर से तीन और सिपाहियों ने आकर उन्हें धर दबाया और हाथों में हथकड़ियाँ पहना दीं।

कालवाली की ओर ले जाये जाते समय डाक्टर को अपनी जेब का ख्याल आया। कानपुर से लौटते समय वह लखनऊ होकर आये थे। उस समय काकोरी-षडयंत्र के बन्दी जोगेश चैटर्जी के सन्देश, काकोरी षडयंत्र के वकील श्री चन्द्रभानु

गुप्त और मोहनलाल जी सक्सेना की मार्फत आते जाते थे। गयाप्रसाद की जेब में इसी सम्बन्ध के कागज थे जिनमें चन्द्रभानु गुप्त और मोहनलाल सक्सेना के नाम भी थे। यह नाम बहुत जाने-पहचाने हैं। यही चन्द्रभानु गुप्त (सी० बी० गुप्ता) आजकल उत्तर प्रदेश की सरकार के मंत्री हैं। मोहनलाल सक्सेना केन्द्रीय सरकार में शरणार्थियों के पुनर्वास विभाग के मंत्री रह चुके हैं।

डाक्टर को अपनी जेब के कागजों की याद आयी और खयाल आया कि यह कागज पुलिस के हाथ पड़ जाने से क्रान्तिकारियों से सहानुभूति रखने वाले कांग्रेसी वकील संकट में पड़ जायेंगे। वे चलते चलते थम गये— "हम पेशाब करना चाहते हैं।"

"कोतवाली पहुंच कर लेना।" सिपाहियों ने उत्तर दिया।

"जब हमें हाजत होगी तब करेंगे या जब तुम्हें होगी?" डाक्टर सड़क पर अड़ गये।

सिपाहियों ने मजबूर होकर उन के एक हाथ से हथकड़ी निकाल दी और हथकड़ी की रस्सी थाम खड़े हो गये। सड़क किनारे बैठते ही गयाप्रसाद ने खुला हाथ भीतर की जेब में डाल वह कागज निकाल कर मुंह में भर लिये और जैसे तैसे चबा कर निगल लेना चाहा। कागज गले में अड़ गये। उन का दम घुट कर आंखें बाहर निकलने लगीं। मुंह से शब्द निकालना कठिन हो गया। वे सड़क पर बैठ गये और अंजली से पानी के लिये संकेत किया। सिपाही डाक्टर के कष्ट का कारण तो न समझे पर एक सिपाही समीप की दुकान से पानी ले आया। जल का घूंट भर कर डाक्टर ने गला साफ किया और प्राण बचे।

श्री चन्द्रभानु गुप्त और मोहनलाल सक्सेना जैसे प्रसिद्ध व्यक्तियों को फंसा सकने वाले कागजों को गयाप्रसाद ने इस तरह प्राणों पर संकट झेल कर निगल लिया, यह बहुत समझदारी का काम था। उन दिनों लाहौर बम फैक्टरी में तथा इधर-उधर गिरफ्तार होने वाले दल के कुछ सदस्यों द्वारा पुलिस के भय से दल और दल से सहानुभूति रखने वालों के भेद खोल देने के कारण क्रान्तिकारियों के प्रति जनता का विश्वास और आदर घट रहा था। क्रान्तिकारियों की असावधानी के कारण कांग्रेस के प्रसिद्ध व्यक्तियों के संकट में फंस जाने से तो दल की बदनामी की आंधी आ जाती। जनता क्रान्तिकारियों से तो वीरता, साहस और दृढ़ता की आशा रखती थी परन्तु अपने लिये भीरुता को स्वाभाविक सतर्कता समझती थी।

जब क्रान्तिकारी पुलिस को मारपीट कर भाग निकलते या पकड़े जाने पर यंत्रणा सह कर भी भेद खोले बिना फांसी और जेल भुगत लेते तो क्रान्तिकारियों को गांधी जी द्वारा हिंसक और सहायता के अयोग्य बताने पर भी जनता किसी कदर उदारता से सहायता देती रहती थी। किसी क्रान्तिकारी के गिरफ्तार

डाक्टर भेद खोल देने पर फरार मन्त्रियो की जमानत से ऐसा व्यवहार मिलने लगता था। साधारण भी सहायता या अनुरोध करने पर उत्तर मिलता—तुम लोगों का सहायता देना अपने गले फांसी म फंस लेना है। तुम म से कोई गिरफ्तार होकर इतना भी कह देगा कि हमने तुम्हें प्यास में एक गिलास पानी पिला दिया था तो हमारी मौत के लिये यह काफी है। ऐसी अवस्था में डाक्टर के कागज निगरानी का महत्व कम न था।

उपरोक्त घटना गयाप्रसाद के स्वभाव और व्यवहार का बहुत अच्छा नमूना भी है। बिना हाहल्ला और वहम किये अपने विचार में उचित काम किये जाना उनके किये जाने पर मौन साधना। बात करने म तो जान पड़ता है डाक्टर बड़ा कठिनाई से पाठ किया पा रहे है। चलते हैं तो जैसे थकावट के कारण अनिच्छा से कदम उठा रहे हो परन्तु बिना रुके चलते जायेंगे सफर चाहे जितना लम्बा हो।

जनता द्वारा अहिंसा की आड में भीरु व्यवहार और साथ ही दूसरे प्रकार के उदाहरण भी देखने में आते थे। पुलिस सहारनपुर बम फैक्टरी के साथ साण्डर्स-वध, असेम्बली बमकाण्ड और लाहौर बम फैक्टरी का सम्बन्ध जोड़ने के लिये प्रमाण जुटा रही थी। दल मीनाराम बाजार का मकान तो छोड़ चुका था परन्तु मुखबिर जयगोपाल और हंसराज वोहरा ने उस मकान का पता बता दिया था। पुलिस इस मकान के नीचे रहने वाले 'गुरु' लोगों को ले जाकर जगह जगह से गिरफ्तार क्रान्तिकारियों को दिखाकर पूछती थी— क्या यह लोग तुम्हारे मकान के ऊपर वाले अड्डे म कभी आते जाते थे ?'

उन लोगों को सहारनपुर में लाकर डाक्टर, शिव और कपूर को दिखा कर वही प्रश्न पूछा गया। आँखों ही आँखों में 'गुरु' लोगों ने शिव कपूर को और डाक्टर को पहचाना परन्तु गुरु लोग पहचानने से इनकार कर गये। बाद में उन लोगों ने किसी सिपाही की मार्फत शिव और कपूर को सन्देश भी भिजवाया— दिनों म आप लोगो की असलियत न जानने के कारण आपकी कद्र नही की। भरोसा रखिये हम लोगों की जात से आपको कोई नुकसान न पहुंचेगा बल्कि हम लोगों के लायक कोई खिदमत हो तो बिना तकल्लुफ हुक्म कीजियेगा।

सहारनपुर लकड़मण्डी में डाक्टर की दुकान के पड़ोस में रहने वाले निम्न स्थिति के कई लोगों को भी इन्हें पहचानने के लिये लाया गया। कपूर अपने बयान पर डटा हुआ था कि वह इस घर के सामान और मामले की बाबत कुछ नहीं जानता। अपने मित्र के साथ एक दिन पहले ही वहां आया था। पुलिस उस पड़ोसियों से पहचनवाकर सिद्ध करना चाहती थी कि कपूर यहां ही रहता रहा है और उसका मकान तथा मकान के सामान से सम्बन्ध है। इस समय तक इन लोगों के क्रान्तिकारी होने की बात फैल चुकी थी और लकड़मंडी के

पडोसी अधिकांश लोगों ने इन्हें पहचानने से इन्कार कर दिया।

इस प्रकरण में यह भी अप्रासंगिक न होगा कि श्री चन्द्रभानु गुप्त और श्री मोहनलाल सक्सेना जेल में बन्द क्रान्तिकारियों के गुप्त और जोखिम भरे सन्देश ले कैसे आते थे। अंग्रेज सरकार अपने न्याय की प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिये हवालात में बन्द अभियुक्तों का यह अधिकार स्वीकार करती थी कि अभियुक्त अपनी सफाई के बारे में अपने वकीलों से गुप्त परामर्श कर सकते हैं। लाहौर के क्रान्तिकारी अभियुक्त जेल और पुलिस के अफसरों की देखरेख में परन्तु वकीलों से अपनी बातचीत पुलिस द्वारा सुनी न जा सकने की दूरी पर वकीलों से परामर्श कर सकते थे। लाहौर षड्यंत्र के मामले में भी ऐसा ही नियम था।

अदालती न्याय की दृष्टि से अभियुक्तों के इस अधिकार का महत्व भी है। यदि अभियोग लगाने वाली पुलिस यह जान जाय कि अभियोग के विरुद्ध क्या सफाई या गवाही दी जा सकती है तो इस सफाई और गवाही का काट भी पुलिस तैयार कर सकेगी और अभियुक्त कभी कानूनी सफाई नहीं दे सकेगा। इसी अधिकार के आधार पर चन्द्रभानु गुप्त और मोहनलाल सक्सेना हमारे अभियुक्तों के गुप्त संदेश उनके क्रान्तिकारी साथियों तक पहुंचा सकते थे।

गुप्त सन्देश आने जाने का सन्देह पुलिस करती थी और पुलिस ने कई बार *अभियुक्तों के इस अधिकार पर रोक लगाना चाही थी। ऐसी अवस्था में क्रान्ति*कारी अभियुक्तों और उनके कांग्रेसी वकीलों ने प्रबल विरोध किया था। अंग्रेजी सरकार अपने न्याय की स्वयं इतनी प्रतिष्ठा करती थी कि सन्देह के बावजूद उन्होंने अभियुक्तों का यह अधिकार न छीना। कांग्रेसी सरकार के रामराज्य में अभियुक्तों का आत्मरक्षा का यह अधिकार भी गांधीवाद अहिंसा की लपट में आ चुका है।

फरवरी १९४९ में देशव्यापी रेल हड़ताल का षड्यंत्र करने के लिये कांग्रेसी सरकारों ने देश भर में मजदूर और कम्युनिस्ट कार्यकर्ताओं को समेट कर जेलों में डाल दिया था। मैं कम्युनिस्ट पार्टी का मेम्बर या किसी भी मजदूर संगठन का सदस्य न होने पर भी इस लपट में आकर लखनऊ जिला जेल में बन्द हो गया था। कुछ कम्युनिस्ट और मजदूर साथियों ने गोलमोल अभियोगों के आधार पर गिरफ्तार कर लिये जाने के विरुद्ध अदालती कार्रवाई करनी चाही। उन्होंने अपने वकीलों को मुलाकात के लिये जेल में बुलाया। वकीलों को मुलाकात का अवसर बड़ी कठिनाई से मिला। खुफिया पुलिस के अफसरों का आग्रह था कि वे अभियुक्तों और वकीलों की बातचीत का प्रत्येक शब्द सुनना चाहते हैं। इस अन्याय के विरोध में अभियुक्तों और वकीलों ने मुलाकात करने से ही इनकार कर दिया।

हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र सेना की सहारनपुर बम फैक्टरी में गिरफ्तार साथी
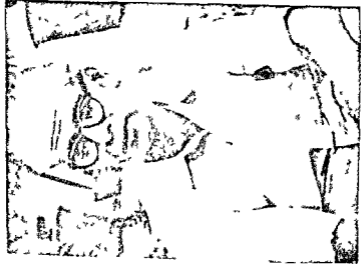
शिव वर्मा
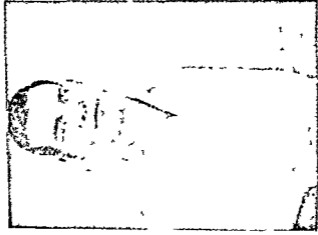
जयदेव कपूर

एक साहित्यिक के नाते मेरी गिरफ्तारी का विरोध बहुत से पत्र-पत्रिकाओं और प्रभावशाली कांग्रेसी लोगों ने किया। मेरा स्वास्थ्य भी खराब था। मुझे नाम-मात्र की जमानत और सार्वजनिक भाषण और लेखन से दूर रहने की शर्त पर छूट जाने का अवसर दिया गया। मैंने रिहाई की यह शर्त स्वीकार न की। कुछ ही दिन पूर्व शहीद रुद्रदत्त भारद्वाज के बीमारी की हालत मे गिरफ्तार होकर अगले ही दिन जेल मे मृत्यु हो जाने की घटना ताजी थी। तब इस घटना के कारण जनता में कांग्रेसी सरकार की आलोचना भी बहुत हुयी। शर्त अस्वीकार कर देने पर भी मुझे स्वास्थ्य के विचार से छोड दिया गया।

जेल से छूटने पर मैं उत्तर प्रदेश के तत्कालीन पुलिस मंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री से मिला और जेल म बन्द अभियुक्तों के, अपने वकीलों से पुलिस के सुन सके बिना बातचीत करने के अधिकार छीन लिये जाने के अन्याय की शिकायत की।

शास्त्री जी से भेंट करने गया तो वे चर्खा कात रहे थे। उन्होंने अपनी नजर तक्ले से निकलते हुए सूत पर लगाये उत्तर दिया—"आप नहीं जानते इन कम्युनिस्टों को। यह लोग बडे धूर्त होते है। हिंसा मे विश्वास रखते हैं। इन्हें गिरफ्तार करने का यत्न किया जाता है तो फरार होकर छिप जाते हैं।"

शास्त्री जी को याद दिलाया कि सन १९३१ मे अंग्रेज सरकार द्वारा कांग्रेस के गैरकानूनी घोषित कर दिये जाने पर और १९४२ म भी अहिंसावादी कांग्रेसी फरार होकर अपना राजनैतिक काम कर रहे थे। कम्युनिस्टों को आप प्रकट आन्दोलन चलाने ही नहीं दे तो वे गुप्त आन्दोलन चलाने के लिये मजबूर हैं। मुझे शास्त्री जी की खिसियाहट वैसी ही जान पडी जैसे कुत्ता अपनी झपट से भाग गयी बिल्ली पर खौंखिया रहा हो।

शास्त्री जी से आग्रह किया कि यह अभियुक्तों का कानूनी अधिकार है कि वह अपने वकील से गुप्त परामर्श कर सकें। अंग्रेज सरकार क्रान्तिकारियों को कम धूर्त और हिंसक नही समझती थी परन्तु उन्होंने क्रान्तिकारी अभियुक्तों का यह कानूनी अधिकार कभी नही छीना था।

शास्त्री जी ने हा-हूं कर अधिकार की बात तो स्वीकार की। इस बात की ओर ध्यान देने का विश्वास भी दिलाया परन्तु बाद में भी उन के आश्वासन का कुछ असर न हुआ। ऐसी घटनाओं से जनता कांग्रेसी 'रामराज्य' की नैतिकता और अंग्रेजो के 'रावण राज्य' की नैतिकता की तुलना करके खिन्न हुये बिना नहीं रह सकती।

परिस्थितियों के आधार पर आज़ाद और दल के साथियों का निश्चय था कि अनेक साथियों की गिरफ्तारी और सहारनपुर म बम-फैक्टरी की पकड़ के

लिए पुलिस को सुराग फणीन्द्र घोष ने ही दिए थे। फणीन्द्र ने केवल लाहौर षड्यन्त्र के मामले में ही सरकार की ओर से गवाही नहीं दी थी, उसने पटना षड्यन्त्र में भी सरकारी गवाह के रूप में बयान दिया था।

यह कहा है कि १९२९ में जनगाय जेल में और १९३० में इलाहाबाद में भी फणीन्द्र को दण्ड देने के असफल प्रयत्न किये जा चुके थे। इन असफलताओं के बावजूद बिहार के क्रान्तिकारी साथी फणीन्द्र का अपराध भूले नहीं थे।

सम्भवतः १९३२ के अन्त या १९३३ के आरम्भ में हजारीबाग जेल में बन्द योगेन्द्र शुक्ल आदि क्रान्तिकारियों ने फणीन्द्र को पुनः दंड देने के लिए प्रयत्न का निश्चय किया और जेल से बाहर एक क्रान्तिकारी साथी बैकुंठ शुक्ल को इस कार्य का उत्तरदायित्व सौंप दिया।

क्रान्तिकारी साथियों के प्रति विश्वासघात करने के पश्चात् फणीन्द्र ने प्रतिकार की आशंका से पटना या भागलपुर रहना छोड़ दिया था। उसने जिला चम्पारन के एक छोटे से कस्बे बेतिया में निर्वाह के लिए एक परचून की दुकान खोल ली थी। यहाँ भी वह सर्वथा निश्शंक न रहता था। उसने आत्मरक्षा के लिए रिवाल्वर का लाइसेंस ले लिया था। वह सदा रिवाल्वर साथ रखता था। सरकार की ओर से भी दो सिपाही उसकी रक्षा के लिए उसकी दुकान और मकान पर तैनात रहते थे।

घटना १९३३ के मार्च या अप्रैल की है। बैकुंठ शुक्ल एक साथी के साथ फणीन्द्र की परचून की दुकान पर पहुँचा। उन लोगों ने दुकान के सामने एक बहुत जबरदस्त पटाखा चला दिया। विस्फोट का शब्द बहुत भयानक था। उस शब्द को बम विस्फोट समझ कर फणीन्द्र के रक्षक दोनों सिपाही भाग गये। बैकुंठ शुक्ल और उसका साथी फणीन्द्र की दुकान पर चढ़ गये। उन लोगों ने भुजालों से फणीन्द्र के सिर पर वार किया। चोट गहरी बैठी। फणीन्द्र फर्श पर गिर पड़ा। बैकुंठ शुक्ल और उसका साथी दुकान से उतर रहे थे तो एक व्यक्ति उन्हें पकड़ने के लिए आगे बढ़ आया। दोनों ने ही उस व्यक्ति को बीच में पड़ने से रोका परन्तु वह पीछे न हटा और भुजालों के वार से कट कर वहीं गिर पड़ा। बैकुंठ शुक्ल और उसका साथी रक्त टपकती भुजालियाँ लिये साइकिलों पर बाजार में सब लोगों के सामने से निकल गये। उस समय उन्हें किसी ने रोकने का साहस न किया।

भुजाली के वार से तुरन्त ही फणीन्द्र की मृत्यु नहीं हो गयी थी। हस्पताल पहुँचाये जाने के बाद भी वह डेढ़ दो घंटे होश में था और कुछ बोल भी सकता था। पुलिस के प्रश्न पर उसने स्वीकार किया कि आक्रमणकारियों को पहचानता था परन्तु उनके नाम धाम पूछे जाने पर बताने से इन्कार कर दिया— बस, कोई लाभ नहीं! नहीं कहा जा सकता कि यह इन्कार अपने विश्वासघात का

ग्लानि के कारण या यह आशंका कि प्रतिकार की शृंखला कहा तक बढ़ती जायगी।

कुछ मास बाद किसी व्यक्ति से प्राप्त सूचना के आधार पर बैकुंठ शुक्ल गिरफ्तार कर लिया गया। मई १९३४ में उसे गया जेल में फासी दे दी गयी। बैकुंठ शुक्ल किस व्यक्ति द्वारा दी गयी सूचना के आधार पर गिरफ्तार किया गया, इस सम्बन्ध में क्रान्तिकारी आन्दोलन में सम्बद्ध बिहार के लोगों का ख्याल है कि वह मुखबिर आजकल कांग्रेस में दूसरी कोटि का नेता बन कर स्वार्थ सिद्ध कर रहा है और बैकुंठ शुक्ल के परिवार के लोग विकट आर्थिक कठिनाई झेल रहे है।

सहारनपुर की बम फैक्टरी पकड़ ली जाने का परिणाम मेरे निज व्यक्तिगत रूप में यह हुआ कि दल के मूल संगठन से सम्बन्ध की आशा टूट गयी। अब कलकत्ते जाकर भगवती भाई को ढूंढने के सिवा और राह नहीं थी।

× × ×

कलकत्ता और बम का असफल आविष्कार

उस समय तक कलकत्ते से मेरा परिचय हिन्दी में अनुवादित बंगाली उपन्यासों में वर्णित पात्रों, स्थलों और 'रौलट कमेटी' की रिपोर्ट में दी गयी क्रान्तिकारी घटनाओं तक ही सीमित था। इस महानगरी में केवल एक व्यक्ति से भगवती भाई का सूत्र पा सकने की आशा थी। वह थी, सुशीला दीदी।

दुर्गा भाभी से मालूम हो गया था कि कलकत्ता के सेन्ट्रल एवेन्यू में एक करोड़पती सेठ छाजूराम की हवेली थी। सुशीला दीदी इन्हीं सेठ की कुमारी बेटा की अध्यापिका थी और उन्हीं की हवेली के एक कमरे में रहती भी थी। लाहौर से कलकत्ते तक रास्ते में दो बार टिकट खरीदा। प्रयोजन था इतनी लम्बी यात्रा करने वाले टिकट की ओर ध्यान आकर्षित न हो। साथ सामान कुछ भी न था। एक छोटे से बैग में लाहौर स्टेशन जाते समय पहना अच्छा सूट साथ ले लिया था। सेठ के मकान पर जाने से पहिले स्टेशन पर ही वेटिंगरूम में कपड़े बदल लिये और सेठ जी के मकान पर सम्मानित वेश-भूषा में पहुंचा।

अप्रत्याशित रूप से मुझे अपने सामने खड़ा देखकर सुशीला दीदी को उत्साह और चिन्ता दोनों ही हुए। उत्साह इसलिये कि लाहौर की बम फैक्टरी पर पुलिस के धावे में सुखदेव और दूसरे साथियों के गिरफ्तार हो जाने और सहारनपुर में भी दल की बम फैक्टरी पकड़ ली जाने के बाद उन्हें दल के नष्ट-भ्रष्ट हो जाने की आशंका हुई थी। कलकत्ते में भी यतीन्द्रनाथ दास, फणीन्द्रनाथ घोष आदि दल के कई लोग गिरफ्तार हो चुके थे। सब ओर आतंक और निरुत्साह छाया हुआ था। दल के प्रति और दल के विशेष लोगों के प्रति सुशीला दीदी की सहानुभूति का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि लाहौर में साण्डर्स को गोली मार कर भागने के बाद भगतसिंह को दीदी ने कलकत्ता में निःशंक अपने यहां शरण दी थी। मुझे देखकर उन्हें आश्वासन हो गया था कि दल बिलकुल ही समाप्त नहीं हो गया है।

मुझ अपने यहा आ पहुचा न्ख कर चिन्ता का कारण भी स्पष्ट था कि मैं पूर्व सूचना या प्रबन्ध का अवसर लिए बिना फरारी की अवस्था म उन क यहा आ धमका था। सेठ के परिवार के लोगो को मेरा क्या परिचय देती! दादी को इस बात म भी उत्साह हुआ कि गिरफ्तारी का भय होन पर भी मैं केवल छिपन की ही बात नहीं सोच रहा था बल्कि भगवती भाई को ढूढ कर काम म सहयोग देना चाहता था।

मेरे आने से सुशीला दीदी का सान्त्वना मिलने का एक और भी कारण था—लाहौर बम फक्टरी पकडी जाने के बाद एक मास बीत चुका था। यह बात फल चुकी थी कि बम फक्टरी का मकान भगवती भाई के नाम से किराये पर लिया गया था। जयचन्द्र जी भगवतीचरण के विरुद्ध अपने प्रचार म इस घटना को भगवतीचरण के सी० आई० डी० का आदमी होन का प्रमाण बता रहे थे। सुशीला दादी को भगवती भाई के प्रति दल के साथी के रूप में ही नहीं बल्कि व्यक्तिगत आदर भी था। वे उन्हे भाई मानती थी और प्रतिवर्ष राखी बाधती थी। भगवती भाई भी सुशीला दादी को एक अति असाधारण व्यक्ति समझते थे। भगवती भाई के प्रति मेरा दृढ़ विश्वास देख कर भी दीदी को भरोसा हुआ।

सुशीला जी से मालूम हुआ कि भगवती भाई थे तो कलकत्ता म ही परन्तु उन्हें सहसा खोज कर मिल लेना सम्भव नहीं था। उन का स्थान सुशीला जी को भी मालूम नहीं था। मालूम होने का कुछ लाभ भी न था। भगवती भाई अति निम्न श्रेणी के एक बस्ती म रहते थे। ऐसी जगह सुशीला दादी जैसी गोरी चिट्टी सम्भ्रान्त स्वरूपा और सम्मानित वेश भूषा की महिला का पहुचना सन्देह का ही कारण होता।

भगवती भाई तीसरे या चौथे दिन मदान म या चौरगी पर दादी से मिल लेते थे। सुशीला जी से मालूम हुआ कि भगवती भाई दल का काम करने के लिये कलकत्ता म अडे हुये थे परन्तु जयचन्द्र जी के दुष्प्रचार के कारण अत्यन्त दुखी थे। परन्तु वे दिल्ली के लोगो को अपनी ईमानदारी का विश्वास करा दिलाये। खास कर कलकत्ता दल म क्रान्तिकारियों को जयचन्द्र जी पर ही विश्वास था।

तीसरे या चौथे दिन सध्या समय सुशीला दादी के साथ भगवती भाई से मिलने की आशा म चौरगी की तरफ गया। हम लोग सडक के साथ ट्राम की लाइन के पार मदान के किनारे किनारे विक्टोरिया स्मारक की ओर चले जा रहे थे। एक व्यक्ति मोटा मला कुरता घुटनो तक ऊंची धोती पहिने दरवानो की सी दाढी बढाये काली टोपी पहिने नमस्कार के सकेत से माथे को छू कर हम लोगो के सामने खडा हो गया।

भगवती भाई को मिलने के प्रयोजन से वहा गये थे इसलिये तुरन्त पहचान

दो पिस्तौलों के मुंह मांगे दाम भी पेशगी दे दिये।

यह बात अप्रासंगिक न होगी कि मेरी जेब में शायद पन्द्रह-बीस रुपये से अधिक नहीं थे। जब मैं गया कुछ था, वह लाहौर में बहिन प्रेमवती और दुर्गा भाभी द्वारा इकट्ठा किया दल का ही पैसा था। भगवती भाई के पास अपना, निजी लगभग पांच सौ रुपया था। पिस्तौल के लिये लगभग तीन सौ इसी रुपये में से दिये गये थे।

किरण ने रुपया लेते समय पूर्ण आत्म-विश्वास से दो दिन में पिस्तौल ला देने का वायदा किया था। दिन पर दिन बीतने लगे। सप्ताह से अधिक बीत गया परन्तु पिस्तौल न मिले। हम लोग किरण के बताये स्थान पर जाते और वह न मिलता। अपने घर आने के लिये उसने मना कर दिया था कि उसके सम्बन्धियों को सदेह न हो जाये और उसके घर पर पहरा देने वाले खुफिया पुलिस के लोग हमारा पीछा न करने लगें। यह संगत ही था।

हमारे अनुरोध पर किरण ने रात्रि के अन्धकार में दो बार हमें 'दादा' लोगों से भी मिलाया। इन नेताओं ने हमारे संगठन की व्यापकता के बारे में प्रश्न किये। हमें स्वीकार करना पड़ा कि अपने साथियों की गिरफ्तारी के कारण हमारा सम्बन्ध उस समय दल से टूटा हुआ था। इन लोगों ने हमारे तरीकों के प्रति निराशा प्रकट की और समझाया कि क्रान्ति ऐसे छुट-पुट कामों से नहीं हो सकेगी—"आप लोग पहिले अपना संगठन कायम कर लीजिये उसके बाद हम परिस्थिति देख कर आपका मार्ग दर्शन कर सकेंगे।"

किरण के रंग-ढंग से हमें अनुत्साह होने लगा। उसके पीछे घूमने और बगाली दादाओं से मिलने के लिये एक ही आदमी पर्याप्त था। नीति और चातुर्य से बात करने में और भारी भरकम शरीर से भी भगवती भाई मेरी अपेक्षा अधिक प्रभावोत्पादक थे। उन्होंने सौ रुपया अपने पास से मुझे देकर कहा—"तुम जम्मू लौट जाओ। आवश्यक औजार खरीद कर नये ढंग से बम तैयार करो। मैं सप्ताह-दस दिन में, यहां का काम निबटा कर जम्मू पहुंच जाउंगा। बम तैयार हो जाय तो उनके परीक्षण के लिये प्रतीक्षा करना।"

मेरे जम्मू पहुंचने पर भागराम लोहा काटने की आरी, छैनी, हथौड़ी और एक छोटी बाक खरीद लाया। पीतल की आध इंच व्यास की नली से टुकड़े काट और सीसा गला कर गोलियां ढाली और हम लोगों ने कारतूस बना लिये। कारतूसों की टोपी में इग्नीशन तोड़ने या चिन्गारी उत्पन्न करने के लिये विस्फोटक पदार्थों को स्पिरिट में गूंध कर बत्तियां बना कर लगा दीं। यही काम अधिक कठिन था। इसके बाद रेत की एक गोल पोटली में अपने बनाये कारतूसों को उचित स्थानों पर जमा कर, उस पोटली पर 'प्लास्टर आफ पेरिस' थाप कर भीतर से खोखला गोला बना लिया। प्लास्टर का गोला

लिया। साधारण तौर पर पहचाना जाना कठिन होता। मन उमड़ पड़ा कि पंजाबी ढंग से खूब आलिंगन में मिलें परन्तु मन मार कर रह गए। मैं कलकत्ता के भद्र लोग की भांति खूब साफ कमीज और धोती पहने था। वैसी ही पोशाक में सुशीला दीदी थीं। एक साधारण दरबान से आत्मीयता प्रकट करना लोगों को विस्मित करना उचित न था।

भगवती भाई ने अपने रहने की जगह बागबाजार का सस्ता मारवाड़ी बासा मुझे दिखा दिया। एक तंग गली में से बाँस या सुरंगनुमा अँधेरा दरवाजा आँगन तक जाता था। आँगन के चारों ओर चौमंजिली कोठरियाँ थीं। प्रत्येक कोठरी में एक या दो परिवार बसे हुए थे। अधिकतर बंगाल जा पड़ने वाले मारवाड़ी और कुछ कोठरियों में बिहारी परिवार जाति लोग भी थे। सभी परिवार अपने घर का जूठा कूड़ा, बर्तन, दातौन, कुल्हड़ आदि आँगन में फेंकते रहते थे। मारवाड़ी स्त्रियाँ माथे पर जड़ाऊ बोरला बाँध शरीर को अपर्याप्त रूप से ढके परन्तु घूँघट तीने खिड़कियों में बैठी आमने सामने की कोठरियों की स्त्रियों से बातचीत करती रहती। लाखपति करोड़पति के मकानों की भव्यता में गुजार कर मैं भगवती भाई की कोठरी में आ गया और उन्हीं की भाँति उत्तर प्रदेश के भैया (दरबान गरीब मुनीम) की पोशाक में घूमने फिरने लगा।

मैंने भगवती भाई को अपने जम्मू में विष बम के नए आविष्कार की बात बतायी। उन्होंने कालिज में साइंस पढ़ी थी। इस विषय में मेरी अपेक्षा उनकी समझ की भूमिका अधिक थी। पूरा विवरण सुनकर वे भी फड़क उठे—अरे यार, अगर यह हो जाय तो फिर बात ही क्या है? उन्होंने उस विधि पर तर्क और विवेचना भी की। अन्त में संतुष्ट होकर बहुत प्रसन्न हुए और मेरी प्रशंसा में बोले, तू तो भैया रत्न है (यू आर ए जुएल!)। भगवती जब किसी से प्रसन्न हो जाते तो इसी उद्गार से सम्बोधन किया करते थे।

इस समय तक हम दोनों बेहथियार हो गए थे। भगवती भाई ने कलकत्ते में अपना समय व्यर्थ नहीं गँवाया था। मेरे पहुँचने से पूर्व ही उन्होंने लाहौर षड्यन्त्र के सम्बन्ध में गिरफ्तार यतीन्द्रनाथ दास के मकान का भवानीपुर में पता लगा लिया था। हम दोनों यतीन्द्रनाथ दास के भाई किरन दास से मिले।

किरण दास जेल में बन्द अपने भाई यतीन्द्र से मिलने लाहौर गया था तो दुर्गा भाभी के यहाँ ही ठहरा था। वह क्रान्तिकारी बन्दियों के और उनके सम्बन्धियों के प्रति दुर्गा भाभी के आदर और बलिदान हो जाने का व्यवहार अपनी आँखों देख आया था। हम लोगों ने किरण से स्पष्ट बात की। कलकत्ता के क्रान्तिकारियों से परिचय करा देने और कम से कम दो पिस्तौल खरीदवा देने का अनुरोध किया। अपना विश्वास किरण के प्रति प्रकट करने के लिये

दो पिस्तौलो के मुह मागे दाम भी पेशगी दे दिये।

यह बात अप्रासगिक न होगी कि मेरी जेब म शायद पद्रह्-बीस रुपये से अधिक नही थे। जेब मे जो कुछ था, वह लाहौर म बहिन प्रेमवती और दुर्गा भाभी द्वारा इकट्ठा किया दल का ही पैसा था। भगवती भाई के पास अपना, निजी लगभग पाच सौ रुपया था। पिस्तौल के लिये लगभग तीन सौ इसी रुपये म से दिये गये थे।

किरण ने रुपया लेते समय पूर्ण आत्म-विश्वास से दो दिन म पिस्तौले ला देने का वायदा किया था। दिन पर दिन बीतने लगे। सप्ताह से अधिक बीत गया परन्तु पिस्तौल न मिले। हम लोग किरण के बताये स्थान पर जाते और वह न मिलता। अपने घर आने के लिये उसने मना कर दिया था कि उसके सम्बन्धियो को सदेह न हो जाये और उसके घर पर पहरा देने वाले खुफिया पुलिस के लोग हमारा पीछा न करने लगें। यह सगत ही था।

हमारे अनुरोध पर किरण ने रात्रि के अन्धकार मे दो बार हमे 'दादा' लोगो स भी मिलाया। इन नेताओ ने हमारे सगठन की व्यापकता के बारे मे प्रश्न किये। हमे स्वीकार करना पडा कि अपने साथियो की गिरफ्तारी के कारण हमारा सम्बन्ध उस समय दल मे टूटा हुआ था। इन लोगो ने हमारे तरीको के प्रति निराशा प्रकट की और समझाया कि क्रान्ति ऐसे छुट-पुट कामो से नही हो सकेगी—" आप लोग पहिले अपना सगठन कायम कर लीजिये उसके बाद हम परिस्थिति देख कर आपका मार्ग दर्शन कर सकेंगे।"

किरण के रग-ढग से हमे अनुत्साह होने लगा। उसके पीछे घूमने और बगाली दादाओ से मिलने के लिये एक ही आदमी पर्याप्त था। नीति और चातुर्य से बात करने में और भारी भरकम शरीर मे भी भगवती भाई मेरी अपेक्षा अधिक प्रभावोत्पादक थे। उन्होने सौ रुपया अपने पास से मुझे देकर कहा—"तुम जम्मू लौट जाओ। आवश्यक औजार खरीद कर नये ढग से बम तैयार करो। मैं सप्ताह-दस दिन म, यहा का काम निबटा कर जम्मू पहुच जाउगा। बम तैयार हो जाय तो उसके परीक्षण के लिये प्रतीक्षा करना।"

मेरे जम्मू पहुचने पर भागराम लोहा काटने की आरी, छैनी, हथौडी और एक छोटी धाव खरीद लाया। पीतल की आध इच व्यास की नली मे टुकडे काट और शीशा गला कर गोलिया ढाली और हम लोगो ने कारतूस बना लिये। कारतूसो की टोपी मे इग्नीशन तोडे या चिन्गारी उत्पन्न करने के लिये विस्फोटक पदार्थो को स्पिरिट मे गूध कर बत्तिया बना कर लगा दी। यही काम अधिक कठिन था। इसके बाद रेत की एक गोल पोटली मे अपने बनाये कारतूसो को उचित स्थानो पर जमा कर, उस पोटली पर 'प्लास्टर आफ पेरिस' थाप कर भीतर से खोखला गोला बना लिया। प्लास्टर का गोला

सूख जाने पर पाल्नी ने मुह पर धधकना शोर करने से रेत बाहर निकल गया और महान कष्ट भी त्याग दिये ।

गोल के भीतर के पार म शानिगनाजी के प्रयाग म आने वाले विस्फोटक पदार्थों का मिश्रण भर दिया । गोले के मुह पर एक बर्फ गज लम्बी तोडे की रस्सी लगा दी । इस बम के फेंक जाने पर उसे सुलगाने वाला घोडा (ट्रिगर) और चोट खा चाट ग आग पैदा करने वाला द्रव्य ना लगाया गया था । विचार था यदि हमारा यह बम पूरा न भी फटे तो गोलियो का धारा रूप म पड़ने म सफल हो जायगा तो एक मूल्यता भी गोला ही पूरी कर दी जायगी । मुझ अपनी सूझ और भागराम के हाथ की दस्तकारी पर बहुत भरोसा था । लगभग बम तैयार होने तक भगवती भाई जम्मू आ पहुचे ।

भगवती भाई को किरण से एक पिस्तौल चार कारतूस और अनेक कसमों के साथ दूसरा पिस्तौल एक मास के भीतर देने का वायदा मिला था । यह पिस्तौल मिल जाने पर हम लोग अपने आप को सशस्त्र अनुभव करने लगे । मन म उल्लास और उत्साह अनुभव होने लगा कि अब हम व्यर्थ म नही मारे जायगे । यह ठीक है कि हम इतने भोले नहीं थे कि एक ही पिस्तौल स ब्रिटिश सरकार को उखाड फेंकने के स्वप्न देखने लगते परन्तु हमारे लिये एक पिस्तौल का भी बहुत मूल्य था । पहली बात तो यह कि पुलिस स सामना होने पर पुलिस का मुकाबला और आत्मरक्षा का प्रयत्न कर सकते थे । हमारा ऐसा प्रयत्न दूसरों के लिये साहस का उदाहरण होता । इससे अधिक पिस्तौल का राजनैतिक उपयोग था । क्रान्ति और विद्रोह की निरी सैद्धान्तिक बात करने से लोगो पर ऐसा वैसा ही प्रभाव पडता था परन्तु अपने उद्देश्य के प्रमाण स्वरूप प्रत्यक्ष हथियार दिखा देने पर लोगो म सहसा उत्साह और विश्वास उत्पन्न हो जाता था ।

ब्रिटिश सरकार के हथियारों पर प्रतिबंध कानून और पुलिस की हजार सतर्कता के बावजूद हम हथियार रख सकते है यह हमारे सम्पर्क म आने वाले लोगों की दृष्टि म हमारी क्षमता और सरकार की पराजय का प्रमाण था । नौजवानों को रिवाल्वर पिस्तौल और बम दिखा कर प्रभावित करने का तरीका केवल उस समय ही रहा हो सो बात नहीं । १९४२-४४ म सशस्त्र क्रान्ति का प्रयत्न करने वाले लोग भी ऐसा ही करते रहे है । मेरी अपेक्षा भारी भरकम डील डौल गम्भीर चेहरे के भगवती भाई के सशस्त्र प्रकट होने का प्रभाव जम्मू के साथियो पर बहुत पडा ।

दूसरे ही दिन नये तैयार किये बम को आजमाने के लिये हम लोग नगर म लगभग चार मील दूर ऊबड खाबड पहाडी जंगल म गये । अपने आविष्कार की सफलता देखने के लिये मेरा मन उमग रहा था । हम म से किसी को भी

सफलता में सन्देह नहीं था परन्तु उसे प्रत्यक्ष कर लेना चाहते थे। बम को एक छोटे गढे मे रख कर मन मन, डेढ-डेढ मन भारी पत्थरो से ढक दिया। बम रखने की जगह से लगभग पचीस-तीस फुट की दूरी पर एक बडी चट्टान दीवार की तरह खडी थी। बम की गोलियो के निकास के लिये जगह छोड दी थी। ख्याल था, बम की कोई न कोई गोली इस चट्टान पर लगेगी ही। इससे बम के प्रभाव क्षेत्र की सीमा का अनुमान हो सकेगा। मैं और भगवती भाई इस चट्टान से परे एक ऊची जगह जा खडे हुये। भागराम ने बम के तोडे मे आग लगा दी और समीप एक गहरे गढे मे कूद गया।

बम के विस्फोट का शब्द काफी जोर से हुआ परन्तु एक भी पत्थर न हिला। चट्टान पर एक भी गोली लगने का कोई निशान न बना। समीप जाकर देखा तो कारतूस, प्लास्टर आफ पैरिस का खोल फट जाने के कारण आस-पास बिखरे हुये थे। बहुत निराशा हुयी। मेरा मुह लटक गया। भगवती भाई ने मुझे तसल्ली दी। उस समय तो मैं न समझ सका कि हमारे कारतूसो ने दूर तक मार क्यो नही की, यह बात कुछ दिन बाद विस्फोट की क्रिया जान लेने पर ही समझ मे आयी।

हम दोनो बम की असफलता से खिन्न चित्त होकर जम्मू नगर के नीचे तवी' नदी की ओर घूमने चले गये। चादनी रात थी। नदी किनारे बैठ कर हम लोगो ने निश्चय किया कि बम बनाने के 'तिलस्मी' आविष्कारो से काम नही चलेगा। लोहे के खोल बनाये बिना चारा नही। दूसरे लोगो से खोल ढलवाने और कटवाने मे सदा आशका रहेगी। इस काम को कर सकने वाला आदमी, भागराम तो हमारे साथ था परन्तु ऐसा कारखाना जमाने के लिये काफी रुपये और समय की आवश्यकता थी। इस समय बहुत-सी गिरफ्तारिया हो जाने के कारण जनता मे हमारे प्रति सहानुभूति और उत्साह घट गया था। आर्थिक सहायता बहुत कम ही मिलती थी। मिलती थी ना लक्ष्य के प्रति या सैद्धातिक सहानुभूति से नही, व्यक्तिगत सम्पर्क से। अधिकाश काम भगवती भाई के ही पैसे से चल रहा था। बहुत मामूली-सी सहायता बहिन प्रेमवती के इधर-उधर से माग-ताग कर इकट्ठे किये रुपये से मिल जाती थी। जनता की सहानुभूति पाने और उसे उत्साहित करने के लिये तुरन्त ही कुछ करना आवश्यक था। बम के खोल बन भी जाते तो विस्फोटक पदार्थ के बिना उनका कोई उपयोग नही हो सकता था। *अलबत्ता विस्फोटक पदार्थ बना सकने पर अच्छे* खोलो के बिना भी उसका उपयोग हो सकता था।

'तवी' के किनारे चादनी रात मे बैठ कर टिटिहरी की पुकारें सुनते हुए हम लोगो ने निश्चय किया, यदि हम खूब सशक्त विस्फोटक पदार्थ काफी मात्रा मे बना सकें तो अधिक लोगो की सहायता और बम के खोलो के बिना भी

सफलता में सन्देह नहीं था परन्तु उसे प्रत्यक्ष कर लेना चाहते थे। बम को एक छोटे गढ़े में रख कर मन-मन, डेढ़-डेढ़ मन भारी पत्थरों से ढक दिया। बम रखने की जगह से लगभग पचीस-तीस फुट की दूरी पर एक बड़ी चट्टान दीवार की तरह खड़ी थी। बम की गोलियों के निकास के लिये जगहें छोड़ दी थी। ख्याल था, बम की कोई न कोई गोली इस चट्टान पर लगेगी ही। इससे बम के प्रभाव क्षेत्र की सीमा का अनुमान हो सकेगा। मैं और भगवती भाई इस चट्टान से परे एक ऊंची जगह जा खड़े हुये। भागराम ने बम के तोड़े में आग लगा दी और समीप एक गहरे गढ़े में कूद गया।

बम के विस्फोट का शब्द काफी जोर से हुआ परन्तु एक भी पत्थर न हिला। चट्टान पर एक भी गोली लगने का कोई निशान न बना। समीप जाकर देखा तो कारतूस, प्लास्टर आफ पैरिस का गोला फट जाने के कारण आस-पास बिखरे हुये थे। बहुत निराशा हुयी। मेरा मुंह लटक गया। भगवती भाई ने मुझे तसल्ली दी। उस समय तो मैं न समझ सका कि हमारे कारतूसों ने दूर तक मार क्यों नहीं की, यह बात कुछ दिन बाद विस्फोट की क्रिया जान लेने पर ही समझ में आयी।

हम दोनों बम की असफलता से खिन्न चित्त होकर जम्मू नगर के नीचे 'तवी' नदी की ओर घूमने चले गये। चांदनी रात थी। नदी किनारे बैठ कर हम लोगों ने निश्चय किया कि बम बनाने के 'तिलस्मी' आविष्कारों से काम नहीं चलेगा। लोहे के खोल बनाये बिना चारा नहीं। दूसरे लोगों से खोल ढलवाने और कटवाने में सदा आशंका रहेगी। इस काम को कर सकने वाला आदमी, भागराम तो हमारे साथ था परन्तु ऐसा कारखाना जमाने के लिये काफी रुपये और समय की आवश्यकता थी। इस समय बहुत-सी गिरफ्तारियां हो जाने के कारण जनता में हमारे प्रति सहानुभूति और उत्साह घट गया था। आर्थिक सहायता बहुत कम ही मिलती थी। मिलती थी तो लक्ष्य के प्रति या सैद्धान्तिक सहानुभूति से नहीं, व्यक्तिगत सम्पर्क से। अधिकांश काम भगवती भाई के ही पैसे से चल रहा था। बहुत मामूली-सी सहायता बहिन प्रेमवती के इधर-उधर से मांग ताग कर इकट्ठे किये रुपये से मिल जाती थी। जनता की सहानुभूति पाने और उसे उत्साहित करने के लिये तुरन्त ही कुछ करना आवश्यक था। बम के खोल बन भी जाते तो विस्फोटक पदार्थ के बिना उनका कोई उपयोग नहीं हो सकता था। अलबत्ता विस्फोटक पदार्थ बना सकने पर अच्छे खोलों के बिना भी उसका उपयोग हो सकता था।

'तवी' के किनारे चांदनी रात में बैठ कर टिटिहरी की पुकारें सुनते हुए हम लोगों ने निश्चय किया, यदि हम खूब सशक्त विस्फोटक पदार्थ काफी मात्रा में बना सकें तो अधिक लोगों की सहायता और बम के खोलों के बिना भी

विस्फोटक मसाले को रेलगाड़ी की पटरी के नीचे दबा कर वाइसराय की ट्रेन उड़ा सकते हैं। यदि हम दोनों में से एक व्यक्ति जान देकर भी यह काम कर सके तो जनता को हमारे दल की शक्ति का विश्वास हो सकेगा। जनता की भावना हमारे पक्ष में बदल जायगी और भविष्य में काम अधिक व्यापक रूप में और तेजी से हो सकेगा।

दल के विस्फोटक पदार्थ बनाने वाले विशेषज्ञ यतीन्द्रनाथ दास, सुखदेव और शिव वर्मा गिरफ्तार हो चुके थे। कलकत्ते में भगवती भाई ने किरण दास की मारफत बम का मसाला बनाने वाले व्यक्ति का परिचय पाने की बहुत कोशिश की थी परन्तु असफल रहे।

भगवतीचरण ने सोच कर बताया, एक आदमी ऐसा है जो प्रयत्न करने पर निश्चय ही बम बना सकने का नुसखा खोज सकता है। उन्होंने कहा कि जयचन्द्र के वैमनस्यपूर्ण प्रचार के बावजूद वह व्यक्ति उनका विश्वास कर लेगा। उस व्यक्ति का नाम उन्होंने बताया—देवदत्त शर्मा।

देवदत्त शर्मा दयानन्द एंग्लो वैदिक गवर्नमेण्ट कालेज, लाहौर में रसायन के अध्यापक थे। उनकी भगवती भाई से पुरानी मित्रता थी। शायद एक समय दोनों सहपाठी भी रह चुके थे। देवदत्त शर्मा से मेरा भी परिचय था। उस समय लाहौर के कालेजों में ग्रीष्मावकाश होने के कारण देवदत्त अपने घर श्रीनगर कश्मीर में थे। भगवती भाई ने उनसे मिलने के लिये कश्मीर जाने का विचार प्रकट किया।

मैंने भगवती भाई के कश्मीर जाने पर आपत्ति की—"देवदत्त को तुम पर विश्वास है परन्तु इस समय लाहौर के सैकड़ों आदमी श्रीनगर में होंगे। तुम इससे पूर्व भी श्रीनगर जा चुके हो। तुम्हें बहुत से लोग पहिचानते होंगे। जयचन्द्र जी के दुष्प्रचार के कारण लोग तुम्हें पहचान कर व्यर्थ में उंगली उठाने लगेंगे। यह भी असम्भव नहीं कि लाहौर की बम फैक्टरी पकड़ी जाने के बाद जयचन्द्र ने जो प्रचार किया है, उसका प्रभाव देवदत्त पर भी पड़ा हो। उनसे मेरा भी परिचय है। मुझे भरोसा है कि मैं तुम्हारा नाम लेकर या स्वतन्त्र रूप से ही अपना अनुरोध शर्मा से मनवा सकूंगा। कश्मीर जाना मेरी अपेक्षा तुम्हारे लिये अधिक आशंकाजनक है। यदि आशंका दोनों के लिये बराबर हो तो भी दल के लिये तुम्हारा बच रहना अधिक उपयोगी होगा।'

मेरा कश्मीर जाना तय हो गया। भगवती भाई ने निश्चय किया कि वे दिल्ली में जाकर डेरा जमायेंगे और मैं कश्मीर से वहीं लौटूं। दिल्ली में अपने एक विश्वासी परिचित का पता उन्होंने मुझे दे दिया।

दूसरे तीसरे दिन मैं एक आधुनिक शौकीन सैलानी के वेष में कन्धे से कैमरा और बरसाती कोट लटकाये कश्मीर की ओर चल दिया। हम लोगों

की साझी सम्पत्ति, एकमात्र पिस्तौल भगवती भाई ने आत्म-रक्षा के लिये मुझे सौंप देनी चाही।

मैं उसे फिलहाल अनावश्यक समझ कर कहा—"उस अपरिचित जगह में सन्देह हो जाने पर मैं भाग कर निकल तो सकूँगा नहीं, बहुत होगा तो रियासती पुलिस का एकाध आदमी मार डालूँगा। उससे लाभ क्या! जब तक दूसरी पिस्तौल न मिल जाय, इसे तुम्हीं रक्खो। तुम पंजाब के रास्ते दिल्ली जा रहे हो। तुम मेरी अपेक्षा अधिक खतरे में हो।"

मुझे इतने दिन में यह भी भरोसा हो गया था कि अपने व्यवहार से ही मैं सन्देह का अवसर न आने दूँगा। सन्देह होगा भी तो कुछ न कुछ कर ही लूँगा। कश्मीर जाने के लिये रुपया भगवती भाई ने ही दिया। यह भी समझाया कि इतनी दूर जा रहे हो तो रुपये की कंजूसी में दर्शनीय स्थानों तक जाने में संकोच न करूँ। रुपया कम पड़ जाने पर उन्हें देहली में तार दे दूँगा।

*　　*　　*

बम की खोज में

कई घटनायें और दृश्य मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव छोड़ जाते हैं। दृश्यों का प्रभाव समय-समय पर मस्तिष्क की ग्रहण योग्यता पर भी निर्भर करता है। लगभग दो ही मास पूर्व बरफानी चोटियों की छाया में बसे, हरे-भरे कांगड़ा में गया था तो मन आतंकित और चिन्तित होने के कारण उस अनुपम सौंदर्य की ओर ध्यान ही न जाता था। अब मानसिक अवस्था बदल चुकी थी। तब मैं गिरफ्तारी से भाग रहा था। इस समय अपने विश्वास में, दल की ओर से एक उत्तरदायी व्यक्ति के रूप में महत्वपूर्ण काम के लिये जा रहा था। अपने साथियों या लोगों का विश्वास पा लेने से व्यक्ति में आत्म विश्वास पैदा हो जाता है। सतर्क तो अब भी अवश्य था परन्तु भयभीत नहीं था।

जम्मू से कश्मीर का अन्तर लगभग २०५ मील है। यात्रा मोटर बस में की थी। बस सन्ध्या समय 'बटोट' में गुजरी। बटोट की उपत्यका में धीमे-धीमे उठती ढलवानों पर फैले देवदार के जंगलों के पीछे सूर्यास्त हो रहा था। सड़क किनारे एक बड़ी चट्टान पर खड़े एक योरोपियन दम्पति अत्यन्त तन्मयता से उस दृश्य को देख रहे थे। दम्पति सन्ध्या समय भोज में सम्मिलित होने की

भली पोशाक पहिने थे। सूर्यास्त के सिन्दूरी क्षितिज पर देवदार की फैली हुई पंक्तियां और उन्हें देखने वाले ये दम्पति एक ही दृश्य के अंग जान पड रहे थे। *आज तेइस वर्ष बाद भी मैं अपनी कल्पना में उस दृश्य को हू-बहू देख पाता* हूं और खूब याद है कि देखने में भले नगन पर भी मैंने उनसे घृणा करने का यत्न किया था। ईर्षा से कि जिनका देश है, जो श्रम कर रहे हैं वे तो धूल में मिल रहे हैं और ये उस सम्पदा का रस ले रहे हैं। उनकी जगह मैं स्वयं ले लेना चाहता था। उनका साफ-सुथरा और सुखी होना ही मुझे बुरा लग रहा था। उनका सुख मेरे देश के दुख से था। अपने सुधार के लिये उनसे घृणा स्वाभाविक थी।

दूसरे दिन प्रायः दोपहर के समय मोटर बस 'बन्हाल' पहाड पर चढती जा रही थी। बन्हाल बहुत ऊंचा पहाड है। सडक अंग्रेजी वर्णमाला के अक्षर 'Z' की तरह या मुडी हुई कोहनियों की तरह बार-बार बायें और दायें मुडती हुई ऊपर ही ऊपर जा रही थी। जून के महीने में यह पहाड बिलकुल रूखा और खुश्क था। शायद ही कहीं कोई वृक्ष, घास या हरियावल दिखायी देती थी। गरमी बहुत अधिक, चढाई भी बहुत कडी और सीधी थी।

गाडी पहाड की रीढ से कुछ नीचे एक सुरंग के सामने पहुंच कर जरा देर के लिये थम गयी मानो इस कडी चढाई से मोटर के लोहे के फेफडे भी थक गये हों। कडी चढाई के कारण एक बार आधे रास्ते में भी इंजन गरम हो जाने से पानी बदलने के लिये गाडी को रोकना पडा था। वहां पहुंचते-पहुंचते इंजन फिर बहुत गरम हो गया था। पहाड पर वनस्पति की आड न होने के कारण सुरंग से नीचे घाटी की बस्ती आंखों के सामने नक्शे की तरह फैली हुई थी। बहुत ऊंचाई के कारण जान पड रहा था कि नीचे बालिश्त-बालिश्त भर की गुडियों की बस्ती के खिलौने सजे हुये हैं।

मोटर ने सुरंग में प्रवेश किया। सुरंग छोटी ही थी। दूसरी ओर निकलते ही *मानो रंगमंच पर परदा बदल गया। सब ओर हरियावल, फूलों से लदे* वृक्ष। हवा में ठण्डक। आकाश भी खूब नीला। जान पडा, जादू की छडी के स्पर्श ने सब कुछ बदल दिया हो। बन्हाल पहाड नौ हजार फुट से अधिक ऊंची गगनचुम्बी दीवार है। दीवार के इस ओर जम्मू प्रान्त और सुरंगपार कश्मीर। जैसी सीधी चढाई चढ कर आये थे दूसरी ओर उतराई उतनी आडी नहीं थी।

उतराई समाप्त होने पर 'वेरीनाग' में सडक प्रायः समतल हो जाती है। सडक के दोनों ओर मीलों तक 'सफेदा' के वृक्षों के सफेद तनों और हरी चोटियों की अटूट पंक्तियां। बस्तियों की झोंपडियां कुछ दूसरे ढंग की। स्त्री-पुरुष और बच्चे दूसरे रूप-रंग के। गोरे रंग मैले-कुचैले हाथ-पांव, चिपकी हुई गोल टोपियां 'फिरन' (लबादों) के चीथडे ओढ़े हुये। झोंपडियों के आस-पास फलों

मे लदे वृक्ष। वेरीनाग मे श्रीनगर केवल चालीस मील ही है, शीघ्र ही पहुच गये।

मोटर के अड्डे पर होटलो और हाउसबोटो के दलालो की भीड थी। उतनी ही सख्या म पजाब खुफिया पुलिस के सिपाही भी थे। पजाबी ही अधिक सख्या मे दिखाई द रहे थे। मैंने ऐसा व्यवहार किया कि पजाबी नही समझता हू। सीधा 'नीडोज' होटल मे पहुचा। इस होटल मे अधिकाश योरोपियन या साहब मिजाज हिन्दुस्तानी ही ठहरते थे। श्रीनगर की बाबत ऐसी सब बातें जम्मू के परिचितो से जान चुका था।

नीडोज होटल बहुत अच्छा और उतना ही महगा था उस समय भी उस का खर्च सात-आठ रुपय प्रतिदिन रहा होगा। तब से कीमतें और दर चार-पाच गुणा बढ चुके है। मेरे लिये यह दाम बहुत अधिक थे परन्तु सुरक्षा के विचार मे यही उचित समझा।

होटल म भोजन के बाद सुखदेव से मुलाकात करने के लिये लाहौर जेल म जाते समय पहने सूट मे सज कर देवदत्त शर्मा का मकान ढूढने निकला। यह मालूम था कि उनके बडे भाई भीमसेन शर्मा वासुदेव डिप्टी मैजिस्ट्रेट थे। शर्मा जी के छोटे भाइयो से लाहौर मे परिचित था। उन लोगो स मुझे भय भी न था। भीमसेन जी मुझे पहिचानते न थे फिर भी चाहता था कि मैजिस्ट्रेट मे भेंट न होना ही अच्छा।

भाग्य की बात, भीमसेन ही मिले। मेरे नाम-धाम और आने का प्रयोजन पजाबी मे पूछे जाने पर मैंने अग्रेजी मे बातचीत की मानो पजाबी समझता नही। उत्तर दिया कि देवदत्त शर्मा को लाहौर से जानता हू। उन्होने कहा था, यदि कभी श्रीनगर आऊ तो उनसे अवश्य मिलू।

मैजिस्ट्रेट साहब ने जानना चाहा मैं श्रीनगर म कहा ठहरा हू। उत्तर मे नीडोज होटल का नाम सुन कर उनके चेहरे पर प्रभाव स्पष्ट दिखायी दिया। उनके स्वर मे अफसराना ढग दूर हो कर आत्मीयता आ गयी। उन्हे मेरे सम्भ्रान्त होने का विश्वास हो गया।

देवदत्त सैर के लिये श्रीनगर म बाहर मटन या पहलगाव गये हुये थे। दो-तीन दिन मे लौटने की आशा थी। भीमसेनजी ने आश्वासन दिया कि वे एक पोस्टकार्ड लिख कर मेरे आने की सूचना तुरन्त भाई को दे देंगे। मैंने अपना परिचय काल्पनिक नाम से और देहली निवासी के रूप म दिया था। सध्या तक मैं श्रीनगर के बाजारो और जेहलम के किनारे घूम फिर कर स्थान का परिचय पाने की चेष्टा करता रहा।

श्रीनगर जेहलम नदी पर बसा हुआ है। नदी के दोनो किनारो पर बस्ती जल को छूती है। किनारो पर खुला स्थान या रेती नही है। कुछ-कुछ अतर पर पुल हैं। सवारी के लिये टागे और मोटरे भी चलती है परन्तु मुख्यत.

शिकारो (छोटी नावों) पर ही आना जाना होता है। जेहलम में छोटे-छोटे नदी नाले प्राय सभी स्थानों तक पहुंचते है। नदी की लहरों पर डोलती रंग-बिरंगी छतरियों से ढकी छोटी-छोटी नावे तितलियों के झुंड जैसी जान पड़ती है।

श्रीनगर के मुख्य पुल का नाम 'मोराकदल' है। 'मोराकदल' के उस पार प्राय साहब लोगों की खूब साफ-सुथरी बस्ती है। दूसरी ओर काश्मीरियों की बहुत गन्दी बस्ती। वहा यूरोपियन ही सब ओर दिखाई देते थे। संख्या में चाहे वे आटे में नमक के बराबर ही रहे हों परन्तु प्राधान्य उन्ही का था जैसे ढेर से आटे में चुटकी भर नमक मिला देने से नमक का ही स्वाद जान पड़ता है। जान पड़ता था, काश्मीरियों के जीवन का उपयोग सैलानी साहब लोगों, मुख्यत यूरोपियनों को सुविधा पहुंचाना ही था। सैलानी मालिक जान पड़ते थे और स्थानीय लोग उनके दास।

तीन-चार दिन तक नीडोज होटल का खर्चा भरने में कोई लाभ न था। चौबीस घण्टे का किराया तो देना ही था इसलिये रात वहीं रहा। अगले दिन दोपहर बाद 'गुलमर्ग' चला गया। देश के बड़े लोगों को गर्मी मालूम होती है तो वे कश्मीर में श्रीनगर चले जाते है। श्रीनगर जाने वाले बड़े लोगों में भी कुछ बहुत बड़े लोग जून के महीने में श्रीनगर से गुलमर्ग चले जाते है।

गुलमर्ग में साधारणत बहुत सर्दी पड़ती है। अधिकांश में बड़े साहब लोग ही वहा जाते थे। समुद्र तल से असाधारण ऊंचाई पर एक खूब बड़ा समतल, घनी परन्तु छोटी-छोटी घास से ढका हुआ मैदान है जैसे हरा गलीचा बिछा हो। इस मैदान के चारो ओर यूरोपियन ढंग की छोटी-छोटी, दो-दो, चार-चार कमरे की कुटिया बनी हुई थी। इनका किराया बहुत अधिक था। साहब लोग दिन भर मैदान में 'गोल्फ' खेलते थे। गोल्फ खेलने के लिये गुलमर्ग जाना बहुत बड़ी साहबियत समझी जाती थी। एक बहुत महंगा होटल और शायद नीडोज होटल की शाखा भी थी। मध्यम या निम्न-मध्यम वर्ग के हिन्दुस्तानी दो-तीन दिन के लिये ही गुलमर्ग जा पाते थे। उनके लिये दो छोटे-छोटे, मैले से काठ के तख्तों की इमारत के होटल थे। मैं इन्ही में से एक में ठहर गया।

उस होटल में पश्चिमी पंजाब के 'झंग' जिले से आये हुये तीन नौजवान भी दो-तीन दिन के लिये ठहरे हुये थे। उन्हें अपना परिचय जालन्धर के स्कूल मास्टर के रूप में दिया और इनके साथ सैर-सपाटे में घूमता रहा। उस समय *गुलमर्ग में अंग्रेजों के रोबदाब की सीमा न थी। जान पड़ता था, खास उनका* ही निजी स्थान हो। हिन्दुस्तानी बड़े मैदान में से आते-जाते सहमते रहते थे। लोगों के आने-जाने से साहब लोगों के खेल में यदि विघ्न पड़ता तो वे माथे पर त्योरियां चढ़ा कर चाहे जिसे फटकार देते या मार बैठते। गोल्फ की गेंद को कड़ी या धीमी चोट लगाने के लिये तरह-तरह की छड़ियों की जरूरत पड़ती

है। यह छडिया उठाकर साहबों के पीछे-पीछे घूमना कश्मीरी लडकों का व्यावसाय था। छोट-छोटे कश्मीरी लडके मैले-कुचैले लबादे पहने साहब लोगो की गाल्फ की छडियो के थैले पीठ पर लादे उनके पीछे-पीछे भागते रहते थे।

इन्ही नौजवानों के साथ मैं हरे मैदान मे घूम रहा था। नौजवान साहब लोगो की डाट मे अपमानित होने की आशका मे, पजाबी मे अग्रेजो को मा-बहिन की गालिया देकर उन्हे जूते मारने की महत्वाकाक्षा प्रकट कर रहे थे। जिस किसी भी अग्रेज बच्ची, नवयुवती या बुढिया को देखते उस से व्यभिचार करने के इरादे की घोषणा कर देते। इसे अभद्रता ही कहा जायगा। आज ऐसा देख कर जरूर आपत्ति करूगा परन्तु तब यह बुरा नही लग रहा था। स्वभाव से इस प्रकार की अभद्रता मुझे पसन्द नही है। लाहौर की गलियो मे इस प्रकार की अभद्रता के विरोध म मार-पीट भी कर चुका था परन्तु उस समय उन नौजवानो के व्यवहार पर क्रोध नही आया। क्यो ? इसलिये कि गुलमर्ग पर छाये अग्रेजो के आतक की उपेक्षा करने और उस के विरुद्ध अपना अस्तित्व अनुभव करने के लिय ही वे लोग ऐसी बक-बक कर रहे थे। यह एक प्रकार से अग्रेजो द्वारा भारत के राष्ट्रीय दमन के प्रति असतोष की अभिव्यक्ति और अपने दैन्य की अस्वीकृति थी। इसे अनुकरणीय वीरता नही कहा जायगा परन्तु आतक के विरोध की इच्छा तो मानना ही होगा। उस समय राष्ट्रीय रूप से वीरता प्रकट करने व अग्रेजो के सामने सिर ऊचा कर सकने का अवसर भारतीय नौजवानो को था ही कहा।

उस सध्या गुलमर्ग मे बादल छा गये और मैदान मे भी धुनी हुई रुई जैसा धुन्ध भर गया था। सख्त सर्दी हो गई थी। रात बरसाती कोट और कबल मे लिपट कर काटी। दूसरे दिन भी रिम-झिम वर्षा होती रही। आकाश घने बादलो मे ढका हुआ था। बादल बहुत नीचे, पेडो की शाखाओ में उलझ-उलझ कर टप-टप कर रहे थे। होटल के नौजवान साथियो को ऐसी सर्दी मे बाहर जाकर भीगने का शौक नही था। उन्हे एक और साथी मिल गया था और वे कम्बल ओढ कर ताश खेलने बैठ गये। मैने सुना कि गुलमर्ग से कुछ ही ऊपर 'अफरवत' मे तब भी बरफ जमी हुई थी। मैं उसी ओर चल दिया। कुछ दूर चढाई चढने के बाद बिल्कुल सुनसान था। रास्ता बताने वाला भी कोई नहीं।

जगल मे एक कश्मीरी छोकरा छोटे कद की पहाडी गौए चराता दिखायी दिया। गोरा-लाल चेहरा, बारिश मे धुला हुआ, बीचोबीच से कटे नारियल के खोल जैसी टोपी सिर पर कसी हुई, चीथडा-सा लबादा घुटनो तक और भीगा हुआ। पाव मे रस्सी की बनी हुई चप्पल। हाथ मे छोटी-सी लाठी। मुझे देखते ही उस ने मुस्कराकर सलाम सम्बोधन किया—"साहब सलाम, पैसा।"

उस समय ऐसा व्यवहार गरीब कश्मीरी छोकरो का साधारण अभ्यास था,

सलाम करके बख्शीश माग लेना। साहब लोग अपना अहंकार पूरा करने के लिये ऐसे व्यवहार को उत्साहित करते थे।

"हम अलपत्तर जायगा। रास्ता दिखाओ!" मैंने लड़के से कहा।

वह उत्साह से तैयार हो गया। कुछ दूर ऊपर पहाड़ के समतल से भाग पर बरफ का छोटा-सा मैदान था। सर्दी बहुत थी परन्तु चढ़ाई चढ़ने और रबड़ के बरसाती कोट में लिपटे रहने के कारण पसीना भी आ रहा था। कौतूहल हुआ कि बरफ पर चल कर देखूं। एक ही कदम बरफ पर गया था कि पांव फिसल कर गिर पड़ा। उठने के लिये दूसरे पांव पर जोर दिया तो वह भी फिसल गया। जितनी बार कोशिश की पांव रपटता ही गया। बरफ सीमेंट के घुटे हुए फर्श की तरह मसृन और चिकनी हो चुकी थी। मेरे जूते का तला 'क्रेप' का था। आखिर उस लड़के को सहायता के लिये पुकारा। उस ने लाठी दी और स्वयं बरफ से परे कंकरीली जगह खड़े हो मेरा हाथ पकड़ कर खींचा। इस उपाय से बाहर निकला। दम फूल गया था।

बरफ के किनारे कंकरीली जगह बैठ कर उस छोकरे से बात करने लगा। नीचे कंकरों में कांच की चूड़ियों के कुछ टुकड़े देख कर विस्मय हुआ। चूड़ी का टुकड़ा उस छोकरे को दिखा कर पूछा—"यह क्या है?"

छोकरे ने अपनी उंगलियों में कलाई को लेकर बताया, गहना है और हाथों के इशारे और टूटी-फूटी हिन्दुस्तानी में समझाया कि एक सेठ-सेठानी और उन की लड़की यहां तम्बू लगा कर एक रात रहे थे। लड़की की चूड़ी टूट गयी थी। सेठ का परिवार डालियों में कुलियों के कन्धों पर चढ़ कर यहां आया था। हाथ की चार उंगलियां दिखा कर छोकरे ने बताया कि हम को भी चार आना दिया था। इन लोगों के मन में उन्हीं लोगों के लिये आदर था जो इन के कन्धों पर सवार होकर चलते थे। यही उन की उदरपूर्ति का साधन था।

कश्मीरी लोगों को हिन्दुस्तानियों की अपेक्षा अंग्रेजों के प्रति अधिक आकर्षण था क्योंकि उन से बखशीश की, अधिक पैसे की आशा रहती थी। अंग्रेजों के प्रति उन का आदर वैसा ही था जैसे कुत्ते का मालिक के प्रति होता है। उस समय यदि कश्मीर से अंग्रेजों को निकाल देने का आन्दोलन चलाया जाता तो गरीब मजदूरी पेशा और दूकानदार कश्मीरी सम्भवतः उसका विरोध ही करते। परन्तु ऐसा भी समय आया कि जीवन के अवसर के लिये संघर्ष की राह पर यही कश्मीरी आन्दोलन कर रहे थे—'कश्मीर कश्मीरियों के लिये!' जीवन के अवसर के लिये संघर्ष के यह दो दृष्टिकोण जितने भिन्न हैं, उतने ही सत्य भी।

मैंने भी आदर पाने की इच्छा से उस लड़के को चार आने दे दिया। उसने बताया कि जाड़े में यहां सब ओर बरफ ही बरफ हो जाता है।

पूछा—"जाड़ों में क्या पहनते हो?"

लड़के ने अपने सवाल पर हाथ रख कर उत्तर दिया—"बस यही। हम लोग नीचे चला जाता है। जाड़े में गोरा साहब लोग नीचे चला जाता है, तब यहां क्या करेगा? साहब लोग कभी-कभी बरफ में नाचने आता है।"

गुलमर्ग में अगले दिन भी वर्षा और धुन्ध बना रहा। गुलमर्ग के उस पंजाबी होटल में लाहौर से उर्दू अखबार आता था। लाहौर षड्यन्त्र अर्थात् हमारे साथियों के मुकदमे आरम्भ हो गये थे। अखबारों में भगतसिंह के ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध क्रान्ति की घोषणा के साहसपूर्ण बयान छप रहे थे। इन पर बहस तो न होती परन्तु लोग दूसरों को सुना-सुना कर पढ़ते। पाठकों के स्वर और ढंग से उत्साह प्रकट होता था। अगले दिन सुबह भी झड़ी न थमी। तीनों शर्मा नौजवान वर्षा और सर्दी से तंग आकर अपेक्षाकृत गरम जगह, श्रीनगर चले जाने के लिए तैयार हो गये। मैं भी उनके साथ हो लिया। इस समय देवदत्त शर्मा के लौट आने की आशा थी।

गुलमर्ग से चलते समय एक शर्मा नौजवान ने गुलमर्ग की हरियावल और मैदान में लोटते बादलों की ओर संकेत कर, विरक्ति से कहा—"लानत है इस खूबसूरती और स्वर्ग की शोभा की धूम पर। मैं न्योछावर हूं अपने वतन की रेत, लूह और आंधी पर।"

इन नौजवानों ने श्रीनगर में मुझसे अपने साथ ही रहने के लिए अनुरोध किया था। इन लोगों ने एक कोठरी किराये पर ली हुई थी। खाना कभी खुद बना लेते थे कभी तन्दूर पर खा लेते थे। श्रीनगर लौट कर अपना संक्षिप्त-सा सामान इन्हीं लोगों के साथ छोड़ कर देवदत्त शर्मा के मकान पर ऐसे समय पहुंचा कि मैजिस्ट्रेट साहब से भेंट न हो।

मुझे देख कर देवदत्त को विस्मय तो हुआ परन्तु सम्भल गये। दूसरों पर विस्मय प्रकट न किया। वहां बातचीत न कर हम लोग जेहलम की ओर जाकर एक शिकारा लेकर ऐसे सूने स्थान की ओर चले जहां हमारी बात सुनी जाने की आशंका न थी। हम लोग, 'चिनारनाला' से होते हुए 'डल' झील में चले गये। बातचीत अंग्रेजी में ही की ताकि शिकारा चलाने वाला 'हांजी' (मल्लाह) कुछ समझ न सके।

देवदत्त को विश्वास दिलाया कि मेरे उनसे मिलने की बात भगवती भाई के अतिरिक्त दल का कोई आदमी नहीं जानता, न किसी को बतायी ही जायगी। हम दोनों का विश्वास कर सकते हो तो हम प्राणों का संकट आने पर भी आप से विश्वासघात नहीं करेंगे।

शिकारा लगभग एक घण्टे तक झील में घूमता रहा। देवदत्त झल-मलाती लहरों की ओर दृष्टि किये चुपचाप सोचते रहे। अन्त में स्वीकृति दी—"मैंने 'पिकरिक एसिड' पर लेबोरेटरी में रिसर्च तो की थी परन्तु अब

जबानी याद नही है। म अपनी पुस्तका म देखूगा। स्थानाय कालज क पुस्तकालय म भी कोशिश करूगा। यदि भरास लायक नुस्खा ढूढ पाया ता जरूर बता दूगा। इसम तीन चार दिन तो लग जायग।

देवदत्त ने मेरा ठिकाना पूछा। उत्तर पाकर उन्होने समझाया— वह जगह ठीक नही। म तुम से कही भी किसी क सामन नही मिलूगा। न तुम्हारे साथ दिखायी दना चाहता हू। यहा मुझ पुलिस और सब लाग जानत है।

घूम फिर कर एक छाटा हाउसबाट (नाव म बना मकान) खोज लिया। उस हाउसबाट का किराय पर लन वाल अग्रज साहब पद्रह दिन क लिय कश्मीर क किसी दूसरे भाग म शिकार खलन चल गय थे। हाउसबाट का हाजी किरायेदार की अनुपस्थिति का लाभ उठाना चाहता था। उसस सस्ते म सौदा हा गया। म जान चुका था कि कश्मीरी ७० दाम माग कर कर ७ म सौदा कर लेता है। इस हाउसबाट म साहबी ठाठ से जा टिका। देवदत्त का किनारवाला म अपना हाउसबोट का पता और नम्बर बता कर उनक आन का प्रतीक्षा करने लगा।

हाउसबाट नाव म मकान हाता है। बड बड हाउसबोट दो मजिल भी होते है। छाट हाउसबाट म प्राय दो कमरे एक गुसलखाना सामन छोटा सा बरामदा रहता है मेज कुरसी पलग इत्यादि स लैस। अधिकाश हाउसबाटो म बिजली का प्रबध भी रहता है। झील नदी या नाल क किनार एक खभ स हाउसबोट तक बिजली का तार लगा म लगा दिया जाता है और जब चाह हटा दिया जाता है।

हाउसबाट पानी म लगर डाल खड रहते है परन्तु जब चाह पूरा मकान का मकान तरता हुआ जहा भी पानी कुछ गहरा हा घूम फिर सकता है। अनक हाउसबोट जहलम नदी किनारवाला और डल झील क क्षत्र म घूमत है।

मकान हा क्या कश्मीर म खत भी तैरत ह। लकडिया और बासा की पैंड सी बाध उस पैंड पर सूख घास फूस की तह जमा कर मिट्टी और खाद फैला दी जाती है। इस खेता म खीरा ककडी टमाटर और दूसरी तरकारिया बहुत उगती है। सिंचाई की कोई जरूरत नहीं रहती। इन खेता का भी एक स्थान स दूसर स्थान पर ले जाया जा सकता है। कभी कभी खेता की चोरी हा जाने की घटनाय भी हो जाती ह।

देवदत्त की प्रतीक्षा म मैं मजदूरन छुट्टी पर विहार कर रह था। हाउस बाट क साथ एक शिकारा भी (बहुत छाटा नाव) भी रहता है। यह शिकारा हाउसबाट स किनारे तक आन जान क लिय हाता है। जब किरायदार चाह हाजी शिकारे स सैर सपाट के लिय भी तैयार रहता है। म हाउसबाट म लटा लटा काई उपन्यास पढता रहता या ऊब कर सैर करन चला जाता था।

बाजार में लाहौर के आदमियों के मिलने की आशंका रहती थी इसलिये प्रायः मैं किनारे से 'डल' झील, 'हारबन', 'शालामार' इत्यादि की ओर ही जाता।

डल झील खूब गहरी है, पानी काच की तरह साफ और पारदर्शी। तीन-तीन, चार-चार आदमी की गहराई तक भी तल पर पड़े रंग बिरंगे पत्थर साफ दिखायी देते हैं। किनारों पर दस बीस हाथ की चौड़ाई तक घने कमल छाये थे। कमल इतने थे कि किनारा पर जल दिखायी ही नहीं देता था। किनारा पर खड़े 'मजनूं' के घने पेड़ झील पर झुके हुए थे। ऐसी जगहों में नाव कमल के फूलों के ऊपर से फिसलती चली जाती है। किनारा पर झुके मजनूं की कोमल शाखायें नाव में बैठे लोगों का सहलाती रहती हैं। किनारा आने पर कमल दब जाते हैं। जान पड़ता है, नाव कमलों पर ही टिकी है। नाव के आगे निकल जाने पर कमल फिर सिर उठा लेते हैं। डल का विस्तार छः मील लम्बा और प्रायः दो मील चौड़ा है। हवा चलने पर ऊंची-ऊंची लहरें भी उठने लगती हैं। क्षितिज पर चारों ओर दूर-दूर नीली पहाड़ियां घिरी हुई हैं और उनके पीछे से बरफानी चोटियां झांकती दिखाई देती हैं।

झील की शीतल लहरों पर धूप बड़ी सुहावनी लगती थी। योरोपियन स्त्री-पुरुष दिन भर उस स्वच्छ जल में किलोल करते दिखायी देते थे। मैं घटों शिकारे में बैठा कमलों के फूलों और लहराते हुए नील जल पर फिसलता था।

बम के मसाले का नुस्खा मिल सकने का विश्वास हो गया था। वापिस लौट कर मुझे उसी काम में लगना था। बम का मसाला बना लेने के बाद उसका उपयोग भी निश्चित था, वाइसराय की स्पेशल ट्रेन के नीचे विस्फोट करके वायसराय की ट्रेन उड़ा देना। अनुमान था, यह घटना दिल्ली के आस-पास ही करनी होगी। यह मालूम था गवर्नरों या वाइसराय की स्पेशल ट्रेन गुजरते समय लाइन के दोनों ओर जबर्दस्त पहरा रहता है।

मन ही मन निश्चय कर लिया कि वाइसराय की ट्रेन के नीचे बम विस्फोट के लिये मैं स्वयं जाऊंगा। भगवती भाई पीछे रहेंगे। वाइसराय की ट्रेन के नीचे बम विस्फोट करने के बाद या तो मुझे पकड़ने का यत्न करने वाले लोगों से लड़ता हुआ मारा जाऊंगा या गिरफ्तार हो जाने पर फांसी पर चढ़ाया जाऊंगा। मैं आराम से शिकारे की कुरसी पर पसरा हुआ हाथ में कोई पुस्तक लिये आंखें नील जल या कमलों की ओर लगाये उन परिस्थितियों की कल्पना करता रहता। हर हालत में मृत्यु निश्चित थी, पुलिस की गोली से या फांसी के तख्ते पर। बम का मसाला बनाने की विधि आ जाने पर इस काम में देर न लगेगी। अनुमान था बहुत विलम्ब हो जायगा तो तीन मास।

मेरी कल्पना में तीन मास से अभिप्राय था—वाइसराय के शिमला से दिल्ली लौटते समय ही हम यह घटना कर डालेंगे। मेरी वे कल्पनायें अभी तक स्मृति

में सजीव है। मन ही मन सोचता—संसार के स्वर्ग कश्मीर के सुन्दरतम स्थान में कमल के फूलों पर नाव में बिहार करता हुआ मैं अपने ही गले के लिये फांसी की रस्सी बट रहा हूं—इस कल्पना से मेरे ओठों पर मुस्कराहट आ जाती।

ऐसा सुख और विश्राम और विलास मैंने उस समय तक के अपने छोटे से जीवन में कभी अनुभव नहीं किया था। उस समय भी मैं ऐसी स्थिति को अपना अधिकार या भाग नहीं मान रहा था। स्वयं अपनी मृत्यु की तैयारी के मार्ग पर मैं सुख और विलास का ऐसे ही अनुभव कर रहा था जैसे कुछ वर्ष रंगमंच पर राजा भोज की भूमिका करने के लिये राजा जैसा वेश और मुद्रा धारण करके और वैसा ही व्यवहार करके भी मैं भूल नहीं गया था कि मैं राजा नहीं हूं या अब १९५२ में गत मास अपने लिखे नाटक 'नशे नशे की बात' की भूमिका में शराबी का अभिनय करने पर मुझे नशा अनुभव नहीं हुआ था। वैसा ही वह विहार और विश्राम था। हमारे आध्यात्मवादी विचारों ने संसार में इसी प्रकार 'पद्मपत्रमिवाम्भसी'* रह कर संसार को माया समझने का उपदेश दिया है। मैं उस समय भी संसार को माया नहीं समझ रहा था। अपने देश की माया को जिसे अंग्रेज हमसे छीने हुए थे वापिस लौटाने के लिए ही लड़ रहा था परन्तु मेरा विश्वास है मैं निर्लिप्त था।

देवदत्त जी एक दिन दोपहर बाद आये। उन की जेब में एक कागज पर कुछ नोट अंग्रेजी में लिये हुए थे। उन्होंने पहिले मुझे विस्फोट का सिद्धांत समझाया उसके बाद पिक्रिक एसिड बनाने की रासायनिक प्रक्रिया मौखिक समझायी और फिर अपने हाथ से वह सब लिख लेने के लिए कहा। सावधानी के लिये उन्होंने मुझे आवश्यक पुस्तकों के नाम और पृष्ठ भी लिखा दिये। इस काम में दो ही दिन लगे।

अगले ही दिन मैं दोपहर के समय श्रीनगर से रावलपिंडी के लिये रवाना हो गया। कश्मीर के अनुपम सौन्दर्य को अनुभव तो कर रहा था परन्तु वह मुझे रोक न सका। कह चुका हूं श्रीनगर में मोटर के अड्डे पर पंजाब खुफिया-पुलिस की काफी भीड़ रहती थी इसलिये चाहता था कि अड्डे पर प्रतीक्षा न करनी पड़े। अवसरवश मेरे अड्डे पर पहुंचते ही एक ड्राइवर ने बात की—'मुझे अभी रावलपिंडी जाना है। गाड़ी खाली है। चलते हो तो चलो। रुकूंगा नहीं। कोई सवारी रास्ते में मिल गयी तो ले लूंगा।'

मैं उसकी गाड़ी में बैठ गया। वह तुरन्त ही चल भी पड़ा। नगर के अन्तिम भाग में एक मकान के सामने गाड़ी रोक वह दो सवारियों को

* कमल के पत्ते की तरह जल में रह कर भी न भीगना

समीप के मुहल्ले मे बुला लाया। इन म मे एक काले बुरके मे लिपटी बहुत सुडौल नवयुवती थी और दूसरी बडी सी चादर में लिपटी हुई प्रौढा।

इन सवारियो के बैठते ही गाडी की चाल बहुत तेज हो गयी। बुरके मे लिपटी नवयुवती की जो कुछ झलक तिरछी नजर मे मिल सकती थी, मुझे असाधारण आकर्षक जान पडी। ड्राइवर भी जब तब अवसर पा कर, घूम कर उस की एक झलक ले लेने के लिये उत्सुक था। ड्राइवर पर एक नशा-सा सवार था। सन्देह हुआ वाली गाडी को इस चाल मे रावलपिंडी की ओर ले जाने का प्रयोजन इस नवयुवती को भगा ले जाना ही है। गाडी की चाल इतनी तेज थी कि मोडो पर सडक से नीचे गिर जाने की आशका होती थी।

मुझे टोकना पडा—"इतना तेज क्यो चलाते हो! एक्सीडेंट करोगे!"

"देर हो जाने से 'दोमेल' म सडक का फाटक बन्द हो जायगा।" ड्राइवर ने उत्तर दिया।

श्रीनगर मे रावलपिण्डी जाने वाली गाडिया प्राय 'दोमल' या 'कोहाला' म रात काटती थी। रात मे पहाडी सडको पर गाडी चलाने की इजाजत नही थी। 'दोमेल' लाघकर ड्राइवर ने रावलपिंडी की पक्की सडक छोडकर कच्ची पहाडी सडक पकड ली। मैंने टोका—"कहा जा रहे हो!"

'फिक्र न कीजिए। एबटाबाद के रास्ते आप को रावलपिण्डी समय से बहुत पहले ही पहुचा दूगा।"

अब गाडी पश्चिमोत्तर प्रात की सीमा पर चली जा रही थी। सडक कच्ची और खतरनाक परन्तु गाडी की चाल उतनी ही तेज। आकाश म बादल थे इसलिये जल्दी ही अधेरा हो गया। ड्राइवर न मोटर की तेज रोशनी कर ली परन्तु चाल मे कोई कमी नही की। चलते-चलते प्राय आधी रात हो गई थी।

सडक पर सवारी के लिये प्रतीक्षा म खडे एक पठान न हाथ उठा गाडी रोकने का इशारा किया। उसके समीप कुछ गठडी-मुठडी भी दिखायी दी।

गाडी झटके स और तेज हो गयी।

'यह क्या कर रहे हो ? सवारी को बैठा क्यो नही लेते ?" मैंने टोका।

'यह सरहद्दी डाकू है। ड्राइवर ने उत्तर दिया, "सवारी के बहाने गाडी रुकवा कर लूट लेते हैं। गाडी की चाल धीमी हो तो पहिये म गोली मारकर गाडी गिरा लेते है।'

चुप रह जाना पडा। इस खतरे म पडने का कारण वह औरत ही थी।

गाडी चली जा रही थी। वर्षा होने लगी और वर्षा तेज भी हो गयी। उस वर्षा म भी कच्ची सडक पर वह उसी चाल स गाडी चला रहा था। गाडी के भीतर के मन्द प्रकाश म नवयुवती की ओर देखकर उसकी आख चमक उठती। उन आखो म नशे की सुर्खी थी।

एक नाला सामने आ गया। नाले पर पुल नहीं था। पानी गहरा और तेज घुटनों से ऊपर तो होगा ही। ड्राइवर पल भर को रुका।

"बारिश में देर तक ठहरने से तो नाले का पानी और बढ़ जायगा।" ड्राइवर ने चिंता प्रकट की और उसने गाडी नाले में धसा दी। पानी गहरा और तेज था। मोटर के पानी काटने पर पानी पहियों के ऊपर आ रहा था।

मैंने उसके दुस्साहस का विरोध किया—"क्या कर रहे हो जी! इंजन में पानी चला जायगा तो गाडी यहां ही रह जायगी! देखते नहीं हो, खाली गाडी है, वजन कुछ है नहीं, पानी तेज है। अगर गाडी उलट गयी?"

ड्राइवर ने गाडी को पीछे लौटा लिया। कुछ पल वह तेज पानी की ओर घूरता रहा और व्याकुलता से बोला—"बारिश बढ रही है, पानी और गहरा और तेज हो जायगा तो जाने कब तक ठहरना पड़े! मैं अभी पार जाऊंगा।"

"क्या कह रहे हो!" मैंने फिर विरोध किया।

"इतना क्यों डरते हो साहब!" उपेक्षा से ड्राइवर ने उत्तर दिया। डरपोक समझे जाने की ग्लानि ने मुझे चुप करा दिया।

ड्राइवर ने गाडी को तेजी से पीछे ले जाकर घुमाया। गाडी की पीठ नाले की ओर कर वह खूब तेज चाल से 'बैक' करता हुआ नाले में धस गया और पार भी हो गया। गाडी के उलट जाने में कुछ ही कसर रह गयी थी।

मानना पडा, बडा साहसी आदमी है। फिर वितृष्णा अनुभव की—सब साहस इस स्त्री के मोह का नशा है।

स्वयं ही तर्क किया—इतनी मामूली चीज के प्रति अनुराग से मृत्यु के भय की उपेक्षा की जा सकती है। मेरे सामने तो कितनी बडी चीज, पूरे देश की स्वतन्त्रता का आकर्षण और कर्त्तव्य है। उन दिनों मैं प्रत्येक प्रश्न पर इसी तरह तर्क और कल्पना करता रहता था। सम्भवतः अचेतन रूप में यह साहस बटारने का उपाय था। मन में सोचने लगा, कश्मीर से देहली की ओर बढ़ते समय मैं प्रत्येक कदम पर अपनी मृत्यु या फांसी की रस्सी की ओर बढ रहा हूं।

दिन निकलने पर मोटर रावलपिण्डी से पेशावर जाने वाली रेल लाइन के समानान्तर चली जा रही थी। ड्राइवर ने गाडी एक स्टेशन की ओर घुमा दी। पेशावर जाने वाली गाडी रावलपिण्डी की ओर से धुआं छोडती हुई आ रही थी। नवयुवती और प्रौढ़ा यहां उतर गयीं। ड्राइवर एक हसरत भरा सांस खींच कर लौट पडा। अब मोटर के स्टियर पर उस के हाथ ऐसे शिथिल हो रहे थे मानो कलाइयों की हड्डियां टूट गई हों।

रावलपिण्डी से दिल्ली जाते समय एक रात के लिये लाहौर में भी ठहरा। अपने मन में वाइसराय की ट्रेन के नीचे बम-विस्फोट कर सकने की जो आयो-

जना मैंने तैयार की थी उस में इन्द्रपाल से सहायता लेने का विचार था। उस से मिलकर बात पक्की कर लेना चाहता था। इन्द्रपाल ने पूछा—'तुम्हारी जरूरत दल को होगी तो तुम घर-बार छोड़कर आ सकोगे ?"

इन्द्रपाल ने कहा—"मेरे दो छोटे भाई मेरे साथ हैं। जब भी जरूरत हो, मुझे आठ-दस दिन का मौका दे देना ताकि कहीं उन का प्रबन्ध कर सकूँ।"

बम बनाने की विधि पाकर तो उत्साह बढ़ा ही था, इन्द्रपाल के आश्वासन ने और भी अधिक उत्साह दिया।

* * *

दिल्ली और रोहतक में बम बने

भगवती भाई ने मेरे देहली पहुंचने से पूर्व ही ठहरने की जगह का प्रबंध कर लिया था। यह जगह 'नया-बाजार' या श्रद्धानन्द बाजार के बगल की गली में थी। नीचे गोदाम, ऊपर रहने के कमरे। गली से जीना चढ़ कर छोटे से आंगन में खुलता था। आंगन के एक सिरे पर रसोई दूसरे सिरे पर गुसलखाना और पाखाना था। आंगन के दोनों ओर गली की ओर और पिछवाड़े एक-एक कमरा था। हम लोगों का कमरा गली की ओर होने से हवादार था। कमरे के बगल में एक छोटी-सी चार-द्वार कोठरी भी थी। इतनी छोटी थी कि कोने से कोने तक लेटने पर भी पांव नहीं पसारे जा सकते थे।

आंगन की दूसरी ओर के कमरे में एक मास्टर साहब, हिन्दू कालिज में पढ़ने वाला एक विद्यार्थी और देहली सेक्रेटेरियट में काम करने वाले दो बाबू रहते थे। मास्टर साहब का नाम शायद सुन्दरलाल था। स्वभाव और शरीर दोनों से ही गम्भीर। सेक्रेटेरियट के बाबू गिरधारीलाल, देहली के समीप 'फरीदाबाद' के रहने वाले थे। इन लोगों ने भोजन पकाने के लिये एक ब्राह्मण, नाम 'परसादी' रखा हुआ था। भगवती भाई ने इन्हीं से साझा कर लिया था। भोजन अच्छा मिल जाता और बहुत सस्ता।

मैं बम बनाने की विधि का विश्वस्त ब्योरा ले आया हूँ, यह जान भगवती भाई उत्साह से उछल पड़े। हम लोग उमंग से कल्पना में योजना बनाने लगे कि वाइसराय के आने-जाने की तारीख और समय का पता कैसे लगाया जाये। ऐसे समय रेल-लाइन पर चौकसी का क्या प्रबन्ध होता है, विस्फोटक पदार्थ लाइन के नीचे दबाने की सुविधा कैसे होगी? हम दोनों में से कौन, किस रूप में बम चलायेगा? बम कौन चलायेगा, इस प्रश्न पर हम दोनों में उसी समय खींचा-तानी शुरू हो गयी। आखिर तय पाया, पहिले बम तो बन जायं, यह बातें पीछे देखी जायंगी।

देवदत्त से पाई शिक्षा का ब्योरेवार विवरण मैंने भगवती भाई को समझाया।

विवरण सुनकर उन्होंने आत्म-विश्वास से कहा—"मैं रसायन का विद्यार्थी था और इस काम को खूब अच्छी तरह कर लूगा ।" मैंने कहा देखा जायगा, पहिले सामान और उपकरण इकट्ठे किये जायें । हम लोग यह भी चिन्ता करने लगे कि मसाला बनाने की रासायनिक क्रिया के लिये ऐसा स्थान चुना जाय जहा धुयें और गध के कारण पडोसियो का ध्यान आकर्षित होने की आशका न हो ।

भगवती भाई ने सुझाया, बडे शहरो के शकालु आदमियो के पडोस की अपेक्षा किसी छोटे कस्बे मे ही ऐसा काम करने की व्यवस्था करना उचित होगा । देहली के समीप 'रोहतक' मे उनका एक परिचित नवयुवक वैद्य था । वह लाहौर मे वैद्यक सीखते समय नौजवान-भारत सभा के कार्य मे सहयोग देता था । भगवती भाई ने कहा—"यदि यह वैद्य तैयार हो जाय तो वैद्यक दवाइयो के लिए गन्धक, पारा फूकने के बहाने वहा जो चाहे किया जाये, किसी को सन्देह न होगा ।"

भगवती भाई रोहतक जाकर अपने पुराने परिचित वैद्य लेखराम को इस काम के लिए तैयार कर आये तो और अडचन दूर हो गयी । हम लोग देहली मे सामान जुटाने लगे । सीधे दुकान पर जाकर एक ही दिन मे सबकुछ खरीदा जा सकता था परन्तु यह उचित न जचा । शनै-शनै आवश्यक वस्तुये परिचितो द्वारा और कुछ स्वय खरीदने मे दिन लग गये । समय मिलने पर हम लोग 'दिल्ली-मथुरा', 'शाहदरा-गाजियाबाद', 'गाजियाबाद-हापुड' 'दिल्ली अम्बाला' या 'दिल्ली भटिण्डा' लाइनो पर घूम कर देखने का यत्न करते रहते कि गाडी के नीचे बम-विस्फोट के लिये कौन स्थान सुविधाजनक होगा ।

इसी बीच हम लोगो ने पुराने परिचय के आधार पर दल से सहानुभूति रखने वाले कुछ व्यक्ति ढूढ लिये थे । कुछ पैसा भी मिलने लगा था । इस समय अदालत मे भगतसिंह के तर्कपूर्ण ओजस्वी और सजीव बयानो के कारण जनता मे दल के प्रति फिर सहानुभूति और आदर उत्पन्न होने लगा था । मुख्य दल से हम दोनो का अब भी सम्पर्क नही हो पाया था परन्तु स्वतन्त्र सम्बन्ध जमते जा रहे थे । आवश्यकता के समय दस-पाच रुपये मिल जाते थे और अवसर पडने पर रात बिताने की जगह भी हो जाती थी । ऐसे स्थानो को हम लोग शेल्टर (शरण-स्थान) या सोर्स (स्रोत) कहते थे । शेल्टर का बहुत महत्त्व था । किसी कारण सन्दिग्ध हो जाने पर शहर बदने या छोड़े बिना इन जगहो मे छिपा जा सकता था या बाहर से किसी कार्यकर्त्ता को बुलाने पर अपना स्थायी स्थान उसे दिखाये बिना साथी को वहा टिकाया जा सकता था ।

हम लोग अपने प्रति सदेह न होने देने या अपनी ओर ध्यान न आकर्षित होने देने के लिये बहुत सतर्क थे । इस मकान मे भगवती भाई ने अपना परिचय अलीगढ के निवासी डिप्टी-सुपरिन्टेंडेन्ट पुलिस के भतीजे के रूप मे दिया था ।

अपना व्यवसाय उन्होंने आग मे बीमे की एजन्सी बताया था।

भगवती भाई के साथ मैं भी आ टिका तो मेरा परिचय उनके चचेरे भाई के रूप में दिया गया। उनका नाम हरीश्वरसिंह और मेरा नाम जगदीश्वरसिंह था। पड़ोसियो को बताया गया कि मैं एजेन्सी का व्यवसाय सीखने बम्बई गया था परन्तु कम्पनी से झगडा करके लौट आया हू और अब किसी सरकारी नौकरी की प्रतीक्षा मे हू।

भगवती भाई बाहर आते जाते समय सूट पहिनते थे, मकान में रहने समय कुर्ता धोती। यहा हम लोगो की जात ठाकुर या राजपूत थी। हमारे पड़ोसी भगवती भाई को गम्भीर आदमी और मुझे सम्पन्न परिवार का उड़ाऊ गाऊ लड़का समझते थे। पुलिस से सम्बन्ध रखने वाले परिवार के लोग समझे जाने के लिये हम कांग्रेस और कांग्रेसी नेताओ की कटु आलोचना करते रहते थे। इस के दो अभिप्राय थे। एक तो बहम से इन लोगो में राजनैतिक चेतना पैदा करके गांधीवादी राजनीति के प्रति उनका अंध विश्वास तोडना दूसरा अपने आप को सदेह से बचाये रखना।

हमारे पड़ोसी पुलिस के कामों की आलोचना करते तो हमारा उत्तर होता, सरकार और शासन ऐसे ही चलता है। ब्रिटिश गवर्नमेन्ट कोई बनिये बकाल का कारोबार नही है। जनाब, वह साम्राज्य का अनुशासन है। ब्रिटिश सरकार के दमन और अन्यायो का वर्णन हम गर्व के स्वर में करके कहते— यही है तरीका सरकार चलाने का।

उन ही दिनो सध्या समय मैं अपनी जगह लौट रहा था। श्रद्धानन्द बाजार में अर्जुन पत्र के कार्यालय के जीने में घुसते हुए जयचन्द्र जी विद्यालंकार पर नजर पड़ गयी। मुझे भगवती भाई ने सावधान कर दिया— ध्यान रखना जयचन्द्रजी तुम्हे देख पायेंगे तो जरूर ढोडी पीट देंगे कि सी० आई० डी० का आदमी फरार बना हुआ घूम रहा है।

बातचीत में जयचन्द्र जी से मिलने के लिये सुखदेव की सलाह का प्रसंग आया। भगवती भाई ने कहा—अब मौका है सुविधा से मिल लो। शायद कुछ सूत्र मिल ही जायें। यह भगवती भाई के स्वभाव की उदारता का अच्छा उदाहरण है। यदि उन्हें बदनाम करने वाले से भी दल को सहायता मिलने की आशा होती तो वे सहन के लिये तैयार थे।

मैं श्रद्धानन्द बाजार मे इस ढंग से घूमता रहा कि अर्जुन कार्यालय के जीने से उतरने वाले आदमी पर नजर रहे। जयचन्द्र जी जीना उतर कर फतहपुरी की ओर चले। मैं उनके पीछे पीछे हो लिया। अंधेरा हो गया था। सूना स्थान देखकर उन्हें सम्बोधन किया। जयचन्द्र जी जरा चौंके पूछा— 'तुम कहां से आ रहे हो, कोई तुम्हारे पीछे तो नहीं?' कोई मेरा पीछा तो

नहीं कर रहा है ?"

उन्हें विश्वास दिलाया कि वे अर्जुन कार्यालय में आ रहे हैं। मैंने उन्हें जाते भी देखा था और आते भी देखा है। उनका पीछा कोई नहीं कर रहा था। ऐसा होता तो मैं उन से बात न करता। बताया, मेरा भी पीछा कोई नहीं कर रहा है। जयचन्द्रजी को सुखदेव का संदेश देकर सहायता के लिये अनुरोध किया।

"भगवतीचरण कहां है तुम्हें कुछ मालूम है ?" जयचन्द्रजी ने प्रश्न किया।

"सुना था कि दस दिन पहले झांसी में था। शायद वहीं हो।" उत्तर दिया।

"तुम नहीं जानते हो न, जैसा वह आदमी है। बहुत चालाक है! वह फरार बन कर दूसरे फरारों की खोज रहा है। उन से सम्बन्ध स्थापित करके गिरफ्तार करा देगा। उससे बहुत सावधान रहना।"

जयचन्द्र जी को विश्वास दिलाना पड़ा कि मैं भगवतीचरण से बहुत सावधान हूं। उपयुक्त अवसर मिलने पर उसे ठिकाने लगा दिया जायगा। मैं दल के पुराने संगठन से सम्बन्ध स्थापित नहीं कर पाया हूं। अलग-अलग कई दल बनाना उचित नहीं जान पड़ता। मेरे स्रोत और साधन बहुत ही परिमित हैं।

जयचन्द्र जी ने समझाया—"तुम्हें पहिले अपना एक स्वतन्त्र संगठन बनाना चाहिये। तभी मुख्य दल से सम्बन्ध जोड़ना उपयोगी होगा। तुम कहाँ रहते हो, तुम्हारा अपना कैसा संगठन है ?" उन्होंने पूछा।

जयचन्द्र जी का ढंग मुझे उचित न लगा। सम्बन्ध का कोई सूत्र मुझे न बताकर वे मेरा ही भेद लेना चाहते थे। हम लोगों में इस प्रकार की पूछ-ताछ का कायदा नहीं था। यदि वे बताना नहीं चाहते थे तो उन्हें पूछना भी नहीं चाहिये था खैर, उत्तर दिया—"मैं आजकल अम्बाला में हूं। संगठन तो नाम-मात्र ही है।"

"अम्बाला में तुम्हारे साथ कितने आदमी हैं ?" उन्होंने फिर पूछा। मैंने सम्भवत उत्तर दिया था कि अम्बाला में हम चार आदमी हैं। इस पर उन्होंने चारों के नाम और काम भी पूछे। मैंने चार काल्पनिक नाम और उनके काल्पनिक काम भी बता दिये। वे पूछते ही गये और मैं भी बताता गया कि तीन जलन्धर में हैं, उन के भी कुछ नाम और काम बताने पड़े। उन्हों ने फिर पूछा—इस पर मैंने चार आदमी रावलपिंडी में बता दिये और उनके भी काल्पनिक नाम और काम बता दिये।

जयचन्द्र जी ने पूछा—"हथियार भी हैं ?"

"केवल तीन रिवाल्वर हैं।" उत्तर दिया।

मैं यह सब मन्तोषजनक वृत्तान्त उन्हें इसलिये सुना रहा था कि वे मुझे दल से सम्पर्क का सूत्र बनाने योग्य समझ लें। अगर बेईमानी कहा जाय

तो मैं उतना अपराध स्वीकार करता हूँ।

जयचन्द्रजी ने अपने प्रश्न दोहराने शुरू किये। उन्होंने अम्बाला, जलंधर और रावलपिंडी के सभी आदमियों के नाम और काम दोबारा पूछे। मैं उनका अभिप्राय समझ गया कि यदि मैंने झूठ बोला हो तो दुबारा बताने में उखड़ जाऊँगा। मैं उनका पैंतरा समझ रहा था। जयचन्द्र जी ने अपनी जिरह और विश्लेषण में मुझे उखड़ता न देखकर परामर्श दिया कि मैं अपने सदस्यों की संख्या और हथियारों का संग्रह बढ़ाता जाऊँ। सदस्यों का परिचय एक दूसरे से न होने दूँ। स्वयं भारत के भूगोल और धरातल (टापोग्राफी) का गहरा अध्ययन करूँ। जब वे उचित समझेंगे मुझसे सम्पर्क करके भविष्य के बारे में परामर्श दे देंगे। उन्होंने मेरा उपनाम और पता भी याद कर लिया। उन्हें एक पता बता कर मैंने सुझाया कि पता तो मुझे किसी भी समय बदल देना पड़ सकता है।

जयचन्द्रजी से बात समाप्त कर के लौटने को ही था कि अचानक सामने से आते पत्रकार चमनलाल ने हमें बात करते हुए देख लिया। चमनलाल उस समय 'हिन्दुस्तान टाइम्स' या 'नेशनल कॉल' में सम्वाददाता का काम कर रहा था। आजकल भी वह देश-विदेश घूम कर यही काम रहा है।* मकान पर लौट कर भगवती भाई को जयचन्द्र जी से बातचीत की कहानी सुनायी और हम लोग उनकी चतुरता पर हँस-हँस कर लोटपोट होते रहे। भगवती भाई से मैंने यह भी चर्चा कर दी कि जयचन्द्रजी से बात करते समय मुझे चमनलाल ने देख लिया था।

जयचन्द्र जी से इस मुलाकात का और उन की बुद्धिमानी या सज्जनता का फल अगले दिन ही भुगतना पड़ा।

चमनलाल का स्वभाव अब बदल गया होगा परन्तु उस समय वह बहुत चुलबुला और छछूंदर की तरह सूँघते फिरने वाला था। चमनलाल भगवतीचरण को पहले से ही वास्तविक नाम और रूप में जानता था। मेरा परिचय उसे एक फरार, महाराष्ट्र क्रांतिकारी 'दाडेकर' के नाम से दिया गया था।

मैं चमनलाल से जब भी मिलता था अंग्रेज़ी में बात करता था। बीच-बीच में हिन्दुस्तानी भी बोलने तो टूटी-फूटी मराठी ढंग की। वह मुझे महाराष्ट्र का ही समझता था। हमारे उद्देश्य के प्रति सहानुभूति के कारण वह हम लोगों को अपने सामर्थ्य के अनुसार आर्थिक सहायता भी देता रहता। बम बनाने का सामान खरीदने और संगठन जमाने के लिये दिल्ली में हम लोगों ने जो रुपया

---

*यह चमनलाल अब वैराग्य लेकर बौद्ध सन्यासी बन गया है। (१९६६ संस्करण)

इकट्ठा किया था, उस मे सौ-डेढ़-सौ चमनलाल से भी लिया था। एक-दो दिन मे कुछ और देने का भी वायदा था।

अगले दिन ही मैं वायदे का रुपया लेने चमनलाल के यहा पहुचा। उस के क्रोध का ठिकाना न था। चेहरा और आखें लाल कर उस ने मुझे फटकार दिया—"तुम्हारे जैसे धोखेबाजों से मैं बात नही करूगा। भगवतीचरण से भी कह देना कि मुझ से कभी न मिले। मैं तुम लोगो का विश्वास करू और तुम मुझी को धोखा दो।"

बहुत शाति से बार-बार समझाया और पूछा कि हमने क्या धोखा दिया है?

चमनलाल ने बताया—"कल तुम जयचन्द्र से बात कर रहे थे न? मैंने उस से पूछा, तुम इस दाडेकर को कैसे जानते हो?"

'कौन दाडेकर? मैं तो किसी दाडेकर को नही जानता!' जयचन्द्र जी ने विस्मय प्रकट किया।

"अरे, मुझ से क्या छिपाते हो? मैं सब जानता हू।" चमनलाल ने जयचद्र जी से आग्रह किया।

"क्या पागल बनाते हो!" जयचन्द्र जी ने उत्तर दिया, "यह तो यशपाल था, लाहौर-षडयन्त्र का फरार। तुम मुझे बनाना चाहते हो। मैंने तो उसे कालेज मे पढ़ाया है।" दोनो ही बहकावे मे आ सकने का दावा करने लगे। अन्त मे चमनलाल को हार माननी पडी।

चमनलाल को क्रोध आना स्वाभाविक था। मेरे दाडेकर होने की धारणा चमनलाल के मस्तिष्क पर बहुत जोर-जबर से बैठायी गयी थी। देहली मे मुझे भगवती भाई के साथ पहिली बार देखकर और मेरा नाम दाडेकर बताया जाने पर उस ने माथे पर तेवर चढाकर, अपनी स्मृति पर बल डाल सन्देह प्रकट किया था—"दाडेकर? मेरा तो ख्याल है कि मैंने पहले तुम्हे कही देखा है।"

चमनलाल का अनुमान ठीक था। उस ने मुझे तब से सात वर्ष पूर्व, १९२२ मे फिरोजपुर जिला काग्रेस कमेटी के दफ्तर मे देखा था। उन दिनो वह भी काग्रेस का काम कर रहा था। वह किसी प्रयोजन से दफ्तर मे आकर टिका था और उसे बहुत तेज बुखार हो गया था। उस बुखार मे मैंने उसकी सेवा-सुश्रूषा की थी। उस के सिर मे बहुत जोर का दर्द हुआ था। मुझे भी याद था कि बहुत हाय-तोबा उस ने मचायी थी। मैं कभी उस का सिर दबाकर और कभी उसके सिर पर बर्फ रखकर उसकी सहायता कर रहा था। दिल्ली मे सामना होते ही मैं उसे पहचान गया था परन्तु उसे झिझकता देख कर अपना वास्तविक परिचय न देना ही उचित समझा। बकते फिरने की उस की आदत से मैं परिचित था।

चमनलाल को क्रोध था कि उसे जबरदस्ती बहकाया गया। हम लोगो को

उस की बहुत खुशामद करना पड़ा। समझाया— धोखा भ्रम में क्या है। तुम ने लिए जो रुपये थे अपने पास ही रख लिये रहो। अपना अपना पास इसलिए छिपाया कि बातचीत में कहीं तुम चर्चा कर बैठो तो स्वयं भी फंसो और हम भी फंसें।

जो भी हो जयचन्द्र जी की बुद्धिमानी की समझना कठिन था। वे जानते थे कि मैं फरार था। फरार लोग नाम बदल कर ही रहते थे। चमनलाल जब मुझे छोड़कर मान रहा था तो मेरे असली नाम पर जिद करने की क्या आवश्यकता थी? और यह मालूम हो जाने पर कि मैंने उस अपने को दाम्भर बताया है मेरा भेद खोलने के लिए जिद करने का क्या प्रयोजन था? चमनलाल ने हम यह भी बता दिया कि उसने जयचन्द्र जी को भगवती भाई के विरुद्ध खुफिया पुलिस का आदमी होने का प्रचार करने के लिये बहुत फटकारा और भगवती भाई के मेल जोल का प्रमाण दिया है कि भगवती और यशपाल साथ साथ रहते हैं। यदि भगवती सी० आई० डी० का आदमी होता तो यशपाल गिरफ्तार हो गया होता। चमनलाल की बात सुनकर हम लोग और भी हंसे कि जयचन्द्र जी को भी मुझ पर किताना सन्देह आया होगा।

मुझे अपने इस व्यवहार के लिए कोई ग्लानि अनुभव न हुई क्योंकि जयचन्द्र जी की धूर्तता का उपाय करने के लिये ही मुझे ऐसा व्यवहार करना पड़ा था।

× × ×

बम का मसाला बनाने के रासायनिक उपकरण और सामग्री जमा हो जाने पर प्रश्न उठा कि मसाला बनाने के लिए रोहतक कौन जाय? भगवती भाई यह काम स्वयं करना चाहते थे। उनकी इस इच्छा का कारण बहुत सीधा था। देवदत्तजी ने यह भी स्पष्ट बता दिया था कि बड़े पैमाने पर कई दिन तक यह काम करना स्वास्थ्य के लिये बहुत हानिकारक होगा। कुछ क्रियात्मक अनुभव हम लोगों को लाहौर में हो ही चुका था। बड़े बड़े कारखानों में जहां यह पदार्थ टनों के परिमाण में बनते हैं काम करने वाले लोग इन पदार्थों के वाष्प से सुरक्षित रहते हैं। स्वास्थ्य की हानि के अतिरिक्त पकड़े जाने पर सीधे जेल पहुंचने में या पुलिस से पकड़े जाने पर लड़ाई में मारे जाने में तो कोई सन्देह था ही नहीं।

भगवती इस बीच कलकत्ते जाकर किरण से दूसरी पिस्तौल भी ले आये थे। अब हम दोनों सशस्त्र रहते थे। मेरी जिद थी कि मसाला बनाने का काम मैं करूं। सम्भव है इसमें अपनी चतुरता का अभिमान रहा हो परन्तु मेरा तर्क था—जो भी आदमी मसाला बनाने जायगा उसे तीन हफ्ते या महीना भर वहीं जमे रहना होगा। भगवती भाई उस समय भी कानपुर में स्वर्गीय

गणेशशकर जी विद्यार्थी की मारफत चन्द्रशेखर आजाद और दल के पुराने साथियो म सम्बन्ध जोडने के प्रयत्न मे लग हुए थे।

मैंने कहा—"तुम्हारा यह आवश्यक काम रुक जायगा दूसरी बात यह कि बम का मसाला बनाने के लिय रोहतक म मुझे या तुम को वैद्य जी के नौकर के रूप म काम करना होगा। तुम्हारा रूप-रग नौकर जैसा नही जचेगा। चश्मा उतार कर तुम चल भी नही पाओग।" और आखिर म वही तक कि मेरी अपेक्षा तुम्हारे पकडे जाने मे दल की अधिक हानि होगी।

आखिर भगवती मान गये। व एक दिन रोहतक जाकर वैद्य लेखराम को दिल्ली बुला लाय ताकि मेरा और लेखराम का परिचय तथा रोहतक मे काम करने का ढग निश्चित हो जाय।

लेखराम को जब बताया गया कि मै रोहतक म उस के नौकर के रूप म काम करूगा तो उसे विस्मय हुआ। साथी लेखराम, गोरे रग का लम्बा-तडग, इकहरे पुष्ट शरीर का नौजवान था। रोहतक जैसे देहाती नगर के ख्याल से वह अच्छे भद्र-नागरिक वेश—महीन धोती, रेशमी कमीज, कोट और साफा पहिनता था। दिल्ली म उसने मुझे देखा था—सूट, कालर टाई, चश्मा और हैट पहिने, छोटी छोटी तितलीनुमा मूछे रखे। उसने आपत्ति की—"तुम नौकर कैसे लगोग?"

भगवती भाई के कहने क अनुसार रोहतक म लेखराम ने एक कच्चा मकान अपने मकान और दूकान स अलग दवाई बनाने के काम क लिय ले लिया था। उसने पास-पडोस और परिचितो मे कह दिया था कि वह शीघ्र ही बहुत बढिया-बढिया दवाइया पारे, लोहे, चादी, सोने और मूगे की भस्म आदि बनाने का काम शुरू करगा। लेखराम का आधा सामान लेकर रोहतक लौट जाने और तीन-चार दिन बाद आकर मुझे साथ ले जाने की सलाह दी गयी। कुछ दिन मैंने हजामत न बनायी और जब बनायी तो लम्बी-लम्बी मूछे रहने दी। भगवती भाई लाहौर म छोटी हुई आधी-आधी मूछें रखते थे। दिल्ली मे वे मूछो को बढाकर और चटाकर रखने लगे थे।

पडोसियों का ध्यान मेरे मूछ परिवर्तन की ओर कैसे न जाता!

मेरी मूछो के परिवर्तन के सम्बन्ध म उत्सुकता प्रकट करने पर भगवती भाई न कह दिया—"जनखो की तरह मूछ-मुडे रहना ठाकुरो को शोभा नहीं देता।"

चार-पाच दिन बाद लेखराम रोहतक से मुझे लिवाने के लिए आया तो एक मोटी-मैली धोती, मोटे कपडे का कुरता और हरे रग की लम्बी पगडी साथ लेता आया था। पडोसियो का ध्यान आकर्षित न करने के लिये हम लोगों ने रात के समय चलने का निश्चय किया। रात नौ-साढे-नौ बजे मैंने कुर्ता-

दयापूर्वक मुझे पढ़ा देना स्वीकार कर लिया।

साथी लेखराम दुकान से घर की ओर जाते समय या दुकान पर आते समय कोई बकसा, बोरी या कनस्तर मेरे सिर पर उठवा देता था। यह आवश्यकता के कारण नहीं था बल्कि इसलिये कि पड़ोसियों को विश्वास रहे कि मैं निश्चय ही उसका नौकर हूं। ऐसे ही एक दिन मैं उस के पीछे-पीछे चला जा रहा था। बाजार में उस के एक मित्र से उस की भेंट हो गयी। वह मित्र पान, सोडा, शरबत की दुकान के सामने लोहे की कुर्सी पर बैठा कुछ पी रहा था।

लेखराम के मित्र ने उसे भी साथ की कुर्सी पर बैठा लिया और एक लेमोनेड या सोडा उस को देने के लिये दुकानदार को आदेश दे दिया।

मैं सिर पर कनस्तर उठाये खड़ा था। लेखराम ने मेरी ओर घूम कर पूछा—"क्यों बे किसना, तू भी पीयेगा साडावाटर ?"

"पीलूंगा महाराज।" उत्तर दिया।

'ऐ है, सोडा पियेगा। बड़ा शौकीन है। साले कभी तेरे बाप ने भी पिया है सोडा।" लेखराम बोला और दुकानदार को आदेश दिया, "अच्छा भाई, इसे भी पिलाओ सोडा। चल, एक अद्धा दे दे इसे।"

दुकानदार ने उन दोनों मित्रों को तो सोडा-लेमोनेड की बोतलें कायदे से गिलास में उंढेल कर बरफ छोड़ कर दी और एक आधी बोतल खोल कर मुझे बोतल ही थमा दी।

मैं कनस्तर सड़क पर रख कर खड़ा-खड़ा मुंह उठा कर बोतल पीने लगा। इस पर लेखराम ने मेरी ओर घूम कर फटकार दिया—"देखो तो, बैल की तरह खड़ा डकार रहा है। बैठ कर क्यों नहीं पीता!" मुझे सड़क पर ही बैठ जाना पड़ा।

अपने कारखाने में पहुंच कर मैंने किवाड़ भीतर से बन्द करके लेखराम को दस-पांच घूंसे और लातें लगा कर उस की शरारत का बदला दिया। बाजार में वह मालिक और मैं नौकर था। कारखाने में मैं उस्ताद और वह चेला था। प्रायः ही ऐसा होता था कि घर आकर वह वायदा करता कि बाजार और दुकान पर तंग नहीं करेगा लेकिन बाहर निकलने पर फिर वही हरकत दोहराता। घर के भीतर वह मेरे साथ दूसरा ही व्यवहार करता और मजाक से खुशामद में 'बड़े भाई' कहने लगता।

लेखराम प्रायः ही दोपहर का खाना खाने घर न जाता। अपने छोटे भाई से कारखाने में ही खाना मंगवा लेता। लेखराम की बहू एक थाली में अपने पति के लिये परौठे, घी में छौंकी हुई दाल, तरकारी भेज देती और मेरे लिये प्रायः खुश्क रोटियां और कटोरी में दाल। मकान की सांकल भीतर से बन्द

खयाल रहता था कि तेजाबों की विषैली गैस का बुरा प्रभाव मेरे स्वास्थ्य पर न पड़े। वह प्रायः नित्य ही सुबह कारखाने का चक्कर लगाने आता तो एक कुल्हड़ में आधा सेर दही या दूध मेरे लिये ले आता और साथ ही ताजा 'हिन्दुस्तान टाइम्स' अखबार भी।

उन दिनों लाहौर में हमारे साथियों—भगतसिंह आदि के मुकद्दमे चल रहे थे। क्रान्तिकारी बन्दियों के अनशन के कारण मुकद्दमा स्थगित था। अनशन उचित सम्मानजनक व्यवहार की माँग के लिये किया गया था। इस से पूर्व जेलों में राजनैतिक और साधारण कैदियों की श्रेणियाँ अलग-अलग स्वीकार की जा चुकी थीं। ब्रिटिश सरकार सम्पन्न लोगों और नेताओं के साथ तो जेल में अच्छा व्यवहार करती थी, उन्हें मनमाना खाने-पहिनने की सुविधा देती थी और निम्न वर्ग के कैदियों को अनादर का व्यवहार और बहुत खराब खाना कपड़ा दिया जाता था।

राजनैतिक बन्दियों में से सम्पन्न लोगों के साथ और निम्न-आर्थिक वर्ग के लोगों के साथ व्यवहार में कितना बड़ा भेद था, इस का अनुमान पण्डित नेहरू की आत्मकथा में उन के पिता मोतीलाल जी के साथ पूना जेल में किये जाने वाले व्यवहार के वर्णन से हो सकता है। नेहरू जी ने बड़े गर्व से लिखा है कि मोतीलाल जी को बड़ा आदमी मान कर उन्हें अपने भोजन के लिये आवश्यक पदार्थों की सूची बना देने के लिये कहा गया था। बहुत साधारण रूप में मोतीलाल जी ने जो चीजें अपने व्यवहार के लिये बतायीं, उन के व्यय के अनुमान से जेल के सुपरिटेन्डेन्ट अंग्रेज मेजर या कर्नल साहब अवाक् मुँह खोले रह गये। शायद मोतीलाल जी या पंडित नेहरू जी ने इस भेद का विरोध किया हो, याद नहीं पड़ता।

ब्रिटिश सरकार केवल कांग्रेसी लोगों को ही राजनैतिक कैदी मानना चाहती थी, सशस्त्र क्रान्ति का प्रयत्न करने वाले लोगों को नहीं। क्रान्तिकारियों को गांधी जी भी हिंसक कहते थे। क्रान्तिकारी बन्दियों की माँग थी कि हम लोग अनाचारी अपराधी नहीं हैं, हम लोग राजनैतिक बन्दी हैं, एक प्रकार से युद्ध-बन्दी हैं। हमारे साथ भद्र-जनोचित व्यवहार होना चाहिये। हमें वैसा ही खाना-कपड़ा मिलना चाहिए जैसा कि भद्र-समाज के लोग व्यवहार करते हैं। सरकार इस माँग को स्वीकार नहीं कर रही थी इसलिये क्रान्तिकारी बन्दी अनशन कर रहे थे।

अनशन को सब क्रान्तिकारी बड़ी सफलता से निभा नहीं पा रहे थे। हम लोगों के विचार में अनशन आध्यात्मिक शक्ति का या हृदय परिवर्तन का साधन न था। हम अनशन को जनसाधारण की सहानुभूति द्वारा सरकार पर दबाव डालने का ही साधन मानते थे। इसीसे निश्चय किया कि

पहले दो बंदी, सब लोगों के प्रतिनिधि के रूप में आमरण अनशन करें। इन की मृत्यु हो जाने पर दूसरे दो साथी अनशन आरम्भ कर दें। इस प्रकार अनशन के कारण जनता में होने वाला आन्दोलन भी जारी रहेगा और अभियुक्तों में से दो के अदालत में उपस्थित न होने के कारण मुकदमा भी महीनों स्थगित रहेगा।

यह अनशन हमारे दल के प्रचार-क्रम का एक महत्वपूर्ण अंग भी था। यह बात हम ने गांधी जी के अनशनों के प्रभावों और परिणामों से सीखी थी। मैं यह नहीं कह रहा हूं कि गांधी जी के अनशन का उद्देश्य आध्यात्मिक तत्व के अतिरिक्त कुछ और रहता था। सब से चिन्ताजनक बात थी हमारे साथी यतीन्द्रनाथ दास का बीमारी की अवस्था में लम्बा अनशन।

शान्तिरागियों के अनशन के समय रबड़ की नलियों से उनकी नाक की राह पेट में दूध पहुंचाया जाता था। राजनैतिक बन्दी इस का विरोध करते थे। नित्य चार-चार, पांच-पांच आदमी उन का शरीर दबा लेते थे और नाक के रास्ते पेट में दूध पहुंचा दिया जाता था लेकिन इस खटका-पटकी में रबड़ की नली शरीर के भीतर गलत जगह भी पहुंच जाती थी और उस से भयंकर यातना और रोग हो जाता था। ऐसे ही यतीन्द्रनाथ के फेफड़े में दूध चला गया था और उन्हें निमोनिया हो गया था। उन की अवस्था चिन्ताजनक थी। जनता में शान्तिरागियों की मांग पूरी की जाने के लिए जोर शोर से आन्दोलन चल रहा था और ब्रिटिश सरकार के अत्याचार के विरुद्ध खूब घृणा फैल रही थी।

एक दिन पत्र में समाचार आया कि यतीन्द्रनाथ की मृत्यु हो गयी। अभियुक्तों की डिफेन्स कमेटी की मांग पर यतीन्द्रनाथ दास का शव लाहौर में उपस्थित उन के भाई किरण दास को सौंप दिया गया। इस शव का जुलूस निकाला गया। अखबारों में छपे वर्णन के अनुसार लाहौर में इस जुलूस में लाखों की भीड़ सम्मिलित हुई थी और यतीन्द्रनाथ की अर्थी पर फेंके गये फूलों के सड़कों पर कुचल जाने से कीचड़ हो गया था। यतीन्द्रनाथ का यह जुलूस लाहौर से कलकत्ते तक पहुंचा। दुर्गा भाभी, भगतसिंह के पिता और किरण शव के साथ कलकत्ता गये थे। रास्ते भर प्रत्येक स्टेशन पर अर्थी के दर्शन के लिए बहुत बड़ी भीड़ जमा हो जाती थी।

रोहतक के जेल के कारावास में जनता द्वारा यतीन्द्रनाथ की अर्थी के अनुपम उत्साहपूर्ण सत्कार का समाचार पढ़ कर मेरे मन में विचित्र, परस्परविरोधी अनुभूतियां हुईं। यतीन्द्रनाथ के बलिदान पर मैंने दल के एक साथी के रूप में गर्व अनुभव किया। जनता का यह आदर हमारे दल की नैतिक विजय और ब्रिटिश सरकार की निन्दा थी परन्तु इस के साथ ही मुझे ऐसा अनुभव हुआ

कि यतीन्द्रनाथ का सत्कार करके जनता ने उस के बलिदान का मूल्य चुका दिया। हम लोग जनता का ध्यान आकर्षित किये बिना, अपने को मिटाकर गुप्त रूप से अपने कर्तव्य के लिये बलिदान हो रहे थे। मन म भावना थी कि हम अपने बलिदान का कोई मूल्य नही चाहते। उस बलिदान का मूल्य जनता द्वारा जबरदस्ती द दिये जाने पर मुझे चोट-सी लगी। जान पडा कि बिना मूल्य पाये बलिदान होने की हमारी प्रतिज्ञा को जनता न बलात तोड दिया। मैं स्वय और यतीन्द्रनाथ तथा अन्य साथियो को एक ही सगठित अस्तित्व क अग समझता था।

रोहतक मे मैं अपढ समझा जाता था इसलिये अखबार छिपाकर ही पढना था। एक रोज मैं अखबार पढ रहा था कि लेखराम का छोटा भाई खाना लकर आ गया। जीने पर उस के कदमो की आहट मै सुन न सका। सामने आ जाने पर ही उसे देख पाया। उस ने मुझे अखबार लिये देखा तो बहुत कौतूहल से पुकार उठा—"वाह! किसना अखबार पढ रहा है!"

"भैया देखू सू।" मैंने मूर्खतापूर्ण मुस्कराहट से उस की ओर देखकर उत्तर दिया और अखबार म छपे एक चित्र की ओर सकेत करके पूछा, "जे महातिमा गाधी भैया?"

'धत्त, पागल! महात्मा गाधी ऐसे होते है?" उत्तर मिला।

उस मकान मे लेखराम, उसके छोटे भाई और लेखराम के नौकर के अतिरिक्त एक ही व्यक्ति और आता था, एक पनिहारिन। खूब जवान और हृष्ट-पुष्ट। बहुत बडा घडा सिर पर उठाये धम-धम करती चली आती थी। बम का मसाला धोने के काम मे पानी बहुत व्यय होना था इसलिये एक बडा मटका और दो तीन घडे पानी के लिये रखे हुए थे। पनिहारिन घडे लाकर मटके मे उडेल देती थी और खाली घडे भी भर कर रख जाती थी। पनिहारिन शायद प्रति बडे घडे का एक पैसा के हिसाब स मजदूरी लेती थी।

किसना के भोले और बुद्धू होने की प्रसिद्धि पनिहारिन भी सुन चुकी थी। पानी का भारी घडा लेकर पहुचती तो आते ही आवाज देती—"अरे किसन, जल्दी उतरना घडा।"

मकान बनाते समय मैं केवल लगोट बाधे रहता था। मध्यम श्रेणी के सस्कारो के कारण उचित कपडे पहिने बिना स्त्री के सामने और इतने समीप जाने मे सकोच होता परन्तु वह झुझलाकर चिल्लाती—"मर गया तू, जल्दी दौड, मेरी गर्दन टूट रही है।" उस की सहायता के लिये जाना ही पडता।

पनिहारिन बडे मटके मे दो घडे उडेल कर तीन घडे गिनना चाहती थी। यदि मैं दो पर जिद करता तो हाथ मटकाकर आत्मीयता मे गाली देती—"मुए, गिनना भी जाने मैं!"

गिनती पनिहारिन खुद नहीं जानती थी। घड़े रखने की जगह के समीप कच्ची दीवार पर कोयले के टुकड़े से घड़ों की संख्या के हिसाब से चिह्न बनाती जाती थी। जब मैं देखता कि उसने तीन की जगह चार चिह्न बना लिये हैं तो गाली मिटती न उसके फालतू चिह्न मिटा देता। पनिहारिन भोली घड़ा लाने के बाद कुछ देर सुस्ताने के लिये बैठ भी जाती और मेरे बाल बच्चों और घर वालों के बारे में पूछती रहती। मैं जान बूझ कर मूर्खतापूर्ण उत्तर देता और वह हँस हँस कर लोट पोट हो जाती।

क्नोगेपिररट आ गानकाटन कापी मैं ना मैं बना लिया था। दिल्ली लौटने की तैयारी ही थी। उस दिन आखिरी थान धोकर सूखने के लिए रखा था। संध्या समय लेखराम की दूकान पर उसका एक परिचित व्यक्ति आया। जिस मुहल्ले में हमारा कारखाना था उसी मुहल्ले का नाम लेकर बोला— वहाँ पुलिस वाले आज जाने क्या में घूम फिर रहे हैं?

खबर सुन कर मेरे और लेखराम दोनों के रोंगटे खड़े हो गये परन्तु उस व्यक्ति के सम्मुख कोई चिन्ता प्रकट न की। इस व्यक्ति का नाम था लक्ष्मणदास। वह रोहतक की कांग्रेस कमेटी का मंत्री था। लक्ष्मणदास के जाते ही लेखराम ने परेशानी से मुझ से पूछा— अब?

उत्तर दिया— तैयार मसाला तो गीला सूखा बाँध कर एक दम भाग चलो। शेष सामान पर ताला लगा दिया जाय। यदि रात में कुछ होगा तो कम से कम मसाला और हम लोग तो बच जायेंगे।

मैं मसाला समेटने और बाँधने लगा। लेखराम से कहा— तुम लक्ष्मणदास को समझा दो कि बहुत जरूरी काम से अचानक मथुरा जा रहे हो। वह तुम्हारे घरवालों को चिन्ता न करने और रोहतक से बाहर जाने की बात किसी से न कहने के लिये समझा दे। लक्ष्मणदास को यह भी कह दो कि दो दिन बाद दिल्ली बराथ मारकेट में लाला गिरधारीलाल गुप्त के मकान पर आकर शाम को तीन बजे मिले। वह कारण पूछे तो कह देना कि वहीं बताऊँगा।

लगभग सूर्यास्त का समय था। हम लोग गीला सूखा मसाला बाँधकर और शेष सामान पर ताला लगा कर दिल्ली जाने वाली सड़क पर चल दिये। लेखराम ने भी रास्ते के देहाती जैसा वेष बना लिया था। सामान की गठरियाँ दोनों के सिर पर थीं। एक बस दिल्ली की ओर जाती दिखायी दी। उसे रुकने के लिए इशारा किया। गाड़ी खड़ी होने पर देखा उसमें तीन पुलिस सिपाही बैठे हुए थे। हम को मसाला लेकर उनके साथ बैठते कुछ संकोच हुआ परन्तु बस को पुकार चुके थे। दामों के बारे में झगड़ा किया कि बस वाला बिठाने से इन्कार कर दे। बस वाला हमारी मूर्खता पर कुछ गालियाँ देकर उतने ही दामों में बिठाने पर तैयार हो गया। बैठना पड़ा। सिपाहियों

का ध्यान हमारी ओर गया ही नहीं। बस में एक खूब जवान स्त्री बैठी थी। सिपाही उसे देख कर गा रहे थे—'होने-हौले चाल डिरेवर मेरा जोबन हाले रे! (यौवन हिलता है)।'

सिपाहियों की बात में सहयोग देकर उन्हें प्रसन्न करने के लिए मैंने बड़े भोलेपन से सुझाव दिया—'जोबन हाले है तो हलने दियो जमादारजी कौन घी ह के डुल जायगा। गाड्डी क्यों हौली करो सो?'

"वाह रे चौधरी! वाह पट्ठे!' सिपाही ने बड़े उत्साह से मेरी पीठ ठोंक दी। हंसते बोलते रात के लगभग साढ़े नौ बजे दिल्ली में अपनी जगह आ पहुंचे।

भगवती भाई ने हमारे रोहतक से निकल आने का समर्थन किया। रोहतक में क्या बीती यह जानने की चिन्ता तो मन में लगी ही थी। दो दिन बाद लक्ष्मणदास का दिया पता पर मिलने के लिए पहुंचे। लक्ष्मणदास ने बताया कि उस सन्ध्या उस मोहल्ले में पुलिस के सूंघते फिरने का कारण एक भागी हुई औरत की तलाश थी। इस बात से तो निश्चित हुए परन्तु चिन्ता का एक और कारण लक्ष्मणदास ने बता दिया।

लखराम के अचानक घर से खबर दिये बिना भाग जाने से उस की स्त्री बेहाल हो गयी थी। अब पति के न लौटने तक अनशन ठान किये बैठी थी।

बम के मसाले के लिए रासायनिक सामग्री खरीदने के लिये तथा दल के दूसरे कामों में सहायता के लिये लखराम ने घरवालों से लेकर दो ढाई सौ रुपया हमें दिया था। रुपये की जरूरत का कोई कारण वह बहू को बतला न सका था। इसके अतिरिक्त उसको कई बार अचानक दिल्ली आना जाना पड़ जाता था। पिछले मास रात में घर न जाकर कभी कभी मेरे साथ कारखाने में ही रह जाता था। अपनी कमायी भी अब वह प्यार से बहू के हाथ में सौंप कर हम लोगों को ही हवाले कर देता था। बहू को सन्देह हो गया था कि अब तक उस पर जान देने वाला उसका पति किसी डायन के फरेब में फंस गया है।

खयालीराम गुप्त के मकान पर हम लोग लक्ष्मणदास से मिलने गये तो वह लखराम को पहचान कर मुस्कराया तो अवश्य परन्तु कुछ कह न पाया।

लखराम उस के संकोच का कारण समझ कर बोला—'अरे, डरते क्यों हो, यह किसना ही तो है।'

लक्ष्मणदास लखराम की बात न समझ कर चुप ही रहा।

लेखराम ने फिर अपनी बात दोहरायी। लक्ष्मणदास ने मेरी ओर देखा, पर देख न सका। साफ सुथरा सूट, चुस्त कालर टाई चश्मा, खूब ढंग से सवारे हुए बाल और सफाचट दाढ़ी मूंछ। लखराम की बात उसकी कल्पना में ही नहीं समा रही थी।

लेखराम मुझे बता चुका था कि लक्ष्मणदास बहुत भरोसे का आदमी है और

गाडी का इन्जन बमों के ऊपर पहुंचे नियुक्त आदमी बैटरी का बटन दबा कर बमों में चिनगारी दे दे। हमारी कल्पना के अनुसार इन्जन के उलटने से गाडी अवश्य गिर जानी चाहिये थी। ऐसी अवस्था में कोलाहल पैदा हो जाने पर बम का विस्फोट करने वाला व्यक्ति दिल्ली की ओर भाग जा सकता था।

यह बात हमारे ध्यान से नहीं चूकी थी कि लाइन के समानान्तर जाने वाली सड़क दिल्ली के समीप आकर कई स्थानों पर रेल लाइन को लांघती है। यहां सड़क पर रेल का फाटक है। गाड़ी के गुजरने से पहिले यह फाटक बन्द हो जाता है और गाड़ी निकल जाने के बाद ही खुलता है। यह आवश्यक था कि बम विस्फोट करके लौटते हुए आदमी को यह फाटक बन्द मिलता। इस फाटक को तोड़ कर खुलवाना पड़ता। इस तरह से हमारा साथी मारा भी जा सकता था और पकड़ा भी जा सकता था। हम लोगों ने यह निश्चय किया कि बम विस्फोट करने के बाद दिल्ली को लौटने वाला हमारा साथी फौजी अफसर की पोशाक में रहे ताकि घटनास्थल से कुछ ही कदम गुजरने पर उस पर शक न जाय और रेल का फाटक खुलवाने में उस का फौजी रोबदाब भी काम आ सके। यह भी आवश्यक था कि घटनास्थल से दिल्ली तक पहुंचने में कम से कम समय लगे। इस काम के लिये साइकिल के बजाय मोटर साइकिल अधिक उपयुक्त थी। फौजी अफसर का साइकिल के बजाय मोटर साइकिल पर सवार होना ही अधिक जंचता था।

रेल लाइन के नीचे बम रात के समय ही दबाये जा सकते थे। रात में सवारी गाड़ियां लगभग किस किस समय उस स्थान से गुजरती हैं यह तो रेलवे टाइमटेबुल देख कर ही मालूम हो गया परन्तु मालगाड़ियों के गुजरने का समय कैसे पता लगता? इस के लिये हमारे विचार में आवश्यक था कि कोई व्यक्ति कुछ दिनों तक चौबीसों घण्टे रेलवे लाइन के समीप रह कर परिस्थिति का निरीक्षण करे। इस काम के लिये नियत आदमी के ठहरने के लिये हमने दिल्ली से मथुरा जाती सडक के किनारे, रेल लाइन के बिलकुल पास मुगलों के समय की एक आधी गिरी हुयी सराय या पडाव खोज लिया। इस सराय के सामने लगभग बीस कदम पर एक छोटा कुआं भी है।

अब ऐसे आदमी की जरूरत हुई जो साधू का वेष धर कर इस खंडहर सराय में धूनी रमा ले और चौबीसों घण्टे इस स्थान की परिस्थितियों का निरीक्षण करे। मैं और भगवती भाई दोनों ही इस काम के लिये तैयार थे परन्तु हम दोनों को और भी बीसियों काम थे — मोटर साइकिल खरीदना, उसे खूब तेज चला सकने का अभ्यास करना, तारों और बैटरी का प्रबंध करना, नये स्थापित सम्बन्धों को कायम रखना, रुपया इकट्ठा करना आदि आदि।

अभी तक भगवती भाई का ख्याल था कि बम-विस्फोट के अपने हाथों

करेंगे और मेरा ख्याल था कि मैं करूंगा। जो कार्ड भी इस काम को करना, साधू बन कर यहां नहीं बैठ सकता था। सद मुड़ाये साधू का तुरन्त फौजी अफसर के रूप में बदल जाना कैसे सम्भव होता! मैंने काम के लिये लाहौर से इन्द्रपाल को बुलाना निश्चय किया।

इन्द्रपाल पत्र पाते ही आ गया। पत्र में अपने रहने की जगह का पता लिख देना उचित न था। उसे फ्रन्टियर मेल से आने के लिये लिखा था और समझा दिया था कि गाडी दिल्ली स्टेशन पर सुबह साढ़े सात बजे पहुंचेगी। वह साढ़े आठ तक दिल्ली जेल के सामने, किला फिरोजशाह तुगलक में पहुंच जाये। तुगलक का किला दिल्ली के ऐतिहासिक दर्शनीय स्थानों में से है। वहां अनेक सैलानी दर्शक आते-जाते रहते हैं। मैं कुछ मिनट पहले ही वहां पहुंच गया था।

इन्द्रपाल समय पर आया। हम दोनों घूम फिर कर किला देखते हुये बातचीत करने लगे। किले के एक आकर्षक स्थान पर पहुंच कर उस ने कहा—"यहां मेरी एक फोटो तो ले लें!"

"जब समय आयेगा फोटो भी ले लेंगे!" उत्तर दिया।

उस ने आग्रह किया—"नहीं, अभी लो!"

मैंने कैमरे का केस खोल कर उसे दिखाया। कैमरा नहीं था। किसी परिचित के यहां से कैमरे का खाली केस उठा लिया था कि ऐसी जगह में शौकीन सैलानी दर्शक समझा जाऊं। इन्द्रपाल से मैंने कहा—"अब तुम्हारे लिये घर छोड़ कर फरार हो जाने का समय आ गया है।"

"तुम मेरी परिस्थिति समझ लो और जैसा कहो।" इन्द्रपाल ने उत्तर दिया, "मेरे दोनों भाइयों का मेरे सिवा और कोई नहीं है। वे बारह और आठ बरस के हैं। अभी सप्ताह भर पहिले मेरी सगाई भी हो गयी है।

'खैर, एक या दो महीने के लिये तो आ सकते हो!" मैंने पूछा। अगस्त का महीना था। विचार था कि अक्तूबर के अन्त से पहिले हम काम पूरा कर लेंगे।

"आ जाऊंगा। तुम मेरे दोनों भाइयों के लिये दो महीने के गुजारे का प्रबन्ध कर दो। पिछले दिनों मुझ पर बहुत खर्च पड़ते रहे हैं। इस समय मेरे पास पैसा नहीं है। आने-जाने में भी खर्च होता है।"

"कितना रुपया तुम्हें चाहिये?" मैंने पूछा।

इन्द्रपाल ने हिसाब लगा कर बीस रुपये मांगे। तब रुपये का मूल्य अब से बहुत था।

मैंने दस रुपये इन्द्रपाल को उसी समय दे दिये और एक पुरजा लिख दिया—इसे बीस रुपये दे दिये जायें। दस्तखत कर दिये 'प्राणनाथ'। उसे समझा दिया—जब मैं तुम्हें दिल्ली आने के लिये लिखूं, दुर्गा भाभी या बहिन प्रेमवती से रुपये

ले लेना। तुम्हें लगभग सितम्बर में आना पड़ेगा।

इन्द्रपाल को मैंने यह नहीं बताया कि उसे आकर करना क्या होगा, न उस ने पूछा। इस प्रकार की पूछताछ हम लोग उचित नहीं समझते थे। इन्द्रपाल अनुशासन का पक्का था। उस से अपनी दिल्ली की जगह पर भी नहीं ले गया क्योंकि आवश्यक न था। इन्द्रपाल लाहौर से चमड़े का एक छोटा सूटकेस साथ लाया था। यह सूटकेस देखने में छोटा परन्तु बहुत भारी था। इस में सुन्दर से ढलवाये हुये छोटे बमों के खोल थे। सूटकेस मैंने अपने हाथ में ले लिया और इन्द्रपाल को स्टेशन पर पहुंचा कर दोपहर की गाड़ी से लाहौर लौटा दिया।

ऊपर 'प्राणनाथ' के नाम से हस्ताक्षर करने की बात आयी है। यह भी रोचक कहानी है। लाहौर से पहिली बार फरार होते समय इन्द्रपाल के पते पर पत्र-व्यवहार का प्रबन्ध कर गया था कि 'प्राणनाथ' के नाम से पत्र लिखूंगा। यह नाम सोच कर नहीं चुना गया था।

एक दिन सुशीला जी ने पूछ लिया—"यह क्या ऊटपटांग नाम तुमने चुना है। पुकारने में शोर मालूम होती है।"

मजाक में उत्तर दिया—"क्या करूं। ऐसी आशा नहीं कि जिन्दगी में मुझे कोई 'प्राणनाथ' कहेगा इसलिये मैंने नाम ही रख लिया है कि सभी को कहना पड़े।"

"धत्त, असभ्य आदमी।" यह कह कर सुशीला जी ने फटकार दिया।

उन की धारणा बन गयी कि मैं 'सभ्य आदमी' नहीं हूं और जब कभी मेरे नाम का ही व्यवहार करती। देहली में मेरा नाम प्राणनाथ नहीं जगदीश ही चलता था।

सितम्बर में मैंने इन्द्रपाल को देहली आ जाने के लिये लिखा। इस बार उसे दिल्ली पहुंचने के एक घण्टे बाद चांदनी चौक में एक आधुनिक ढंग के रेस्तरां 'मानसरोवर' में मिलने के लिये लिखा था। मैं उससे कुछ मिनट पहले ही पहुंच गया ताकि उसे परेशानी न हो। चाय पीकर हम लोग 'फतेहपुरी' बाजार की एक धर्मशाला में गये। उसके साथ घूमते-घूमते मैंने उसे बताया कि तुम्हें डेढ़ या दो महीने तक साधू के रूप और वेष में रहना होगा। वहां रहकर जैसे मैं कहूं, परिस्थिति का निरीक्षण कर खबर देनी होगी। मैं या भगवतीचरण समय-समय पर आकर तुमसे मिलते रहेंगे।

इन्द्रपाल के प्रस्ताव स्वीकार कर लेने पर हम दोनों बाइसिकलों पर दिल्ली से मथुरा जाने वाली सड़क पर गये। दिल्ली से नौ मील दूर सड़क के किनारे रेल लाइन के समीप इन्द्रपाल को मुगलों के समय की टूटी-फूटी सराय दिखा कर बताया, यहां तुम रह सकते हो। यहां दोनों तरफ समीप गांव भी है। गांव

वालो का विश्वास पाने के लिये तुम्हे भिक्षा माग कर निर्वाह करना होगा। मैं या भगवतीचरण आकर कुछ न कुछ पहुचा ही दिया करेंगे।

इन्द्रपाल उस बियाबान म अकेला रहने के लिये तैयार हो गया। अब भी उसे वहा रहने का प्रयोजन नही बताया गया। अगले दिन उस के साधू बन जाने की बात तय हुई। दोपहर बाद मैं और भगवती भाई मथुरा की सडक पर कौरवो-पाण्डवो के किले म पहुचे। इन्द्रपाल वहा पहिले से मौजूद था। वह सिर और दाढी-मूछ मुडा आया था। हम लोग साधू की आवश्यक साज-सज्जा, भगवे रग मे रगी पुरानी धोती, एक काला कम्बल, कमण्डल, चिमटा, चिलम और पाव भर तम्बाकू लेते गये थ। इन्द्रपाल न किले के खण्डहरो म एक सून स्थान म वेष बदल लिया और 'तेहखड, की ओर सडक के किनारे टूटी सराय मे धूनी रमाने के लिये चल दिया। हम ने उसे दो रोज मे आकर खबर लने का आश्वासन दिया और उसके कपडो की पोटली अपने साथ ले कर लौट गये।

तीन दिन बाद मैं साइकिल पर इन्द्रपाल से मिलने गया। सूर्यास्त म कुछ समय शेष था। वह सराय के सामने कुए की जगत पर केवल कोपीन-मात्र बाधे बैठा था। उसका चहरा उतरा हुआ जान पडा। कुए की जगत के नीचे आस-पास के गावो के दो तीन आदमी बैठे चिलम पी रहे थे। उन लोगो के सामने मैंने इन्द्रपाल को 'बाबा जी' सम्बोधन कर उसके चरण छूकर प्रणाम किया।

'खुश रहो बच्चा।" इन्द्रपाल ने मुझे आशीर्वाद दिया और प्रश्न किया, "कहो सेठ, कैसे आये ?"

साधू के दर्शनो के लिये। मैं साधारण स्थिति के दुकानदार की-सी पोशाक मे बन्द गले का कोट, धोती और काली किश्तीनुमा टोपी पहिन कर गया था। समीप बैठे लोगो को दिखाने के लिये मैं श्रद्धा से इन्द्रपाल के सामने भूमि पर बैठ गया और बोला—"कल बडे मुनीम जी मथुरा मे बस मे लौटे तो उन्होने बताया कि महाराज यहा दिखायी दिये थे, सो दर्शन करने के लिये चला आया हू। महाराज की कृपा मे अब घर म तबीयत बहुत अच्छी है। महाराज कभी फिर हमारी झोपडी पवित्र करे।"

समीप बैठे लोगो से मैं बोला—'महाराज शहर के भीड भडाके मे नही रहते। जोगी-तपसी है। दिल्ली म तो बडे-बडे लोग महाराज के चरणो की धूलि के लिये तरसते है। चढती जवानी म ससार की माया छोड बैठे है पर भगवान ने ऐसी सिद्धी दी है कि जो मुह से निकल जाय, पूरा हो जाता है। इन की चुटकी मे बडी करामात है। हमारी घरवाली चार बरस से मादी थी, पानी भी नही पचता था। महाराज की भभूत की तीन चुटकी मे ठीक हो गयी।" फिर हाथ जोड कर इन्द्रपाल से विनय की, "महाराज, एक चुटकी और दे देते तो घर वाली की काया मे जरा बल आ जाता।"

इन्द्रपाल ने गम्भीरता से उत्तर दिया—"दस-पांच दिन और देखो, अपने आप ठीक हो जायगा।"

बैठा-बैठा मैं इन्द्रपाल से बात करता रहा—"महाराज, बाजार बड़ा मन्दा जा रहा है। कारोबार कुछ रह नहीं गया। कभी कुछ बता देते तो भला हो जाता गरीब का।"

मैं प्रतीक्षा कर रहा था कि समीप बैठे लोग उठे तो कुछ काम-काज की बात करूं। वे लोग सूर्यास्त हो जाने पर ही गये। उन लोगों के जाने पर इन्द्रपाल ने बताया कि वह बड़ी मुसीबत में है। जब से यहां आया है, भूखा है। समीप के गांव में भिक्षा के लिये गया तो अवश्य था परन्तु संकोच से मांग नहीं सका। केवल एक ही घर के दरवाजे पर पुकार लगायी। किसी ने ध्यान नहीं दिया। जिस घर पर पुकार लगायी, घर वाली ने सिर्फ एक मुट्ठी आटा लाकर कमंडल में डाल दिया था। वह आटा उस ने उसी गांव के लोगों के सामने चींटियों के भिट पर डाल दिया था। दूसरे दिन दूसरे घर पर पुकार लगायी। फिर एक ही मुट्ठी आटा भिक्षा में मिला। वह भी उस ने चींटियों को ही चरा दिया। बस पानी पर ही निर्वाह था। भूख मारने के लिये बराबर चिलम पीने से उस के सिर में दर्द हो गया था। चला-फिरा नहीं जा रहा था।

सुनकर बहुत दुख हुआ। तेजी से साइकिल पर लौटा और भगवती भाई को परिस्थिति बतायी। उसी समय 'परौंठे वाली गली' से दस-बारह परौंठे, साग-सब्जी, एक कुल्हड़ में कुछ दही और खुश्क मिठाई, जो जल्दी खराब न हो जाये लेकर भगवती भाई साइकिल पर तेहखंड में इन्द्रपाल की कुटिया पर पहुंचे और इन्द्रपाल को भोजन कराया। दो-तीन दिन अपनी भिक्षा के आटे से इन्द्रपाल चींटियों को ही भोजन कराता रहा था।

गांव वालों ने विस्मय प्रकट किया—"महाराज क्या आप कुछ नहीं खायेंगे?"

इन्द्रपाल ने उदारता से उत्तर दिया—"बच्चा, यह भी शिव जी की सृष्टि है। इस का भी पेट भरना चाहिये। जब थोड़ा भोजन हो तो छोटे जीव का पेट भरता है, अधिक भोजन हो तो बड़े जीव का।"

समीपी गांवों के लोगों पर उसके व्यवहार का बहुत प्रभाव पड़ा। वह एक ही घर से भिक्षा मांगने के प्रन पर दृढ़ रहा परन्तु अब वह जिस द्वार पर पुकार लगाता, यथेष्ट भिक्षा मिल जाती। कभी-कभी लोग स्वयं ही कुटिया पर भोजन पहुंचा देते।

कुएं से पानी निकालने के लिये एक रस्सी, कुछ गोलियां एस्प्रीन की, एक शीशी अमृतधारा, हिन्दी रामायण, एक पुस्तक हिन्दी हस्तरेखा और एक व्याघ्र चर्म हम लोगों ने इन्द्रपाल को पहुंचा दिया। मैं भगवती भाई प्रायः ही दिल्ली

के लाला लोगों के वेष में जाकर देहातियों के सामने 'बाबा जी' के प्रति श्रद्धा प्रकट करते रहते थे।

इन्द्रपाल समीप के गांव मदनपुर और तेहखंड में रामायण की कथा भी बाचने लगा। लोग उस से दवा-दारू भी लेने लगे। कोई अपने भाग्य की बात भी पूछने आ जाता। वह कभी किसी से कुछ न मांगता। उस के कहने से गांव वालों ने कुछ घड़े पेड़ के नीचे कुएं पर लाकर रख दिये थे। वह स्वयं या गांव वाले कुएं से पानी खींच कर इन घड़ों को भर देते और 'बाबाजी' आते-जातों को जल पिलाते रहते।

बाबा जी के डेरे टूटी सराय के समीप ही रेल लाइन के फाटक के चौकीदार चेतराम की गफलत से दो जानवर रेल से कट गये थे। वह आकर इन्द्रपाल के सामने रोया, अब क्या होगा।"

इन्द्रपाल ने एक मिनिट आंख मूंदकर आदेश दिया—"प्याऊ पर बैठकर राम-नाम जपते रहो। दस प्यासों को पानी पिलाये बिना मत उठना। तेरा कुछ नहीं बिगड़ेगा।"

चौकीदार ने आदेश पूरा किया। अवसर की बात वह केवल आठ आने जुरमाना देकर छूट भी गया। कान, दांत सिर या कमर की दरद की शिकायत करने वाले आते तो इन्द्रपाल 'एस्प्रीन' की पिसी हुई गोलियां अपनी धूनी की भस्म में मिला कर दे देता। यह दवाइयां देते समय थोड़ा बहुत पाखण्ड भी अवश्य करता, उदाहरणतः आंख मूंद कर बीमार के सिर को झटका दे देना या आकाश की ओर देख कर चुटकी बजा कर 'जा' कह देना।

आरम्भ में तेहखंड के प्याऊ पर इन्द्रपाल को काफी असुविधा हुई। भूखा रहा, मच्छरों ने तंग किया। सब से बढ़ कर उस वियाबान और खण्डहर में सांपों का भय था। एक बार तो सांप पर उस का पांव ही पड़ गया था। अपने परिचित एक डाक्टर से हमने सांप काटने की जो दवाई मिल सकी, वह भी उसे पहुंचा दी थी। सब कष्ट सहकर भी इन्द्रपाल ने कोई शिकायत न की, न यह जिज्ञासा की कि उसे वहां व्यर्थ में कष्ट झेलने के लिये क्यों रखा गया है। पास-पड़ोस के गांवों के लोगों को उस के प्रति श्रद्धा हो गयी। लोगों ने प्याऊ के आस-पास की जगह खूब साफ कर दी। गांव-देहात में जिस प्रकार का भोजन मिल सकता था, उस की भी उसे कमी न रही।

हम लोगों ने अपनी योजना अनुसार एक पुरानी फौजी मोटर साइकिल लगभग सवातीन सौ रुपये में खरीद ली थी। इस मोटर साइकिल पर अभ्यास करने के लिये मैं तेहखंड के प्याऊ के समीप सड़क पर से मथुरा की ओर आता-जाता रहता था। मोटर साइकिल पर इन्द्रपाल के समीप से गुजरता तो साहबी ढंग के कपड़े पहिने रहता था इसलिये उससे बात करने के लिये खड़ा न होता,

केवल देख भर लेगा कि वह मजे में है। दो अवसरों पर कुछ जरूरी सन्देश देने के लिये ही वहां खड़ा भी हुआ। खड़ा होने का बहाना यह किया कि मोटर साइकिल के इंजन में पानी भरना आवश्यक है। देहाती बेचारे यह नहीं जानते थे कि मोटरकार के इंजन की तरह, मोटर साइकिल के इंजन में पानी नहीं भरा जाता। उस में पानी के लिये कोई स्थान ही नहीं होता। मैं मोटरसाइकिल के आगे 'कारबाइड' लैम्प में पानी भरवा लेता था।

साधारणतः मैं इन्द्रपाल के यहां ताता लोगों जैसी पोशाक में ही जाता था। मुझे साहब की पोशाक में दफ्तर इन्द्रपाल के भक्तों ने कभी पहिचानने की चेष्टा नहीं की। साधारणतः लोग शायद कपड़े और व्यवहार ही देखते हैं चेहरे नहीं। हमारा अपना भाव ही हम गनर्व किये रहता है।

इन्द्रपाल को लगभग कोई तीन सप्ताह नेहरुड की प्याऊ में सब कष्टों के बीच रख कर भी यह न बताया गया था कि उस वहां क्या करना था। यह सावधानी इसलिये थी कि इन्द्रपाल स्थानीय संकटों से ऊब कर चल दे तो उसे रहस्य बताना व्यर्थ होगा। इन्द्रपाल ने क्रान्तिकारियों के योग्य दृढ़ता और निष्ठा का परिचय दिया। सब योजना तैयार थी। हमारे सूत्रों से यह भी पता लग चुका था कि वाइसराय अक्टूबर के दूसरे हफ्ते में बम्बई जा रहे थे। चार-पांच दिन बाद वहां से चौबीस अक्टूबर को लौटेंगे। सब संयोग जुट जाने पर काम कर डालने का निश्चय कर लिया था।

वाइसराय की गाड़ी के नीचे बम विस्फोट कौन करेगा, यह निश्चय करने में अब विलम्ब नहीं किया जा सकता था। उस आदमी के नाप की फौजी वर्दी तुरन्त बनवा लेनी चाहिये थी। विस्फोट स्वयं करने के लिये जितने तर्क मैंने दिये उन का सार यही था कि मेरी अपेक्षा दल के लिए भगवती भाई का अधिक दिन बचे रहना उपयोगी होगा। उन्हों ने एक नया तर्क पेश किया—"मेरे लिये काम कर सकने में सबसे बड़ी अड़चन जयचन्द्र द्वारा मेरे विरुद्ध किया गया प्रचार है। यदि तुम वह काम करते हुए मारे गये, जिस की पूरी आशा है तो मेरे लिये यह एक कलंक बन जायगा कि मैंने तुम्हें भेज कर मरवा दिया है।"

इस रोज बहस में जरा गरमा-गरमी हो गयी। कुछ झुंझलाकर मैंने उत्तर दिया—"क्या बचकानी दलीलें देते हो! कौन ऐसा मूर्ख है जो यह विश्वास कर लेगा कि सी० आई० डी० के आदमी ने वाइसराय की ट्रेन के नीचे बम चलवा दिया। सी० आई० डी० का काम बम चलवाना नहीं, ऐसी घटना के पूर्व ही घटना की योजना को पकड़वा देना है।"

भगवती भाई मुस्कुरा दिये और मुझे बाहों में लेकर बोले—"यार, तुम से पार पाना मुश्किल है!" उसी समय हम लोग नयी दिल्ली 'कनाट-सरकस' में गये। मेरे लिये खाकी जीन की फौजी अफसर की वर्दी का नाप दे दिया गया।

सब तैयारी हो चुकी थी। हम लोगों ने निश्चय किया था कि भगवती भाई एक बार फिर कानपुर जाकर गणेशशंकर विद्यार्थी द्वारा आजाद से सम्पर्क स्थापित करने की चेष्टा करें।

अभिप्राय था कि हमारी योजना या प्रयत्न को एक व्यक्तिगत चीज न समझ लिया जाये। इस घटना का हिसप्रस की ओर से सरकारी दमन का विरोध माना जाये। हिसप्रस के कमाण्डर-इन-चीफ (आजाद) के नाम से इस अवसर पर घोषणा प्रकाशित हो। कानपुर से भगवती भाई को झांसी में आजाद के गुप्त साथी सदाशिवराव व भाई शंकरराव का पता मिल गया। वे झांसी पहुंचे। वहां पता लगा कि आजाद ग्वालियर में थे और उनके साथी और आजाद आर्थिक कठिनाई के कारण बहुत परेशान थे।

भगवती भाई ने आजाद को सन्देश भिजवाया कि पंजाब और दिल्ली में स्थिति उतनी खराब नहीं है। वहां साथियों के लिए शरण का और कुछ रुपये का भी प्रबन्ध हो सकता है। हम लोग आजाद से आवश्यक परामर्श के लिये मिलना चाहते हैं और फिलहाल सहायता के लिये पांच सौ रुपया तुरन्त ही दे सकेंगे। उत्तर आने में कुछ समय लगना आवश्यक था। चार दिन बाद फिर कानपुर आकर पता लेने की बात कह कर वे दिल्ली लौट आये। दल और आजाद से सम्बन्ध हो जाने की हम पूरी आशा हो गयी।

कुछ दिन पहले मैं इन्द्रपाल से कह आया था कि विशेष रूप से सतर्क रह-कर, रात में दस बजे से पांच बजे तक जाग कर यह पता ले कि दिल्ली या मथुरा से किस-किस समय सवारी या माल की गाड़ियां आती जाती हैं। वह उस स्थान पर कई दिन रह चुका था। रेल-लाइन की देख-भाल और मरम्मत के सम्बन्ध में सभी बातें जान गया था। उन दिनों रात में ग्यारह बजे के बाद सुबह पांच बजे तक उस लाइन पर सवारी गाड़ियां न गुजरती थीं। वह समय माल गाड़ियों के आने-जाने का था। एक दिन इन्द्रपाल को सावधान कर दिया कि वह आने वाली रात किसी मुसाफिर को अपने पास टिक जाने के लिये उत्साहित न करे। उससे पूर्व एक-दो बार कुछ मुसाफिर उस के यहां टिक चुके थे। उसे बताया कि आज रात मैं देहली से बम लाऊंगा। हम दोनों मिल कर उन्हें रेल के लाइन के नीचे दबा देंगे। यह जानकर कि हम लोग वाइसराय की गाड़ी के नीचे बम विस्फोट कर रहे हैं, इन्द्रपाल को बहुत उत्साह हुआ। प्रसन्नता से चमकती आंखों और गद्‌गद् स्वर में बोला—"यार, यह काम हो जाय तो मैंने जो कष्ट सहा है, उसे कुछ भी न समझूंगा।"

उसी रात साढ़े नौ बजे के लगभग पीतल के बड़े-बड़े लोटों में बने दो बम और रेल लाइन के नीचे कंकड़ पत्थर कूटकर कड़ी बना दी गयी जमीन को खोद सकने के लिये खुरपी, एक बड़ा ड्रिल (लोहे में छेद करने का बरमा), एक

छोटा सम्बल आदि सामान साइकिल के पीछे बाध कर मैं दिल्ली से तेहखड पहुचा। क्वार की रातें थी। पूर्णिमा ही रही हो या उस से एक दो दिन आगे-पीछे। इन्द्रपाल टूटी हुयी सराय के सामने कुयें की जगत पर चादनी में बैठा मेरी प्रतीक्षा कर रहा था। उसे बम दिखला कर कहा—'इन्हें लाइन के नीचे गाडना है।"

बम देख कर इन्द्रपाल के नेत्र उत्साह से चमक उठे। तुरन्त लाइन पर जाकर काम आरम्भ कर देना उचित न था। ग्यारह बजे तक दो गाडियां लाइन पर से गुजरने वाली थी। उस के बाद चार घण्टे तक हम निर्विघ्न लाइन के नीचे गढे खोद कर उनमे बमों को दबा कर गढे पाट दन और लाइन के नीचे बिछी रोडी को फिर जैसा का तैसा बना देने का काम कर सकते थे। रात में तीन बजे के बाद पहिले दो मालगाडियां ही गुजरती थीं। यह भी ख्याल था कि यदि मसाले को शान्त बनाने में कोई भूल-चूक रह गयी हो तो सवारियों की जान का नुकसान न होकर मालगाडी पर ही चोट पड़े, व्यर्थ की नर-हत्या न हो।

लगभग सवा या डेढ घण्टे प्रतीक्षा का समय काटने के लिये हम दोनों ने खंडहर सराय की छत पर आकर बैठने का निश्चय किया। साइकिल को सराय के भीतर के घन अधेरे में छिपा दिया। छत पर बैठने के लिये इन्द्रपाल का कम्बल और बाघ-चर्म ले लिया। बमों की गठरी को भी साथ ऊपर लेते गये। सराय में कोने पर दीवार गिरी हुयी थी इसलिये ऊपर चढ जाने में कोई कठिनाई न हुयी।

खरीफ की फसल कट चुकी थी। सराय के चारों ओर दूर-दूर तक सब ओर सूखे खेत खाली पडे थे। आस-पास की रेतीली जमीन चादनी में खूब चमक रही थी। सूखी घास या छोटी-मोटी झाडियां धरती के रंग में ही मिल गयी थी। सडक के किनारे के बडे-बडे वृक्ष भी सराय की छत पर से चादनी में चमचमाते पौधे से ही जान पड रहे थे। वृक्षों की छाया उन के नीचे ही सिमटी हुयी थी। सराय के एक ओर समीप तारकोल बिछी काली सडक और दूसरी ओर लगभग तीन सौ कदम पर रेल लाइन की फौलादी जंजीर भी चादनी में चमचमा रही थी। शीतल उज्ज्वल चादनी भरपूर बरस रही थी। केवल टिटिहरी की आवाज ही कभी-कभी सुनसान रात की चुप्पी को भंग कर जाती थी।

मैं और इन्द्रपाल छत पर बैठ कर समय बिताने के लिये बेतकल्लुफी में गप्प लडाने लगे। ख्याल था कि यहा कोई हमारी बात नहीं सुन सकता है। बातें भी क्या थीं, लाहौर की घटनाओं को याद कर बडे जोर-शोर से दोनों कहकहे लगा रहे थे। हसी से लोट पोट होकर दोनों की आखों से पानी भर-भर आता था।

"कौन है? खबरदार! हाथ न हिलाना!" कडे और ऊंचे स्वर में डपट

सुनायी दी। आवाज़ टूटी हुई दीवार मे सराय की छत पर चढ़न के रास्ते से सुनायी दी थी। उस ओर दृष्टि गयी तो देखा, मुंडेर से ऊपर वर्दी पहिने पुलिस के दो सिपाही सिर उठाये हम लोगो को अपनी बन्दूकों का निशाना बनाये है।

ऐसी हालत मे घबराहट कैसे न होती। मेरी कमर मे पिस्तोल तो जरूर था लेकिन हाथ हिलाने का अवसर तो चाहिये था।

इन्द्रपाल मुझे कोहनी से सकेत कर धीमे से बोला— "पिस्तौल!"

चुप रहने का इशारा कर मैंने बहुत भोले ढग से सिपाहियों को सम्बोधन किया—"आप कौन लोग हो हुजूर?"

"तुम कौन हो?" सिपाहियो ने और कड़े स्वर मे डाटा। उन का उत्तर इन्द्रपाल ने बहुत धैर्य स दिया, "हम साधू महात्मा है। महीना दिन से यहा धूनी लगा रहे हैं। तुम लोग किसे ढूढ रहे हो?"

सिपाहियो ने मेरी ओर सकेत किया—"यह कौन है?"

"एक भगत है।" इन्द्रपाल ने उत्तर दिया।

मैं हाथ जोड, गिड़गिड़ा कर कोहनिया और कन्धे जनमो की तरह हिलाते हुये बोला—"हुजूर माई-बाप हो। हम तो मथुरा जी के वनिये है।" बात करते-करते मैं खड़ा भी हो गया और कूद सकने का अवसर देखने के लिये सराय के नीचे आस-पास जमीन पर नजर डाली। देखा, नीचे दस-बारह आदमी लाठिया लिये प्याऊ को घेरे खड़े थे। अब पिस्तौल की अपेक्षा पहले बात बना सकने के चातुर्य पर ही भरोसा उचित था।

इन्द्रपाल ने सिपाहियो को फिर सम्बोधन किया—"हम साधू महात्मा है। आप लोग सरकार है। आप को साधू महात्मा को सताना नहीं चाहिये। आप लोगों का काम हमारी रक्षा करता है।"

सिपाहियों ने उसे उत्तर दिया—"बाबा, हम तुम्हे कुछ नहीं कहते। तुम राम का नाम जपो, धूनी रमाओ लेकिन चोर-डाकू तुम्हारे यहा आयेंगे तो उन्हे तो पकड़ना ही पड़ेगा।"

"यह चोर-डाकू है!" इन्द्रपाल ने बहुत विस्मय प्रकट किया और फिर मुझे सम्बोधन किया, "क्यो बे, तू चोर-डाकू है?"

मैं फिर हाथ जोडकर गिड़गिड़ाया—"नहीं बाबा जी, हम तो मथुरा जी के वनिये है। सच्ची जानो, बाबा जी जमुना मैया की सौगन्द, चल कर मथुरा जी मे हमारे मुहल्ले मे पूछ लो। सब लोग जानते है कि हम बड़े गरीब वनिये है।"

इन्द्रपाल ने करुणा प्रकट कर मेरी सिफारिश की—"यह साला क्या चोर-डाकू होगा?"

आगे बढ आये सिपाहियों मे से एक ने उसे उत्तर दिया—"बाबाजी, तुम

क्या जानो ? यह बम का गोला फेंकने वाला बदमाश है। बन रहा है। आज-कल ऐसे बहुत से बदमाश फरार हैं।"

"अपने हाथ तो दिखा बे !" सिपाही ने हुक्म दिया।

रोहतक में बम का मसाला बनाते समय पिक्रिक एसिड के स्पर्श से हाथों पर जो लाली चढ़ गयी थी वह अभी तक शेष थी। सिपाही छत की मुंडेर लांघ कर हम लोगों के बिल्कुल समीप आ गये थे। बार-बार हाथ जोड़ते समय मेरे हाथों की लाली आगे बढ़े सिपाही को दिखायी दे गयी होगी। उन में से एक अब भी बन्दूक की नली हमारी ओर किये बगल में थामे था परन्तु दूसरे ने बन्दूक का कुन्दा छत पर टेक दिया था।

सिपाही ने प्रश्न किया—"तू बम का गोला नहीं फेंकता तो हाथ लाल कैसे हैं ?"

सिपाही के उस ज्ञान का आधार या स्रोत क्या था, मैं नहीं समझ सका। उन दिनों कुछ समय पूर्व बहुत जगह क्रान्तिकारी लोग गिरफ्तार हुए। सम्भव है उनमें से किसी के हाथ पिक्रिक एसिड के प्रभाव से लाल रहे हों या किसी मुखबिर ने यह भेद दे दिया हो। फरारों को पकड़ने के लिये ऐसी पहिचान पुलिस के अधिकारी साधारण सिपाहियों को बताते रहते होंगे। हाथों की लाली के कारण ही किसी व्यक्ति का सम्बन्ध बम बनाने के काम से समझ लेना चाहे न्याय संगत न रहा हो परन्तु मेरे बारे में तो यह अनुमान ठीक ही था। सिपाही के ऐसा ठीक अनुमान कर लेने पर मुझे घबराहट भी अवश्य हुई परन्तु अवसर पिस्तौल पर भरोसा करने का न था इसलिये और भी अधिक गिड़गिड़ाहट से हाथ जोड़ विनती की—"हजूर, भौजाई ने मेंहदी पिसवाई थी, मैंने भी ललक सी लगा ली जिससे हाथ लाल हो रहे हैं।"

इन्द्रपाल ने क्रोध में फटकारा—'अबे हीजड़े, शरम नहीं आती, मर्द होके बयरबानी (औरत) के लिए मेंहदी पीसता है !"

मैंने रुआंसा हो उत्तर दिया—'महाराज, क्या करें गरीब आदमी हैं। भौजाई का कहना नहीं करूं तो भैया मार कर घर से निकाल देते हैं। एक बार तो उठा कर मूसल मार दिया था।' मैंने सिर आगे बढ़ा कर दिखाया, "यह देखो !"

सिपाहियों को मेरे व्यवहार से मेरे निकम्मे और कमजोर आदमी होने का विश्वास हो गया। उन्हों ने फिर डांटा—"साले मेंहदी लगायी है कि सुल्फा भी पीता है ?" उसने मेरा हाथ सूंघ कर देखा।

गिड़गिड़ाकर मैंने स्वीकार किया—'महाराज कभी-कभी ऐसे ही साधू-सन्त मन्दिर में आकर बैठते हैं तो साधू संगत में पी लेता हूं।'

सिपाहियों ने वास्तविकता भांपने के लिए मेरे घर-बार, कारोबार और मां-बाप का ब्योरा पूछना शुरू किया। मैं गिड़गिड़ाते और आंखें पोंछते-पोंछते

बहुत ब्योरे से अपनी करुण कथा सुना दी कि रग जी के मन्दिर से आगे नीचे वाली गली मे सिद्धे साहू की लाल हवेली के पास मकान है। मा-बाप दोनों ही बचपन मे मर गये थे। दो बडे भाई है। मुझे कुछ टिस्मा नहीं देत। बडी भौजाई बहुत तग करती है सो मैं कारोबार ढूढने दिल्ली जा रहा था। इन बाबा जी का बडा जस सुना था कि बडा अच्छा सट्टा बता देत हैं सो दर्शन के तई ठहर गया।"

सिपाही 'भारतीय दडविधान' की सभी धारायें रटे हुए था। बोला—"तुझे तो थाने ले जाना ही पडेगा। कैसे छोड सकते हैं! मुनफा तू पीता है, सट्टा तू करता है और फिर तू बिना कारोबार के घूम रहा है। दफा १०९ में भी तेरा चालान करना ही पडेगा। तू हमारे साथ 'बदरपुर' के थाने मे चल। कोई तेरा जमानत देने वाला होगा तो छुडा ले जायगा।'

एक सिपाही ने अपनी कमर मे लिपटी हथकडी और जजीर खोल कर मेरी ओर बढायी—'चल, हाथ बढा!"

मैं छिटक कर, भय दिखाते हुए उससे दूर हट गया। सिपाही की इस दृढता से मेरा धैर्य हिलने लगा था। आम् पोछने के लिए धोती का छोर उठाने के बहाने एक बार पिस्तौल को छू भी चुका था परन्तु एक बार फिर यत्न किया और गिडगिडाकर बोला—"हजूर, थाने मे जाने से मेरी जात बिगड जायगी। फिर भौजाई घर मे नही रखेगी। बिरादरी बाहर कर देगी। मेरी सगाई टूट जायगी।"

सिपाही मुझ से भद्दे मजाक करने लगे। मेरे बयान की सच्चाई जाचने के लिये उन्होने मेरे घर-बार और कारोबार के सम्बन्ध मे दुबारा प्रश्न किये कि मैं कही उखडता तो नहीं। भला इस कसौटी पर क्या उखडता? अक्षरश पहिले ही बयानो को दुहराता गया और अपनी जात बिगड जाने और सगाई टूट जाने के प्रति भय, कायरता प्रगट करता रहा।

सिपाहियो को मजाक करते देख कर इन्द्रपाल ने एक सिपाही को सबोधन किया—"जमादार जी जरा सुनो तो!" और सिपाही के कन्धे पर हाथ रख-कर उसे टूटी मुडेर की तरफ ले गया।

मैं समझा कि इन्द्रपाल ने दोनों सिपाहियो को अलग-अलग कर दिया है और वह उस सिपाही को मुडेर के पास ले जाकर, नीचे धकेल कर बन्दूक छीन लेगा। उसी समय मैं अपने समीप खडे सिपाही की बन्दूक एक हाथ से थाम कर, पिस्तौल दिखाकर बन्दूक उससे छीन लूगा।

मैं साँस रोके इन्द्रपाल के पहल करने की प्रतीक्षा मे था परन्तु उस की ओर से ऐसा सकेत न मिला बल्कि मेरे समीप लौट वह बोला—'निकाल बे, क्या है तेरे पास। जमादार साहब के हवाले कर, नहीं तो साले थाने मे जाकर

लिये जगह जगह किसानो के सोने के स्थान तो मुझे बता दिये थे परन्तु सिपाहियो की रौंद की चर्चा करना भूल गया था। सडक पर डाकुओ की सम्भावना मालूम हो जाने पर भी साइकिल पर अकेले आने-जाने मे मुझे कभी हिचक नहीं हुई।

सिपाहियो के साथ इस झगडे मे लाइन पर से गुजरने वाली दोनो गाडिया निकल गयी थी। हम लोग जमीन खोदने का सामान और बम कन्धो पर लाद कर लाइन पर पहुचे। यहा लाइन के नीचे एक छोटे से नाले पर पुल है। बम दबाने के लिये हमने पुल का सिरा ही चुना। अभिप्राय था कि लाइन टूटने पर इजन नाले की गहराई मे गिरे और अधिक से अधिक नुकसान हो।

लाइन के नीचे गोडी कुटी जमीन म गढे खोदने मे काफी परिश्रम पडा लेकिन हम लोगो न बम दबा दिये और सराय मे लौट कर बमो पर से पहली गाडी के गुजरने की प्रतीक्षा करने लगे। कह ही चुका हू कि तीन बजे एक मालगाडी गुजरती थी। जब मालगाडी बमो पर से धडधडाती हुई गुजर गयी तो हम लोगो को अच्छा मसाला बना लेने की अपनी सफलता पर पूरा विश्वास हो गया।

वह रात मैने इन्द्रपाल के साथ ही कम्बल मे काटी क्योकि उस समय दिल्ली की ओर जाने से रौंद के सिपाहियो या डाकुओ से सामना करने का कोई लाभ न था। पहली रात मे तो उजली चादनी बडी प्यारी लग रही थी परन्तु फिर खूब जाडा लगने लगा था। प्रात काल मुह अधेरे ही साइकिल पर दिल्ली की ओर लौटा। इस समय बदरपुर, मदनपुरा और तेहखड के बहुत से दूध बेचने वाले साइकिलो पर दूध लेकर दिल्ली की ओर जाते हुए सडक पर मिलते थे।

मकान पर लौट कर रात की घटना भगवती भाई को सुनायी। उन्हो ने मेरी चतुराई की प्रशसा करने के बजाय बेपरवाही मे जोर-जोर से हसकर ध्यान आकर्षित करने के लिये फटकार दिया और बोले, अब मुझे रात मे अकेले तेहखड नही जाने देंगे। वहा अभी काफी काम शेष था। एक बडा बम और गाडना था और लाइन से सडक के समीप किसी झाडी तक बिजली का तार लगाना भी शेष था। अगले दिन हमने तीसरा बम भी तैयार कर लिया और बिजली के तार भी लगभग अढाई सौ गज खरीद लिये।

भगवती भाई को मैने समझाने की बहुत कोशिश की कि हम लोग अब असावधानी न करेंगे। तुम साथ न चलो, कोई भी आकस्मिक बात हो सकती है। कम से कम एक आदमी का सुरक्षित बचे रहना आवश्यक है। साथ चलने के लिये उन्हे अनुत्साहित करने का एक कारण यह भी था कि उनके नाक या गले मे कुछ कष्ट था। शायद 'एडीनाइडस' मे कुछ खराबी थी। इस कारण वे खू-खू करते रहते थे और उन के सास लेने का शब्द भी दूर तक सुनायी पडता था।

रात दस और बारह के बीच सराय के पास से रौंद के गुजरने का पता

दीन-मजहब क्या ? होटल में सब कुछ मिलते है । मेमसाहब अभी मसूरी में ही है । जब तक वे न आ जायें, घर कैसे बस सकता है ।

वहा रात बिताने पर इन्द्रपाल से कई दिन बाद हम लोगों में खुल कर बातचीत करने का मौका मिला और वह हम लोगों को अपना तेहखण्ड का अनुभव सुनाने लगा । भिक्षाटन के सिलसिले में नेहखण्ड और मदनपुरा आदि गाव में घूमते समय इन्द्रपाल को पता लगा कि उस इलाके में दो फसलें लगातार खराब हो जाने के कारण किसानों की दशा बहुत सोचनीय थी। वे लोग लगान नो क्या दे पाते उन्हें कई कई दिन से फाके लग रहे थे। इलाके के लोगों ने जिला-अधिकारियों के पास सहायता के लिये प्रार्थना पत्र भेजे । कई अफसर बड़े-बड़े मेम और अर्दली लेकर जाच-पड़ताल के लिये आये । परिणाम स्वरूप गरीब किसानों की सहायता के लिये सरकार ने एक योजना स्वीकार कर ली। यह योजना थी, उस इलाके के एक पुराने टूटे फूटे बांध की मरम्मत कराने की। किसान लोग लगभग सूर्योदय से सूर्यास्त तक वहां मिट्टी खोदने और ढोने का काम करते थे । उनके लिये उन्हें दो आना मजदूरी मिल जाती थी ।

यह बात सुनाते समय इन्द्रपाल की आखें लाल हो गयी । गाली देकर वह बोला, "　　　　दुअन्नी-दुअन्नी मजदूरी में किसानों को जितनी रकम बाटी जायगी, उस से कहीं ज्यादा तो उन गांवों में जाच-पड़ताल करने के लिये जाने वाले अफसरों के दौरों पर खर्च हो गयी होगी ! यह अफसर स्वय दो हजार रुपये माहवार पाकर भी रिश्वत लेकर पेट भरते है और अपनी तनख्वाह जुटाने के लिये लगान देने वाले किसानों के लिये दो आना मजदूरी ही काफी समझते है । सरकार की नजर में उस की हुकमत चला कर सरकार की रक्षा करने वाले इन अफसरों की ही कीमत है । ऐसी व्यवस्था में गरीबों का क्या भला हो सकता है ।'

इन्द्रपाल का आवेश बढ़ता ही गया, वह बोला—"मेरा ख्याल है कि पार्टी को बाबू भाई (भगवती॰ण) और तुम्हारी बहुत जरूरत है इसीलिये पार्टी ने वाइसराय पर आक्रमण करना स्थगित कर दिया है । यह काम तुम मुझे करने दो । यही ज्यादा अच्छा भी होगा । मुझे बचाने के लिये इन्तज़ाम करने की भी जरूरत नहीं । मैं बम चला कर वहीं गिरफ्तार हो जाऊंगा । अदालत में भगतसिंह की तरह बयान दूंगा कि मैंने यह काम तेहखण्ड के और देश भर के किसानों पर किये जाने वाले अन्याय के विरोध में किया है ।"

इन्द्रपाल अब बेकार था, उस ने आश्वासन दिया कि वह आवश्यकता होने पर लौट आयेगा और अपने भाइयों की ख़बर लेने लिये लाहौर चला गया ।

कुछ ईसाइयों और गरीब एंग्लो-इंडियन लोगों का पड़ोस होने के कारण उस मकान में हम लोग कुछ आधुनिक रईस ढंग से रहते थे । बाहर तो सूट

हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र सेना के दो महत्वपूर्ण कार्यकर्ता
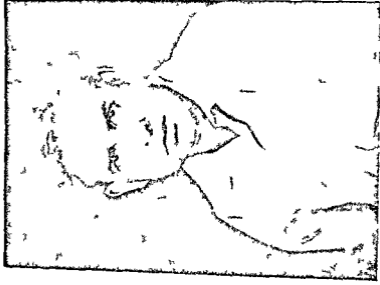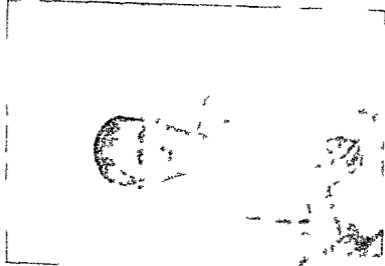
पहिन कर आते जाते थे ही, घर के भीतर भी स्लीपिंग सूट (साहब लोगो के रात मे पहिनने के धारीदार कपड) पहने रहते थे। दो चारपाईया, दो मूढे, बास की बनी हुई मेज और उन दिनो एक रुपया दस आने मे मिलने वाला चाय पीने का जापानी सेट भी आगन मे दिखायी देता था। इस ढग को रईसी इसलिये कह रहा हू कि नया बाजार के मकान मे भी हम प्रकट मे सूट और साफ कपडे दिखाते रहते थे परन्तु भीतर एक ही चटाई थी।

गरमियों मे मैं और भगवती भाई अपनी-अपनी चादर या धोती ओढ कर एक ही चटाई पर सो जाते थे। जाडा आने पर एक कम्बल से निर्वाह कठिन हो गया। आरम्भ मे तो दोनो बिलकुल सीधे लेट कर न्यायपूर्वक आधा-आधा कम्बल ले लेते परन्तु किसी एक के करवट लेते ही दूसरा उघड जाता। दूसरा कम्बल लाना फिजूलखर्ची जान पड रही थी क्योंकि हमारे विचार मे घटना मे अधिक विलम्ब न था। उसके बाद तो एक ही आदमी के शेष रह जाने की आशा थी।

एक दिन उपाय सूझ गया। एक आदमी ने कम्बल ले लिया और दूसरे ने दो चादरों के बीच म अखबार के कागज की तह जमाकर ओढ ली। कागज की इस रजाई मे सर्दी बिलकुल मालूम न होती थी। भगवती भाई छ रुपये मे एक वायलिन भी खरीद लाये थे। उन के मितव्ययी स्वभाव के विचार से यह अच्छी खासी विलासिता समझी जा सकती थी। वे प्राय ही मोढ़े पर बैठकर और बास की मेज पर पाव टिकाकर वाइलिन पर 'ची ची, चू-चू करते रहते। मैं कोई बात कहता तो सुन न पाते। मै खीझ उठता तो उन का ध्यान टूटता और बताने लगते कि फलानी रागिनी की लय निकालने की चेष्टा कर रहे थे।

मै सगीत की सूक्ष्मता न तब समझता था न अब तक ही समझ पाया हू। भगवती भाई अधमुदी आखों से मुझे समझाने की चेष्टा करने लगते कि स्वरो के प्रभाव मे मस्तिष्क मे सुख का सवेदन उत्पन्न कर सकने की अपरिमित सम्भावना होती है। वे स्वभाव से ही कला के इन तत्वों, कविता-सगीत की ओर बहुत अनुरक्त थे। यों बहुत व्यवहारिक प्रकृति होते हुए भी कुछ पहलुओं पर उन की भावुकता बेहिसाब लुढक पडती थी। सभी व्यक्तियों के मानसिक तराजू मे कहीं न कहीं कुछ पासग रहता ही है।

तेहखड म रेल-लाइन के नीचे से बम उखाड कर इन्द्रपाल को लाहौर लौटा दिया गया था। वाइसराय पर आक्रमण का अवसर फिर आने मे लगभग एक मास की प्रतीक्षा करना आवश्यक था। हम लोगो की पूरी शक्ति सगठन के सूत्र बढाने मे लगी हुई थी परन्तु वाइसराय की गाडी पर आक्रमण मे पूर्ण सफलता पा सकने की बात हमारे ध्यान से हट नही गयी थी। इस

सम्बन्ध म दो बाते सदा ही मेरे ध्यान म घूमती रहती थी । एक थी, घटनास्थन से लौटते समय रेल फाटक के बन्द पाने की कठिनाई दूसरी बात थी कि गाडी के नीचे बमा म बिजली के तार म आच दा क लिये हमने मोटरकार म प्रयोग होने वाली जो बैटरी खरीदी थी उस क पड पड़े कमजोर हो जाने की आशका ।

घटनास्थल म लौटने समय बन्द रेल फाटक म बचने के लिये यह ख्याल आया कि दिल्ली की ओर न लौटकर बदरपुर या मथुरा की तरफ भी जाया जा सकता है । यह देखने के लिये कि उस ओर कितनी दूर तक सडक पर जाने के बाद किसी छोटे मोटे शहर म छिप जाने का अवसर हो सकेगा, मैं एक सध्या घटना के लिये निश्चित स्थान से चौदह-पद्रह मील मथुरा की ओर आगे चला गया । सडक तो मथुरा तक चली जा रही थी परन्तु गाव या कस्बे सभी बहुत छोटे थे । कोई ऐसी जगह न थी जहा छिपा जा सकता था । सोचा, यदि घटना के बाद दिल्ली न लौटना हो तो मोटर साइकिल पर सीधे मथुरा तक जाने की हिम्मत होनी चाहिये । उस समय मोटर साइकिल म इतना पट्रोल नही था कि मथुरा पहुच जाता । भगवती भाई से कह कर भी नही आया था, इसलिये लौट पडा ।

लौटते समय सूर्यास्त के पश्चात थोडी देर अधेरा रह कर चन्द्रमा निकल आया और फीकी फीकी चादनी फैल गयी । सडक बिलकुल सुनसान थी । प्रकाश इतना काफी था कि मोटरसाइकिल पर लैम्प जलाये बिना सडक दूर तक साफ दिखाई दे रही था । बीच-बीच म केवल सडक के किनारे वृक्षों की छाया के काले धब्बे सडक पर बिछे थे जिन्हे मैं चाल की तेज उडान म पार करता जा रहा था ।

सहसा मैंने अपने आपको सडक के किनारे धूल म पडा पाया । मोटरसाइकिल कुछ दूर पडी अब भी तेजी से फट-फट कर रही थी । समझ म आया कि मैं मोटरसाईकिल से गिर पडा हू । मेरे समीप ही वृक्ष की अधेरी छाया म ईंटो से भरी एक बैलगाडी उल्टी हुई खडी थी । छाया के अधेरे म यह बैल-गाडी मुझे दिखायी न दी थी । खूब तेज चाल म मोटरसाइकिल इस ढेर से टकरा गयी थी । मैं उछल कर एक ओर जा पडा था और मोटरसाइकिल दूसरी तरफ । जोर के झटके से मेरा मस्तिष्क कुछ पल के लिये बेकाम हो गया होगा इसलिये घटना को समझ न सका था ।

सुध आने पर उठा । मोटरसाइकिल का पट्रोल रोक कर इजन बन्द किया । यत्न किया कि फिर साइकिल को सीधा कर उस पर चढ कर दिल्ली की तरफ चल दू । मोटरसाइकिल का अगला पहिया चोट म बहुत टेढा हो गया था और टायर-ट्यूब फट गये थे । उसे ढकेला भी नही जा सकता था । अवसर की बात

इसी समय मथुरा की ओर से एक ट्रक आ गयी। इस मोटर-लारी को मैं कुछ ही देर पहिले अपनी तेज चाल से पीछे छोड आया था। अब उसे इशारे से खड़ा किया। मोटरसाइकिल ट्रक पर लादी गयी और मैं भी सवार हो गया।

चोट भारी आयी थी। सड़क से पतलून फटकर बायां घुटना छिल गया था। बांह की बाई आस्तीन भी सड़क से उड़ कर हथेली की पीठ, कलाई और कोहनी तक जगह-जगह चमड़ी उतर कर खून बह रहा था। मैंने रूमाल और कमीज का कपड़ा फाड-फाड कर इन घावों को बांध कर खून रोकने की चेष्टा की। रात अधिक नहीं हुई थी। दिल्ली में मोटरसाइकिल की मरम्मत करने वाले की एक दुकान पर छोड कर तांगे से पुल के मकान पर पहुंचा। भगवती भाई घर पर थे। किसी डाक्टर के यहां जाकर कोई भी काल्पनिक नाम बताकर मरहम पट्टी करायी जा सकती थी परन्तु उस दिन हम लोगों की जेबों मे बहुत ही कम पैसे थे। भय यह था कि घाव पक न जाय। स्टोव जलाने के लिये स्पिरिट मौजूद थी। सोचा कि फिलहाल घावों को स्पिरिट लगाकर साफ कर दिया जाय, वैसा ही किया भी। चमडी उतरे हुये बड़े-बड़े कई घावों म एक साथ स्पिरिट लगा देने से कैसा लगेगा, यह अनुभव की ही बात है। भगवती रुई से स्पिरिट लगाते जा रहे थे और मैं आंखें बन्द किये, दांत भींचे पड़ा था कि मुह से आवाज न निकले। मुह से आवाज तो न निकली परन्तु इस पीडा से या घावों से तेज बुखार हो गया। सोचा कि कुछ न कुछ इलाज होना ही चाहिए। बुखार के कारण सन्देह हुआ कि जख्मो की राह खून मे कोई विष न चला गया हो। सड़क पर लगे घावों से 'टिटनेस' हो जाने की बात कही पढ़ी हुई थी।

दिल्ली के हमारे मित्रो मे से एक थे, 'अजमेरी दरवाजे' पर महाशय कृष्ण जी। कृष्ण जी पत्थर के कोयले के व्यापारी थे। उन से पुराना परिचय था। सन १९२१-२२ मे बहिन प्रेमवती के पिता लायलपुर में रुई धुनने के एक कारखाने (जिनिंग फैक्टरी) म मैनेजर थे। उस समय कृष्ण जी ने वहां कुछ दिन क्लर्क की नौकरी की थी। वहीं उनसे परिचय हुआ था। इस परिचय का आधार कृष्ण जी की आर्यसमाज के सुधारवादी कार्य के प्रति सहानुभूति थी। दिल्ली मे वे स्वतंत्र व्यापारी थे, यहां पहुचने पर मैंने कृष्ण जी से परिचय प्राप्त कर लिया और भगवती भाई का परिचय भी करा दिया था।

कृष्ण जी और उनकी पत्नी दोनों को ही हम लोगों से सहानुभूति थी। उन के यहां जब चाहे भोजन या रात बिता लेने की सुविधा हो सकती थी। आवश्यकता पड़ने पर दस-पन्द्रह रुपये भी मिल जाते थे। कृष्ण जी राजनैतिक विचार से परम गांधीवादी कांग्रेसी, खद्दरधारी थे और हिंसात्मक क्रान्ति को देश के लिये हानिकारक समझते थे। मित्रता के कारण वे हम लोगो को व्यक्ति-

गत सहायता देते थे परन्तु अपने विश्वास के कारण हमारे उद्देश्य में सहायता नहीं देना चाहते थे। रुपया मांगने पर जिरह करके जान लेना चाहते थे कि उनका पैसा हमारी व्यक्तिगत आवश्यकता पूर्ति में ही लगेगा, हिंसा में नहीं।

कृष्ण जी से एक आशंका सदा बनी रहती थी। उन से झूठ बोलना पड़ता था। वे हर एक बात के बारे में प्रश्न और जिरह करके अपना कौतूहल पूर्ण करना चाहते थे। उन पर पूरा विश्वास होते हुए भी अपने कार्य-क्रम के भेद बताते फिरना हम लोगों को पसन्द न था। 'नहीं बतायेंगे' यह देना भी सम्भव न था इसलिये झूठ बोलने की लाचारी हो जाती थी। कई बार झूठ पकड़ा भी जाता था, तब हंस कर टाल देते। एक दिन कृष्णजी पूछ बैठे—"तुम कभी सच भी बोलते हो ?"

"हां" मैंने उत्तर दिया, "जब झूठ बोलने से काम न चले।"

जख्मी हालत में कृष्ण जी के यहां पहुंचने पर यही कठिनाई थी कि वे घटना का पूरा ब्योरा पूछेंगे कि मोटरसाइकिल कहां से ली, कहां गये थे उस जगह जाने की आवश्यकता और कारण क्या था ? लेकिन किसी दूसरी जगह इलाज की वैसी व्यवस्था हो नहीं सकती थी। भगवती भाई ने मुझे उन्हीं के यहां पहुंचा दिया।

कृष्ण जी अपने अत्यन्त विश्वस्त मित्र होमियोपैथ डाक्टर युद्धवीरसिंह जी को बुला लाये। डाक्टरसाहब उन दिनों एक धर्मार्थ औषधालय में काफी समय देते थे। उस समय उनकी अपनी प्रैक्टिस बहुत अधिक न थी। आजकल डाक्टर युद्धवीरसिंह दिल्ली कांग्रेस कमेटी के प्रधान हैं। डाक्टर साहब ने ज्वर के उपचार के लिए खाने की दवाई दी। जख्मों का इलाज भी दवाई के पानी से धो कर और मरहम लगा कर कायदे से होने लगा। यह काम श्रीमती कृष्ण जी के भाई ध्रुवजी करते थे। वह उन दिनों नयी-दिल्ली में फोटोग्राफी की दुकान करते थे। ध्रुवजी से हम लोगों की जो मित्रता हुई, उसका परिणाम उन्हें बाद में पुलिस के हाथों पड़ी मारपीट के रूप में काफी भुगतना पड़ा।

इन चोटों के कारण आठ-दस दिन खाट पर पड़े-पड़े बार-बार ख्याल आता था कि लाइन के नीचे दबे बमों को बिजली के तार द्वारा आंच पहुंचाने का हमारा इन्तजाम बहुत सन्तोषजनक नहीं है। हो सकता है कि हमारी बैटरी पुरानी होकर कमजोर पड़ जाय। हमें यह मालूम भी न हो और घटना के अवसर पर उस में से उचित रूप से चिंगारी न निकल सके। बार-बार यही चिन्ता करने से जो उपाय सूझा उसके लिये बाद में मुझे और दल को खूब परेशानी भुगतनी पड़ी।

◈

सूत्रों का विस्तार

बैटरी और बिजली के सम्बन्ध में मैं अपने छोटे भाई धर्मपाल से सलाह लेना चाहता था। इस के लिये एक पत्र इन्द्रपाल की मारफत लिखा गया। धर्मपाल ने सन १९२८ में मेट्रिक की परीक्षा पास की थी। उस समय क्रांति और दल के काम में उलझ जाने के कारण मैं स्थायी रूप से पारिवारिक खर्च और भाई की कालेज की शिक्षा का खर्च चलाने की स्थिति में नहीं था इसलिये भाई को बिजली का काम सीख कर उसी समय स्वावलम्बी बन जाने के लिये कह दिया था। धर्मपाल ने लाहौर में बिजली का काम सिखाने वाले एक स्कूल में बिजली के काम का सर्टीफिकेट भी ले लिया था और लाहौर के बिजली घर में अप्रैन्टिसी शुरू कर दी थी। मुझे यह आशा थी कि मेरे घर छोड़ देने पर वह अपना और मां का निर्वाह कर सकेगा परन्तु उस ने भी मेरा ही उदाहरण अपनाया। बिजली का काम कर के पेट पालने के बजाय वह लाहौर षड्यन्त्र केस के ऽर्च दिया रा डिफेंस-कमेटी' का काम करने लगा। लाहौर में हम लोगों के मददगारों और सुझाव से चलने वाले गुप्त क्रांतिकारी काम में वह धन्वन्तरी, एहसानइलाही और सुखदेवराज आदि का साथी बन गया और बहिन प्रेमवती और दुर्गा भाभी के सेक्रेटरी का काम भी करने लगा।

हंसराज 'वायरलेस'

धर्मपाल ने इन्द्रपाल की मारफत सलाह दी कि उस लाहौर की खुफिया पुलिस हरदम घेरे रहती है। लाहौर के कामों में उलझे रहने के कारण उस का बाहर निकलना भी कठिन है। यह आशंका भी थी कि लम्बी यात्रा में पुलिस उसे पहचान कर पीछा कर ले तो हम लोग भी खतरे में पड़ जायें। धर्मपाल ने सलाह दी कि बिजली के बारे में हंसराज 'वायरलेस' से सहायता लेना ज्यादा उपयोगी होगा। हंसराज पर पुलिस को सन्देह नहीं था। धर्मपाल ने सुझाया, हंसराज शायद कोई ऐसा प्रबन्ध कर दे कि बिना बिजली के तार लगाये ही काम हो जाय।

बायरलस हंसराज को मैं सन १९२४, २५ या उस से भी पूर्व से जानता था। वह धर्मपाल का समवयस्क और सहपाठी था। उस की माता और हमारी माता भी सहेलियां थीं। लायलपुर के 'डिगलिसपुरा' मुहल्ले की एक ही गली में आमने-सामने हम लोग रहते थे। धर्मपाल ने इन्द्रपाल को हंसराज का पता दे दिया। इन्द्रपाल उसे दिल्ली में हमारे मकान पर ले आया।

हंसराज ने हमें समझाया कि हम तारों और बैटरियों के चक्कर में व्यर्थ उलझे हैं। वह छोटे छोटे ऐसे यन्त्र बना देगा जो बमों में जोड़ दिये जा सकेंगे। बैटरी के साथ भी वैसा ही यन्त्र लगा रहेगा। बैटरी और बमों का सम्बन्ध बिजली के तारों से जोड़ने की जरूरत न रहेगी। इस प्रकार बम दबे हुए स्थान और बैटरी की दूरी कम-ज्यादा होने से भी कोई अन्तर न पड़ेगा। बैटरी के कमजोर हो जाने की भी कोई चिन्ता नहीं रहेगी। वह चार-पांच आने की लागत में ही चाहे जितनी बैटरियां बना सकता था।

हंसराज की बात से इन्द्रपाल, भगवती भाई और मैं फूले न समाये। इस यन्त्र की आशा में हमने अपनी पूरी योजना ही बदल डाली। अब किसी भी साथी की जान खतरे में डालने की ज़रूरत न जान पड़ रही थी। तेहखंड में रेल लाइन के बायीं ओर मथुरा जाने वाली सड़क है और दाहिनी ओर कुछ खेतों और छोटे से गांव के परे ऊंचा पठार दूर तक चला गया है। पठार पर से रेल की लाइन स्पष्ट दिखायी देती है। हम लोगों ने कल्पना कर ली कि कोई आदमी बढ़िया दूरबीन लेकर उस पठार पर बैठ जायगा और वाइसराय की गाड़ी बम लगे स्थान पर पहुंचती देखकर दो मील दूर ही से बटन दबाकर बम-विस्फोट कर गाड़ी को उड़ा देगा। सिर पर आशंका लिये बिना इतना बड़ा काम कर सकने की सम्भावना से तो उत्साह बढ़ा ही लेकिन उस से अधिक उत्साह इस बात से हुआ कि ब्रिटिश सरकार बम विस्फोट का रहस्य किसी तरह न जान कर चकरा जायगी। हम घटना के बाद ब्रिटिश सरकार को यह धमकी दे सकेंगे कि हमारे पास इतनी शक्ति और सामर्थ्य है कि तुम्हारी सम्पूर्ण सैन्य शक्ति को मिट्टी में मिला सकते हैं। देश की जनता जो केवल निशस्त्र होने के कारण ही अनुत्साहित है, विदेशी सरकार का विरोध करने का उत्साह अनुभव करेगी। यह प्रयत्न सार्वजनिक सशस्त्र क्रांति की पहली मंजिल होगी। हम आतंकवादी अवस्था से सार्वजनिक क्रांति की ओर बढ़ जायेंगे।

हंसराज ने हमारा उत्साह और भी बढ़ाया। उसने समझाया कि पठार पर भी किसी आदमी के जाने की जरूरत नहीं होगी। वह ऐसा यन्त्र बना देगा कि घटना के लिये निश्चित स्थान के आस-पास यन्त्र को रख देना ही पर्याप्त होगा। इस यन्त्र में एक शीशा रहेगा जिसमें रेलवे लाइन का प्रति-

बिम्ब पडता रहेगा। इस यन्त्र से बेतार की बिजली (वायरलेस) द्वारा सम्बध रखने वाला दूसरा यन्त्र हमारे दिल्ली के मकान मे रहेगा। हम दिल्ली मे बैठे-बैठे घटना के लिये निश्चित स्थान पर पहुचती वाइसराय की गाडी का प्रतिबिम्ब अपने यन्त्र मे देख सकेंगे और वही से बटन दबाकर गाडी को उडा दिया जा सकेगा।

उन दिनो एक स्थान से दूसरे स्थान पर (टेलीविजन) द्वारा चित्र भेजने के यन्त्रो के आविष्कार की खबरें हम पत्रों मे पढा करते थे। हसराज ने हमे विश्वास दिलाया कि उस ने वायरलेस द्वारा टेलीविजन का आविष्कार भी अपने स्वतत्र तरीके से कर लिया है। उस ने इस प्रकार के परीक्षणों के कई प्रदर्शन भी जगह-जगह किये थे। इन्द्रपाल उस का ऐसा एक प्रदर्शन लाहौर 'एस० पी० एस० के०' हाल मे देख चुका था। मैने स्वय अपने भाई धर्मपाल से उस के ऐसे चमत्कारपूर्ण आविष्कारो की अनेक कहानिया सुनी थी इसलिये अविश्वास का कोई कारण न था। हसराज के आविष्कारो के कुछ परीक्षण हमे बेहूदा भी जचते थे, उदाहरणत मृतात्माओ को बुलाकर बात करना, बिजली की सुई से व्यक्तियो की प्रेम-भावना भाप लेना। बिजली, वायरलेस और 'मैस्मरेज्मि' को एक साथ मिला देना आदि परन्तु बिजली से सम्बन्ध रखने वाले कुछ ऐसे परीक्षण थे जिन्हे देखकर हम अपनी सफलता की आशा से मुग्ध हो गये थे, यह न सोचा कि यह जादूगरी है या विज्ञान का आविष्कार।

हसराज ने कुछ परीक्षण हमारे सामने भी किये। उसने एक छोटी शीशी मे ऐसा श्वेत द्रव पदार्थ बनाया जिसे जेबी बैटरी पर लगे छोटे बल्ब से एक गज की दूरी पर रखने से ही बल्ब स्वय प्रकाशित हो जाता था या बल्ब को सावधानी से तोड उस के एलेमेण्ट पर 'गनकाटन' रख देने से उस मे आग लग जाती थी। अर्थात, बिजली के दोनो तारो का सम्बन्ध हाथ से छुये बिना, द्रव पदार्थ के वातावरण मे हो जाने वाले प्रभाव से हो हो जाता था। हम लोगों ने इन वैज्ञानिक परीक्षणो के आधार सिद्धान्तों के सम्बन्ध मे बातचीत कर उन्हे समझाना चाहा। हसराज इस के लिये तैयार न था।

हसराज ने साफ कह दिया कि वह अपने आविष्कार का रहस्य अभी हमे बताने के लिये तैयार नही था। हम लोगों ने उस की शर्त स्वीकार कर ली कि सिद्धान्त और रहस्य की हमे आवश्यकता नही वह आवश्यकतानुसार समय-समय पर इस प्रकार के यन्त्र बना कर देता रहे। हम उस के आविष्कार का रहस्य जानने की चेष्टा नही करेंगे और न उसे किसी प्रकार के खतरे मे डालने की बात सोचेंगे। इन चमत्कारो की वास्तविकता समझने मे हमे काफी समय लगा। मजा यह है कि हसराज वही परीक्षण दिखाकर तीस बरस से 'वायरलेस' आविष्कार बना रहा है। उसने चर्खे, रेडियो आदि के जाने कितने आविष्कार

भगतसिंह के विचार मालूम हो गये थे। लाहौर में उसने दुर्गा भाभी का व्यवहार देखा था और परिचय भी पाया था। एक आवश्यक सदेश हम लोगों तक पहुचाने के लिये उसे दिल्ली मे लोगों से मिल सकने का सूत्र भी बना दिया गया था।

उस समय दिल्ली क्षेत्र के सगठन का उत्तरदायित्व कैलाशपति पर था। कैलाशपति लाहौर में मेरे मकान पर ठहर चुका था। काशीराम को उसे यह भी विश्वास हो गया था कि भगवतीचरण के विरुद्ध सी० आई० डी० होने का प्रचार झूठा और जयचन्द्र जी के वैमनस्य के ही कारण था। काशीराम और हमारे दिल्ली के सूत्र द्वारा हमारा सम्बन्ध कैलाशपति से हो गया।

भैया आजाद ने लाहौर जैल की बाते ठीक-ठीक जानने के लिये अपने भरोसे के साथी विश्वनाथ वैशम्पायन 'बच्चन' को ग्वालियर से लाहौर भेजा था। लौटते समय वह भी दिल्ली मे कैलाशपति से मिला था। बच्चन ने भी कैलाशपति का सन्देह दूर कर दिया। हम लोगों ने 'भैया' (आजाद) से मिलने की इच्छा प्रकट की और उसने मिला देने का आश्वासन दिया।

कैलाशपति का नाम क्रान्तिकारी मुकदमो के खास बदनाम मुखबिरों में से है। मुझे कैलाशपति को बहुत निकट से देखने-जानने का अवसर मिला था। मैंने उसे के दोनो ही रूप देखे थे इसलिये उसके चरित्र की चर्चा में कुछ विस्तार क्षम्य होगा। यह कहना अत्युक्ति न होगी कि काकोरी षड्यन्त्र के बाद दल के पुन सगठन में कैलाशपति ने खास सहायता दी थी। कैलाशपति से राजनैतिक भावना और दल के प्रति सहानुभूति स्कूल में पढ़ने समय से ही थी। १९२७-२८ में भगतसिंह, सुखदेव, विजयकुमार सिन्हा और आजाद द्वारा आरम्भ किये गये सगठन में भी वह सम्मिलित था। १९२८ में वह दल का सदस्य होते हुये गोरखपुर जिले मे 'बरहेनगज' के डाकखाने में रिजर्व क्लर्क की नौकरी कर रहा था। दल उस समय विकट आर्थिक कठिनाई में था। डकैती कर सकने योग्य शक्ति न थी। उस से डाकखाने का रुपया लेकर भाग आने को कहा गया। कैलाशपति के परिवार की आर्थिक अवस्था को देखते हुए डाकखाने की सुनिश्चित नौकरी काफी बड़ी चीज थी परन्तु उस ने दल की आज्ञा पूरी करने के लिये नौकरी छूट जाने और अपने आप को जोखिम में डालने की चिन्ता न की। वह डाकखाने का तीन हजार दो सौ रुपया लेकर कानपुर भाग आया। यह रुपया दल को सौंपने से पूर्व उस में से पाच सौ रुपये साथी हजारीलाल वाजपेयी की मारफत अपने घर पिता के पास भिजवा देने में भी उसे सकोच न हुआ। धनं... पूरा करने की जोखिम ढोने-झेलने बीच मे चोरी भी कर जाने की घटना कैलाशपति का चरित्र समझने में काफी सहायक होगी।

गोरखपुर की इस चोरी के कुछ दिन बाद ही कैलाशपति लाहौर में मेरे

साथ मच्छीहट्टे में रहा था। उस का कद काफी नाटा था, लगभग पांच फुट हो रहा होगा। रंग काला, शायद वह अपने को सांवला ही कहता था। शरीर बहुत सूखा सा, कुछ लम्बा सा चेहरा, गाल धंसे हुए और चेहरे की हड्डियां उभरी हुईं। उस का नाम कालीचरण पड़ गया था। लाहौर में और उस समय तक दिल्ली में भी उस के रहन सहन का ढंग अपने प्रति बहुत बेपरवाही का था। भगतसिंह और सुखदेव उस की ओर कुछ उपेक्षा का सा व्यवहार करते थे। उन की रुखाई और उपेक्षा की शिकायत भी उस ने दिल्ली में की थी। भगतसिंह का सौन्दर्य के प्रति आकर्षण और असुन्दर के प्रति विरक्ति इतना प्रबल था कि उस की यह प्रवृत्ति दल के साथियों में असन्तोष का कारण बन जाता था। कैलाशपति के प्रायः चुप रहने और अपने प्रति निरपेक्ष रहने से मेरे मन में उस के लिये सहानुभूति और आदर थे। खास कर इसलिये कि जब मैं लाहौर में मजे से घर पर रह कर दल का केवल थोड़ा बहुत काम ही कर रहा था, वह दल के लिये घर बार छोड़ कर ही चला था।

दिल्ली में कैलाशपति से हमारा परिचय नवम्बर १९२९ में हुआ था। पहली मुलाकात के समय उस ने मेरी बांह गले में लटका देख कर चोट का कारण पूछा था। उन दिनों सुबह काफी सर्दी हो जाती थी। खास कर सुबह की ठण्ड में साइकिल चलाने पर काफी जाड़ा लगता था। वह दिल्ली में यमुना किनारे [illegible] हिन्दू हास्टल [illegible] पर ठिठुरता हुआ सुबह ही हमारे यहां पहुंचता था। हम लोगों ने लाहौर से अपने गरम कपड़े मंगवा लिये थे और दिल्ली में भी हमारे सम्पर्क के लोग खाते पीते घराने के थे इसलिये पहिनने के लिये आवश्यक कपड़ों की कमी न रही थी।

एक दिन कैलाशपति को गरम कपड़े के बिना ठिठुरते देख कर मैंने अपना स्वेटर उसे दे दिया। दूसरे दिन वह फिर बिना स्वेटर के आया। मालूम हुआ कि स्वेटर उस ने दूसरे साथी को दे दिया था। इस बार भगवती भाई ने अपना स्वेटर उतार कर उसे दे दिया। वह कैलाशपति को काफी ढीला होने के कारण बेतुका दीखता था। हम लोगों ने पूछा— यदि यह पसन्द न हो तो कहीं से दूसरा ला दें?

कैलाशपति ने उपेक्षा प्रकट की— जाड़ा रुकने से मतलब है।

दो चार दिन बाद वह स्वेटर भी कैलाशपति के पास से गायब था और वह जाड़े में ठिठुर रहा था। मालूम हुआ कि उस ने वह स्वेटर भी किसी दूसरे जरूरतमन्द साथी को दे दिया था। यह था कैलाशपति का एक रूप। यथा प्रसंग दूसरे रूप का भी वर्णन करूंगा।

नवम्बर का शायद दूसरा सप्ताह था। कैलाशपति हम लोगों से तीस रुपये लेकर भैया (आजाद) से हम लोगों का सम्बन्ध जोड़ने की व्यवस्था करने के

लिये कानपुर गया। भैया को अपने विश्वस्त सूत्र बच्चन से भी हम लोगों की बाबत सब कुछ मालूम हो चुका था। कैलाशपति लौट कर हमें सध्या समय 'कुदसिया-बाग' में लिवा ले गया। यह मेरा और भगवती भाई का भैया से पहला साक्षात्कार था। आजाद ने कैलाशपति से हम दोनों का परिचय पाकर हम बहुत साफ शब्दों में सम्बोधन किया—"देखो भाई, तुम से मिलने से मैंने इनकार किया था, यह सच है लेकिन बुरा मानने की बात नहीं। सब बातों का ठीक-ठीक पता तो मैं अपने आप लगा नहीं सकता। जैसा मुझे समझा दिया गया, मैंने मान लिया। अब अविश्वास दूर हो गया तो जी-जान से हाजिर हू। पिछली बातें जाने दो।"

आजाद भैया के साथ एक आदमी और था। खुला गेहुआ रंग, नाटा कद, चचल आखें। वे इसे 'बच्चन' कह कर पुकारते थे। यही था विश्वनाथ वैशम्पायन। भैया को शायद ही कभी बच्चन के बिना देखा हो। बच्चन भी बडी तन्मयता और तत्परता से उनकी प्रत्येक बात पूरी करता था। इसी मुलाकात में हम लोगों ने वाइसराय की गाडी के नीचे बम-विस्फोट की योजना उन्हे बतायी और कहा कि हम यह कर चुके होते केवल गणेशशकरजी विद्यार्थी के अनुरोध से स्थगित कर देनी पडी।

भैया ने बताया कि वे लाहौर षडयन्त्र का मुकद्दमा चलाने वाले खानबहादुर अब्दुलअजीज, मिस्टर हार्टन और खैरातनबी को गोली मारने की योजना बना रहे हैं। हम लोगों ने अपना मत दिया कि एक-एक पुलिस वाले या बडे अफसरों के पीछे अपनी शक्ति व्यय करना उचित नहीं। यह लोग रोटी के लिये सरकार की नमकहलाली कर रहे है। सरकार को कमजोर होता देखेंगे तो स्वय उसका साथ छोड देंगे। हम वाइसराय या पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट पर एक ही मूल्य मे चोट कर सकते है तो फिर अंग्रेजी सरकार के सब से बडे प्रतिनिधि पर ही क्यों न हमला करें? जनता की दृष्टि मे उसका मूल्य कहीं अधिक होगा। भैया हम लोगों से सहमत हो गये। उन्होंने दल की आर्थिक कठिनाई दूर करने के लिए 'मनी ऐक्शन' (डकैती) की तजवीज की और खेद प्रकट किया—"इस समय कहीं से भी कुछ मिल नहीं रहा है। मैंने जिन लोगों से उधार लेकर दल का काम चलाया है, उन का रुपया लौटा न सकने के कारण शर्मिन्दा हू।"

हम मनी ऐक्शन के बारे मे उनसे सहमत थे। वे भी हम से सहमत हो गए कि वाइसराय का काम पहिले हो जाये तब एक अच्छी बडी डकैती की बात सोची जाये। यह डकैती का चाव नहीं, मजबूरी थी। भैया से पहली मुलाकात 'कुदसिया बाग' में होने के बाद हमें दिल्ली में उनके ठहरने की जगह दिखा दी गयी। हम लोगों ने भी 'नया बाजार' के बगल की गली में अपना स्थान उन्हे दिखा दिया ताकि किसी भी समय आवश्यकता होने पर मिलने-

फर्श पर कुछ समय आराम कर रहे थे। बिस्तर के समीप खिड़की दरवाजे का एक पीतल का बन्दी ताला जड़ा लगा हुआ था। कुछ पुस्तकें और मन्दिर के सामान के लिए यह उनका शेल्फ का काम दे रहा था। इसी कोठरी में दूसरी ओर खूब ऊँचा मचान बना पानी के बर्तन में पानी रक्खा था।

दिसम्बर का प्रारम्भ था, आकाश में कुछ बदली भी थी। मैं शाम ट्रेन से चल कर लगभग साढ़े सात बजे शुक्र बाबा के यहाँ पहुँचा था। कुछ सर्दी मालूम हो रही थी। बाबा एक रुईदार मिर्जई पहने थे। मिर्जई का रंग कत्थई था और बटनों की जगह तनियाँ लगी हुई थीं। बाबा बिस्तर पर गोल पैर बैठे थे। उनके बिस्तर के ऊपर दीवार पर टाँग दी उनकी विचित्र पोशाक लटकी हुई थी। यह थी एक जालपुरी बिरजिस और खासी मोटी। बिस्तर के पैताने कुछ अन्तर से पड़ा था खूब मोटा और भारी देसी चमरौधे जूते का जोड़ा पड़ा था। रुईदार मिर्जई, खादी की चुस्त बिरजिस, चमरौधे जूते और बाबा का पहनावा वह आज तक भुला नहीं सका हूँ।

बाबा ने बहुत बातें और बड़े प्रेम से स्वागत किया। अपने बिस्तर के समीप ही मेरे बैठने के लिए बिस्तर लगा दिया। पहुँचते ही गरम पानी से हाथ-मुँह धुलवा कर गरम चाय पिलायी और बैठने पर कम्बल ओढ़ा दिया। वे स्वयं केवल रुईदार मिर्जई पहने बिना कुछ ओढ़े मेरुदण्ड को सीधा किए बैठे थे। उस समय भी उनकी आयु, मेरा अनुमान है पचास से कम नहीं रही होगी। सर्दी कुछ अधिक थी परन्तु बाबा के कम्बल न लिए रहने पर मुझे कम्बल ओढ़ने में संकोच हुआ। बाबा ने आग्रह किया— नहीं नहीं ! तुम सफर से आये हो सर्दी ज्यादा है, ओढ़ कर बैठना चाहिए। मैं तो ऐसे ही रहता हूँ। भोजन के समय भी उन्होंने वैसे ही आग्रह और ध्यान से भोजन कराया जैसे परदेस से लौटे छोटे भाई या लड़के को कराया जाता है।

उस दिन बदली और सर्दी तो था ही बाबा को जुकाम भी था। घर की महिला प्रति दो ढाई घण्टे के बाद काले या पीतल की कटोरी में कटोरे जैसे ही गिलास में उनके लिये चाय ले आती थी। बाबा कटोरी गिलास मेरी ओर बढ़ा देते। मेरे ना-ना करने पर भी यह पेय मुझे पीना ही पड़ता। बाबा अपने लिये और मँगवा लेते। इस चाय का स्वाद चाय का न था। पूछने पर बाबा ने स्वीकार किया—यह चाय तुलसी की पत्ती और अदरक की है, चाय पत्ती की नहीं।

मेरा अनुमान था कि बाबा जुकाम के उपचार के लिए ऐसी चाय पी रहे हैं परन्तु उन्होंने बताया—वे सदा वैसी ही चाय पीते थे और वही गुणकारी भी होती है।

कुछ संकोच से पूछा—"गुण और उपयोगिता के विचार से ही आप ऐसी चाय पीते हैं या चाय को विदेशी रिवाज मानकर भी उसके प्रति विरक्ति है?"

मेरे इस प्रश्न का कारण बाबा की विचित्र पोशाक भी थी। मुझे ऐसा जान पड़ रहा था कि मैनिक चुस्ती, मुस्तैदी के साथ-साथ उस देश का पुराना रग-रूप बनाये रखने के लिये भी बाबा का विशेष आग्रह था। इस बात का एक और प्रमाण देखा—

दोपहर के समय उनके उत्साही नवयुवक शिष्यों की एक मडली अपनी व्यायाम-शाला की बातें उन्हें सुना रही थी। बात मराठी मे होने पर भी मैं समझ पा रहा था कि किसी फुटबाल के मैच का जिक्र है। फुटबाल, क्रिकेट, हाकी आदि खेलो को हम लोगों ने अग्रेजो मे सीखा है इसलिये इन खेलो के प्रसग मे अग्रेजी पारिभाषिक शब्दो—सेन्टर, फारवर्ड, बैक, हाफबैक, गोल आउट, पेनल्टी आदि आदि का ही उपयोग भी होता रहता है। यह लोग इन शब्दों से परहेज कर, इनके सस्कृत पर्यायवाची ही उपयोग कर रहे थे। विदेशी भाषा पर निर्भर न कर अपनी भाषा को पूर्ण बनाने का प्रयत्न मुझे भला तो लगा परन्तु कुछ विचित्र भी।

चाय को विदेशी पेय या विदेशी सस्कृति का अग समझने के मेरे प्रश्न के उत्तर म बाबा ने निस्सकोच स्वीकार किया—"चाय से विरक्ति का एक कारण उसका विदेशी रिवाज होना भी है। बाबा की निष्ठा और उनके त्याग के प्रति अत्यन्त श्रद्धा होने पर भी उन के सास्कृतिक दृष्टिकोण म मुझे अपने विचार में व्यवहारिकता और सतुलन का अभाव जान पडा।

बाबा की सहृदयता और स्पष्टवादिता के सन्मुख किसी पैंतरेबाजी का अवसर न था। उन्हें काग्रेसी-असहयोग और अहिंसात्मक नीति की व्यर्थता और क्रान्ति के सिद्धान्तो का पाठ पढाने की भी जरूरत न थी। विदेशी दासता-विरोधी क्रान्ति की चेतना म वे हमारे अगुआ थे इसलिये एकान्त पाते ही शस्त्र, धन और सम्बन्धों के लिये सहायता का अनुरोध उनसे किया। दिल्ली में हुई बातचीत के आधार पर बाबा मेरे आने का कारण जानते ही थे।

मेरे अनुरोध से असम्मति प्रकट न कर उन्होंने अपने कार्यक्रम या दृष्टि-कोण की व्याख्या करते हुए समझाया—"विदेशी दासता से राष्ट्र को मुक्त करना हमारा उद्देश्य है। राष्ट्र की मुक्ति का उद्देश्य अपनी राष्ट्रीयता की उन्नति और रक्षा करना ही है। अग्रेजी शासन के अतिरिक्त देश म दूसरा भी एक हमारा राष्ट्रीय शत्रु है जो हमारी राष्ट्रीय एकता का विरोधी है और अग्रेजो के पक्ष म होकर हमारे स्वतन्त्रता के प्रयत्नों को विफल कर देता है। यह है मुसलमानो की अपने आपको देश के हिन्दू जन समुदाय और देश की परम्परागत सस्कृति से पृथक समझने की भावना। प्रत्येक राष्ट्र की सस्कृति ही उस का प्राण और शक्ति होती है। सास्कृतिक एकता ही राष्ट्रीय एकता का आधार होती है। विदेशी दासता के विरुद्ध हम अपनी सास्कृतिक एकता

और शक्ति के बल से ही लड़कर स्वतन्त्र हो सकते हैं । हमें पहले सांस्कृतिक शक्ति और एकता स्थापित करने के लिये इस के विरोधी शत्रुओं से स्वतन्त्र होना है । इस के बिना अंग्रेज़ों से ऐसा ही है जैसे दासता के वृक्ष की जड़ को छोड़कर पत्तों को छाटते रहना । हम तुम्हारे उद्देश्य से पूरी सहानुभूति है परन्तु सहयोग तो तभी हो सकता है जब कार्यक्रम में एकता हो ।"

मेरे मौन को बाबा ने सम्भवतः सम्मति का ही संकेत समझा । वे बोले—"इस समय राष्ट्र के लिये सब से अधिक घातक है जिन्ना (स्वर्गीय मुहम्मदअली जिन्ना) के नेतृत्व में मुसलमानों की भारतीय राष्ट्रीयता का विरोध करना, राष्ट्र में दूसरा राष्ट्र बनाने की नीति । जिन्ना इस नीति के प्रतीक और प्रतिनिधि हैं । यदि आप लोग इस व्यक्ति को समाप्त कर देने की जिम्मेदारी लें तो स्वतन्त्रता प्राप्ति के मार्ग की सब से बड़ी बाधा दूर करने का प्रयत्न होगा । इस के लिये हम पचास हज़ार रुपये तक का प्रबन्ध करने की जिम्मेवारी ले सकते हैं ।"

मैंने विनीत मुस्कराहट से बाबा के प्रस्ताव के प्रति असमर्थता प्रकट कर दी । हमारी उस समय की कठिन आर्थिक परिस्थिति में और रुपये के तत्कालीन क्रय सामर्थ्य के विचार से पचास हज़ार रुपये की आशा मामूली बात न थी । मिस्टर जिन्ना पर आक्रमण को केवल आर्थिक समस्या हल करने का उपाय भी समझ लिया जा सकता था । अपने राजनैतिक उद्देश्य के लिये राजनैतिक डकैती से अथवा जाली सिक्का बना लेने में भी हम संकोच न था । डकैती में एकाध हत्या हो जाने की सम्भावना रहती थी । मिस्टर जिन्ना की राजनीति से हम सहानुभूति नहीं विरोध ही था परन्तु साम्प्रदायिक मतभेद से हत्या करना हम लोग देशहित या सर्वसाधारण जनता के हित और एकता के विरुद्ध समझते थे । मुझे ऐसा विचार स्वयं अन्ध साम्प्रदायिकता ही जची ।

मैं उसी दिन सन्ध्या दिल्ली लौटने के लिये तैयार हो गया । मेरे चलने से कुछ ही समय पूर्व एक व्यक्ति कपड़े में बंधा लम्बा-सा बण्डल बाबा के पास छोड़ गया । उस के चले जाने पर बाबा बोले— तुम इतनी दूर से आये हो, जल्दी में एक ही चीज तुम्हें दे सकता हूं ।"

हाल ही में लाया गया बण्डल खोलकर उन्होंने हाथ भर लम्बा एक पिस्तौल निकाला । हथियार की गढ़न और रूप देख कर मैं समझ गया कि देहाती लोहार की बनायी चीज है । इस में कारतूस के बजाय नाली के छेद में, गज की सहायता से बारूद और गोली गट्टा भरना पड़ता होगा । फिर भी बाबा की ओर देखकर पूछा— इस के कारतूस ?"

'यही तो इस की विशेषता है ।" मुस्कराते हुए बाबा ने समझाया, "कारतूसों के लिये भटकना नहीं पड़ेगा । इसे जब चाहे भरा जा सकता है ।" बाबा को धन्यवाद देकर वह बोझ उठाने से इन्कार कर दिया और अपनी कमर से

'कोल्ट' पिस्तौल निकाल कर दिखाया कि हम तो ऐसी चीजों की आवश्यकता है जिन्हें सुविधा से शरीर पर छिपाया जा सके।

"जैसी तुम्हारी इच्छा।" कुछ निराश से बाबा बोले, "पर ऐसी विदेशी चीज कितनी मात्रा में जुटायी जा सकेगी ?"

विदाई के समय बाबा दस रुपये का एक नोट मेरे हाथ में थमाते हुए बोले—"तुम्हारा आना व्यर्थ ही हुआ। इस समय मेरे पास यही है। तुम्हारे रेल के किराये या रास्ते के भोजन-छादन में कुछ काम आयगा।

राजनैतिक कार्यक्रम में मतभेद होते हुए भी यह बाबा की व्यक्तिगत वत्सलता और महत्ता का चिन्ह था और मैंने वह नोट आशीर्वाद के रूप में ग्रहण कर लिया।

मिस्टर जिन्ना के सम्बन्ध में बाबा का प्रस्ताव ऐसी मामूली बात नहीं थी कि एक बार मुस्कराकर या उस पर त्योरियां चढ़ाकर टाल दिया जाता। वह सम्पूर्ण राष्ट्र की राजनीति पर बहुत गहरा प्रभाव डालने वाली बात थी। उस का मतलब शायद सैंकड़ों-हजारों हिन्दू-मुसलमानों का पारस्परिक कत्ल होना। मैं ट्रेन में रात भर इसी बात पर विचार करता रहा। देश की राष्ट्रीय एकता की उपेक्षा नहीं की जा सकती थी। विशेष चिन्ता की बात यह थी कि हिन्दू मुसलमान का वैमनस्य बढ़ता ही जा रहा था। मैं और मेरे जैसे लोग जो साम्प्रदायिक दृष्टिकोण को छोड़ चुके थे इस समस्या को केवल मूर्खता ही समझ रहे थे परन्तु यह समस्या निश्चय हमारे देश की सब से बड़ी समस्या थी। मुझे यह आवश्यक नहीं जान पड़ रहा था कि धार्मिक विश्वास भेद के कारण वैमनस्य भी अवश्य हो। 'नौजवान भारतसभा' के प्रसंग में मैं कह ही चुका हूं कि हम लोग साम्प्रदायिक वैमनस्य को मिटाने के लिये लाहौर में मुसलमानों और हिन्दुओं की सभी जातियों के संयुक्त भोजों का आयोजन किया करते थे।

इसी बात पर विचार करते हुए मुझे याद आया कि हम लोगों के बचपन में पंजाब के बड़े बड़े शहरों में भी, खान-पीने की वस्तुओं या हलवाईयों की मुस्लिम दुकानें कहीं नजर न आती थीं। सभी मुसलमान निस्संकोच हिन्दुओं की दुकानों से ही अपनी आवश्यकता पूरी करते थे। इसी प्रकार अनेक व्यवसाय ऐसे थे जिन्हें हिन्दू करते ही न थे। ऐसी वस्तुओं के लिये मुस्लिम दुकानों पर निर्भर करते थे। मुझे यह भी याद आया कि १९१९ में उसी वर्ष लाहौर छोड़ने के पहिले मैंने लाहौर-रावलमण्डी की एक गली के कोने पर लगे म्युनिसिपैलिटी के नल पर हिन्दू-मुसलमान पड़ोसियों में झगड़ा होते देखा था। झगड़े का कारण यह था कि एक हिन्दू अपना घड़ा भरने से पहिले घड़े को नल पर धो रहा था। उस के घड़े से कुछ छींटे समीप खड़े हुए एक मुसलमान के घड़े पर पड़ गये थे। मुसलमान ने अपना घड़ा नापाक हो गया कह कर नीचे में पटक दिया

और हिन्दू का घड़ा भी तोड़ दिया। इस के बाद हिन्दू-मुसलमान पड़ोसी एक-दूसरे का सिर तोड़ने लगे। यह हिन्दुओं और मुसलमानों के व्यापक वैमनस्य का प्रतीक था या दोनों सम्प्रदायों के दिलों म एक-दूसरे के प्रति बैठ चुकी घृणा और ईर्षा को सन्तुष्ट करने का बहाना था।

एक समय था जब मुसलमान हिन्दू ने छूत नही मानते थे या घृणा नही करते थे। हिन्दुओं की घृणा से अपने आत्माभिमान की रक्षा करने के लिए मुसलमानों ने भी बदले म हिन्दुओं से घृणा करना आवश्यक समझा। हिन्दू-मुसलमानों की इस आपसी घृणा म पहल हिन्दू न की। हिन्दू-मुसलमान के आपसी द्वेष की जिम्मेवारी जिन्ना या मुस्लिम लीग पर है या हिन्दू समाज के ऊंचे वर्ण के समझे जाने वाले लोगों पर। हिन्दू केवल विधर्मी मुसलमान से ही घृणा नही करते, व अपने सहधर्मी अधिकांश हिन्दुओं का भी अछूत मानकर उनसे घृणा करते है। हिन्दू समाज म ऊंचे वर्ण के लोगों की अपेक्षा अछूत समझे जाने वाले लोगों की संख्या बहुत अधिक है। हिन्दुओं की इस छुआछूत (अस्पृश्यता) म हिन्दू धार्मिक दर्शन या आध्यात्मिक सिद्धान्त काम नही करते। यह हिन्दू समाज की सामन्तवादी आर्थिक पद्धति या वर्ण-व्यवस्था का अंग है। हिन्दू समाज या भारतीय समाज के निर्वाह के ढंग के बदल जाने या आर्थिक व्यवस्था म परिवर्तन आ जाने से छुआ-छूत की व्यवस्था स्वयं ही शिथिल होती जा रही है परन्तु लोप होने स पूर्व देश की बहुत हानि भी कर रही है।

हिन्दुत्व का धार्मिक दर्शन या आध्यात्मवाद जीव मात्र म, मनुष्य और कुत्ते तक म एक ही आत्मा और समान जीव होने की बात कहता है परन्तु इस समाज की नैतिकता ने ऊंचे वर्णों के शासन मे बंधे समाज को वर्ण-व्यवस्था या अस्पृश्यता के चौखटों म जकड़ कर अपने शासन को मजबूत बनाये रखने मे कसर नही छोड़ी। इस बात की उपेक्षा नही की जा सकती कि हिन्दू समाज मे अस्पृश्यता और साधनहीनता या गरीबी साथ साथ रही है। अस्पृश्यता अथवा वर्ण की हीनता साधनहीनों को शिक्षा और आर्थिक उन्नति का अवसर न देने की व्यवस्था (कानून) का ही नाम था। अर्थ की प्राप्ति और स्वामित्व के अवसर और अधिकारों को अपनी श्रेणी तक सीमित रखने के लिये ऊंचे वर्ण के लोग अपने मुख से प्राणिमात्र की समानता के ज्ञान की बात तो कहते थे परन्तु यह ज्ञान शूद्र के कानों तक जाने देना अनुचित और पाप समझते थे। शूद्र या अछूत के कान म 'ज्ञान' पहुंच जाने पर उन्होंने ज्ञान की बात कहने वाले ब्राह्मण की जीभ काट लेने का नियम नही, शूद्र के कान मे गला हुआ सीसा डाल कर उसे समाप्त कर देने का विधान बनाया था। अस्पृश्यता का आधार साम्प्रदायिक या धार्मिक विश्वास नही [illegible] श्रेणियों का आर्थिक विभाजन ही था। इस देश मे अस्पृश्यता मुसलमानों के आने से पूर्व मौजूद थी और सम्पूर्ण

शोषित वर्ग अपनी आर्थिक विवशता के अनुपात में अस्पृश्य था। जिस वर्ग को जितना अप्रिय और कठिन कार्य करना पड़ता था वह वर्ग उतना ही अधिक हीन और अस्पृश्य समझा जाता था। हिन्दू समाज की अस्पृश्यता सामन्ती युग की क्रूर, शोषक व्यवस्था ही है, जिसमें आर्थिक अवसर और अधिकारों को वंश-क्रम में बांध दिया गया था।

हिन्दुओं से मुसलमानों के विरोध वैमनस्य और प्रतिद्वन्द्विता का व्यवहारिक रूप भी मुख्यतः आर्थिक संघर्ष रहा है। अंग्रेजी सरकार के शासनकाल में इस संघर्ष का क्षेत्र नौकरियों और व्यवसाय के लिये अवसर की मांग थी। मुझे याद है कि बचपन में हमने दफ्तरों सरकारी नौकरियों और व्यवसाय के क्षेत्र में ऊंच वर्ग के हिन्दुओं की ही प्रधानता देखी थी। इसका कारण था इन वर्णों की बेहतर आर्थिक अवस्था और उन के लिये शिक्षा का परम्परागत अवसर। भारत के दस करोड़ मुसलमान विदेश से नहीं आये हैं। वे इसी देश के वासी और हिन्दू समाज का अंग हैं जिन्हें हिन्दू समाज की आर्थिक व्यवस्था (वर्ण-व्यवस्था) ने अवसरहीन और विवश बनाये रखने के लिये अछूत और दलित बना दिया था। इस व्यवस्था का प्रयोजन अधिकांश श्रमिक वर्ग को मानवी अधिकारों से वंचित रख कर, अवसर और साधनों की मालिक श्रेणी के उपयोग के लिये पशु बनाये रखना ही था। इस्लाम ने इन्हें अछूत अवस्था से उठाकर मानवी समता की भावना दी जिसे हिन्दू वर्ण व्यवस्था ने स्वीकार न किया बल्कि मुसलमान मात्र को ही अछूत बना दिया। हिन्दू वर्ण व्यवस्था से पीड़ित और शापित भारत का साधनहीन समाज ही आज इस्लाम और ईसाइयत के दायरों में है। हिन्दुओं के प्रति इनकी प्रतिद्वन्द्विता की जड़ जीवन के लिये अधिकार और अवसर की मांग में ही है। जिस आर्थिक व्यवस्था ने धर्म के नाम पर इस शापित वर्ग के प्रति हिंसा, अन्याय और अत्याचार किया है उसके प्रति शोषित वर्गों की घृणा 'हिंसा' नहीं बल्कि 'प्रतिहिंसा' ही है।

यह ठीक है कि जिन्ना साहब और उनके आन्दोलन को चलाने वाले मुस्लिम पूंजीपति और सामन्ती लोगों को साधनहीन नहीं समझा जा सकता था। वह लोग साधन-सम्पन्न हिन्दुओं से होड़ में अपने सम्प्रदाय की जनशक्ति का लाभ उठा रहे थे। साधन-सम्पन्न और साधनहीन लोगों का संघर्ष श्रेणी संघर्ष के रूप में ही होना चाहिये था। इस संघर्ष को साम्प्रदायिक रूप दे देने की जिम्मेवारी ऊंचे वर्ण के हिन्दुओं की स्वार्थपरता में ही रही है। ऊंचे वर्ण के हिन्दुओं के आर्थिक एकाधिकारों के प्रति शिकायत केवल उन के साम्प्रदायिक प्रतिद्वन्दी मुसलमानों को ही नहीं थी। शनै: शनै: यह प्रतिद्वन्द्विता सभी बहुसंख्यक हिन्दू शोषित वर्गों में भी फैलती जा रही है। बीस वर्ष पूर्व अधिकारों और शिक्षा के अवसरों के लिये जैसे आन्दोलन मुसलमान उठाते थे, आज हिन्दू कहे जाने वाले परि-

गणित श्रेणियो के शोषित लोग भी उठा रहे हैं। देश म एकता स्थापित करने का मार्ग क्या इन सब का दमन कर देना है ? और क्या भारतीय संस्कृति का अर्थ वर्णाश्रम की पुन स्थापना ही है ? क्या वह आज मानव न्याय माना जा सकता है ? क्या सभी के लिये बटन सुलभ हो जाने पर भी मिर्जई मे तनिया लगाये रहने के आग्रह से ही हम भारतीय संस्कृति की रक्षा कर सकते हैं ? अलबत्ता तनियो को बटनों से अधिक सुविधाजनक मान लिया जाय तो दूसरी बात है।

साम्प्रदायिक विश्वासो का प्रभाव समाज की संस्कृति पर अवश्य पडता है परन्तु उससे अधिक सम्प्रदाय के आचार पर समाज विशेष की संस्कृति और परिस्थितियो का पडता है। उत्तर प्रदेश बंगाल और अफगानिस्तान के मुसलमानो के और भारत, बर्मा और जापान के बौद्धों का आचार और संस्कृति एक से नहीं है। इसके विपरीत किसी भी देश के एक ही भाग के परम्परागत निवासियों की संस्कृति और भाषा एक सी ही होती है।

बाबा सावरकार या प्राचीन आर्य संस्कृति की पुन स्थापना के समर्थक लोगो को आधुनिक भारतीय संस्कृति पर केवल मुस्लिम प्रभाव से ही आपत्ति नहीं वे पश्चिम की औद्योगिक सभ्यता के प्रभाव से भी खिन्न हैं। खिन्नता प्रकट करते हुये उसे अजान मे स्वीकार भी करते जा रहे हैं। संस्कृति को भौगोलिक सीमाओ से बांध कर रखना असम्भव है और भौगोलिक परिस्थितियों और जलवायु का प्रभाव हमारे जीवन निर्वाह के ढंग पर अनिवार्य है।

समाज के जीवन निर्वाह का ढंग ही उस की संस्कृति है। जैसे भौगोलिक स्थितियों का प्रभाव हमारे जीवन निर्वाह के ढंग पर पड़ता है वैसे ही मनुष्य द्वारा आविष्कृत पैदावार और निर्वाह के साधनों का प्रभाव भी समाज के जीवन निर्वाह के ढंग और संस्कृति पर पडता है। औद्योगिक संस्कृति द्वारा उत्पन्न भौतिक साधनो को अपनाना जरूरी है तो उस संस्कृति के दूसरे प्रभाव भी हमारे जीवन निर्वाह के ढंग पर पडे बिना न रह सकेंगे। हम यदि बिरजिस के साथ चमरौधा जूता पहनने की जिद्द करेंगे तो ऐसी जिद्द केवल विरूपता और उलझन ही पैदा करेगी। पुरातन भारतीय संस्कृति म औद्योगीकरण और उस के प्रभावों का सन्तुलन और सामंजस्य करने से ही हमारी आधुनिक भारतीय संस्कृति का रूप निश्चित होगा।

दिल्ली लौट कर मैंने भगवती भाई और आजाद को बाबा सावरकर से भेट के लिये यात्रा का परिणाम सुनाया। जिन्ना साहब के सम्बन्ध म बाबा का प्रस्ताव सुन कर आजाद झुंझला उठे—यह लोग क्या हम पेशेवर हत्यारा समझते हैं। बाद म हम लोग हाथ भर लम्बे देशी पिस्तौल की बात याद कर खूब हंसते रहे। यह बात केवल हंसी की ही नहीं थी। उस देशी पिस्तौल के प्रति बाबा के

अनुराग, उन के विचार में भारतीय संस्कृति के प्रति अनुराग का प्रतीक था। अपने विश्वास के प्रति बाबा की निष्ठा और त्याग के सम्बन्ध में सन्देह का अवसर कतई नहीं था परन्तु सावरकार बन्धुओं और हम लोगों के राष्ट्रीय दृष्टिकोण में उतना ही अन्तर आ चुका था जितना कि देहाती लोहार के बनाये, गज से भरे जाने वाले पिस्तौल में और मैगज़ीन में एक साथ आठ गोली भर कर चलाये जाने वाले पिस्तौल में होता है। हम विलायत में बने पिस्तौल को छोड़ कर भारतीय देहाती पिस्तौल पर भरोसा करने के लिये तैयार न थे, केवल इसलिये कि वह स्वदेशी है। हाँ, विदेशी पिस्तौल जैसा कारगर—बल्कि उस से अच्छा भारतीय पिस्तौल बना लेना चाहते थे।

सावरकर बन्धुओं ने विदेशी दासता विरोधी राष्ट्रीयता की भावना को हिन्दू संस्कृति की रक्षा की जिस नींव पर खड़ा किया था वे अब भी उसी पर बैठे हुए थे। केवल सावरकर बन्धु ही नहीं, सशस्त्र क्रान्ति की चेष्टा के प्रारम्भिक युग में दूसरे नवयुवक भी विदेशी दासता-विरोधी राष्ट्रीयता को अपने साम्प्रदायिक और धार्मिक विश्वासों से अनुप्राणित कर रहे थे। खुदीराम बोस और कन्हाईलाल दत्त फांसी के तख्ते पर चढ़ते समय भारत माता और माता राधा के चरणों को एक साथ मान कर दोनों पर बलिदान होने का विश्वास लिये थे। यही बात अंग्रेजों के विरुद्ध 'कूका विद्रोह' या 'वहाबी बगावत' करने वाले सिख और मुस्लिम क्रान्तिकारियों में भी थी। हि० स० प्र० स० के लोग अपने अग्रगामी विदेशी सरकार विरोधी क्रान्ति की चेष्टा करने वालों का गौरव और उन के प्रति कृतज्ञता स्वीकार करके भी साम्प्रदायिकता और राष्ट्रीयता को अलग-अलग समझ कर, साम्प्रदायिक दृष्टिकोण छोड़ चुके थे। इस का कारण था, इस बीच भारतीय विचारधारा का पश्चिमी औद्योगिक और अधिक विकसित विचाराधारा के निकट सम्पर्क में आ जाना और हमारा आयरलैंड, इटली, टर्की के विकास और १९१७ की सोवियत समाजवादी क्रान्ति से प्रभावित हो जाना।

हम लोग साम्प्रदायिक आदर्शवाद की जगह मार्क्सवादी वैज्ञानिक भौतिक दर्शन की ओर आकर्षित हो चुके थे इसलिये हम लोगों में से किसी को जेल की कोठरी या फांसी के तख्ते पर 'राम-नाम' की सहायता की आवश्यकता अनुभव नहीं हुयी। भगतसिंह ने फांसी के तख्ते से भी 'इन्कलाब ज़िन्दाबाद!' और 'साम्राज्यवाद, मुर्दाबाद!' के ही नारे लगाये, जो नितान्त भौतिक लक्ष्य हैं। वैज्ञानिक भौतिकवादी दर्शन से आत्मविश्वास का बल पा लेने का सब से अच्छा उदाहरण मैंने यतीन्द्रनाथ बनर्जी की मृत्यु के समय फतेहगढ़ जेल में देखा।

१९३४ का जून मास था। फतेहगढ़ सेन्ट्रल जेल की बात है। 'सी' क्लास (तीसरे दर्जे) के क्रान्तिकारी बन्दी रमेश गुप्त के साथ जेल अफसरों के दुर्व्यवहार का समाचार पाकर हम लोगों ने विरोध में भूख हड़ताल कर दी थी, कुछ

हि० स० प्र० स० के लोगों के उदाहरण स्वरूप मणा की मृत्यु एक दृष्टान्त है। ऐसा ही व्यवहार मृत्यु के समय भगवती भाई का भी था। यह बात प्रसंग आने पर ही कहूंगा।

साम्प्रदायिकता के सम्बन्ध में अपने साथियों के विचारों या व्यवहार के सम्बन्ध में यहां इतना ही कहना पर्याप्त है कि हम लोग हिन्दू-मुसलमान का भेद स्वीकार नहीं करते थे। भैया आजाद ब्राह्मण सन्तान थे। दल में उन का एक उपनाम 'पंडित जी' भी था। आवश्यकता पड़ने पर पूजा आचमन का अनुष्ठान वे बहुत शुद्धता और पूर्णता से दिखा सकते थे परन्तु उन्हें जनऊ पूजा और सध्या से चिढ़ हो गयी थी। इसे वे आत्मविश्वास की कमी और बुद्धि की परवशता और वृद्ध अवस्थाओं में ढोंग समझते थे। पूजा सध्या करने वाले व्यक्ति की ईमानदारी में उन्हें सन्देह ही रहता था।

भगवती भाई पूजा-पाठ से चिढ़ते तो नहीं थे लेकिन ऐसी चर्चा को व्यर्थ समझते थे। मांस न आजाद खाते थे न भगवती भाई परन्तु मांस और सब्जी एक साथ मिला कर पकाने से मांस को छोड़ कर सब्जी मजे से खा लेते थे।

वाइसराय की गाड़ी के नीचे विस्फोट

दल की ओर से अनुमति मिन जाने पर भी हम नवम्बर के अन्त मे वाइसराय की गाडी के नीचे विस्फोट न कर सके थे, इस बात के लिय मन म बहुत ग्लानि थी। अब फिर अवसर आ रहा था। वाइसराय दिसम्बर (१९२९) के तीसरे सप्ताह मे कोल्हापुर जा रहा था और दिसम्बर २३ को दिल्ली लौटने का कार्यक्रम था। उसी दिन दिल्ली मे गाधी जी वाइसराय से भेट करने वाले थे। राजनैतिक दृष्टि मे वाइसराय पर इसी समय आक्रमण करने का विशेष महत्व था और हम चूकना नही चाहते थ।

इन्द्रपाल को सन्देश भेजा कि हसराज को उस की मूर्छा 'गैस' या मूर्छा'वेव' सहित १८-१९ दिसम्बर तक दिल्ली अवश्य पहुचा दे। इन्द्रपाल और हसराज २० तारीख को दिल्ली पहुचे। उनके आ जाने म हमे सात्वना हुई परन्तु हसराज की बात न सब उत्साह समाप्त कर दिया। उस ने बताया कि गैस के बल्ब बिल्कुल ठीक बन गये थ। लाहौर तक वह बल्वो को सुरक्षित ले आया था परन्तु लाहौर से दिल्ली के लिय चलते समय वह स्टशन तक जिस टागे मे गया, उस मे उस का बक्स हिलता रहा और गैस के बल्ब टूट गये। इस समय इन्द्रपाल उस के साथ न था। हसराज ने बताया कि 'गैस' बहुत अच्छी बनी थी। बकस के भीतर गैस का बल्ब टूट जाने का प्रभाव यह हुआ कि टागे मे बैठी सवारिया टागे वाला और घोडा सब बेहोश हो गये। उस के पास गैस की अवरोधक औषध जेब म मौजूद थी इसलिये वह बच कर भाग आया।

हसराज की गैस लाहौर म ही नष्ट हो जाने के कारण वह लायलपुर लौट जाना चाहता था परन्तु इन्द्रपाल हमारे आदेशानुसार उसे दिल्ली ले ही आया कि वह शायद कोई अन्य उपाय बता सके। हम लोगो के बहुत चिंतित और गम्भीर हो जाने पर हसराज ने आश्वासन दिया—गैस न सही, उस के पास एक तीसरा आविष्कार था, शायद उस से काम बन जाये। पिछली बार दिल्ली मे उस ने हमे एक गज की दूरी से, बिना तार के बैटरी से बिजली चालू कर

देने का चमत्कार दिखाया था। अपने इस आविष्कार को वह 'एकगजी' कहता था। हंसराज ने हमें तसल्ली दी। एक गजी का प्रभाव अब पांच सौ गज दूर तक हो सकेगा।

हम लोग इस आविष्कार से काम करने के लिये तैयार हो गये।

हंसराज ने हम लोगों से दो या तीन रुपये लिये और आवश्यक पदार्थ बाजार से ले आया। ऐसे चामत्कारिक पदार्थ खरीदने के समय वह हम लोगों को साथ न ले जाता था। उस ने दोपहर तक कुछ गोलियां और दूसरी चीजें पीस कर और पानी में घोल एक छोटी बोतल तैयार कर ली और बोला कि 'पांच सौ गजी' तैयार है।

हम लोगों ने इस आविष्कार का प्रभाव पांच सौ गज तक आजमा लेना चाहा। इस वस्तु से जहां काम लेना था, उसी स्थान पर परीक्षण करना उचित समझा। अब कई दिन पूर्व लाइन के नीचे बम गाड़ देने और फिर निश्चित तारीख तक बमों के ठीक दबे रहने की रखवाली करते रहने का न तो समय था और न जरूरत इसलिये सोचा कि तहखड बना जाये।

उस दिन दिसम्बर की २१ तारीख थी। २३ तारीख सुबह छः बजे ही वाइसराय की गाडी दिल्ली लौटने वाली थी। बीच में केवल एक रात और एक दिन ही शेष थे। नयी दिल्ली और निज़ामुद्दीन स्टेशनों के बीच, नयी दिल्ली से कवल चार मील दूर, कौरव-पाण्डवों के किले के खण्डहर के समीप हमने लाइन के नीचे बम दबाने का निश्चय कर लिया। यहां भी लाइन के नीचे एक पुल और लाइन पर घुमाव है। खूब गहरी ढलवान भी है। यहां गाडी के गिरने पर तहखड की जगह की अपेक्षा भी गाडी पर बहुत अधिक चोट पडती।*

इन्द्रपाल को लाइन पर बम दबाने के लिये चुनी हुई जगह पर जबी बैटरी में एक छोटा बल्ब लगाकर बैठा दिया कि जब बल्ब जले हम संकेत कर दें। मैं और हंसराज इन्द्रपाल को केन्द्र मानकर 'पांच सौ गजी' लिये लाइन से लगभग चार सौ गज की दूरी पर चक्कर लगाने लगे कि आविष्कार का प्रभाव देखा जा सके। आविष्कार की शीशी हंसराज के ही हाथ में थी। हंसराज ने बताया कि उस के आविष्कार का प्रभाव केन्द्र से पांच सौ गज के वृत्त में सभी जगह नहीं होगा। इस सम्पूर्ण जगह में उस के आविष्कार से बिजली की केवल एक ही सूक्ष्म 'वेव' धारा बनेगी। यह बात मुझे कुछ विचित्र लगी।

मैंने सुझाव दिया कि पांच सौ गजी को लिये घूमने के बजाय उसे सड़क के पास एक जगह जमा दिया जाय जहां से इन्द्रपाल का इशारा देखा जा सके।

---

* दिल्ली नगर बहुत फैल जाने से यह स्थान बस्ती के भीतर आ गया है। रेल लाइन अब भी आस-पास की धरती से ऊंची है।

'पाच सौ गज' और बैटरी की विद्युत्धारायें यदि अलग-अलग है तो दोनो चीजो को अपनी-अपनी जगह पर दूसरे से विपरीत दिशाओं मे लट्टुओं की तरह घुमा कर देख लेने से किसी न किसी बिन्दु पर वे मिल ही जायगी।

हसराज ने मेरे सुझाव को गलत बताया और बोला—"नही, तुम इस बात को नही समझते। मैं स्वय रात भर मे इस इस प्रकार सुधार दूगा कि विद्युत्-धारा की दिशा खोजने की झझट मे करना पडे।"

सूर्यास्त हो गया था इसलिये हम लौट आये। लौट कर मैंने भगवती भाई से सलाह कर निश्चय किया कि जैसे भी हो २३ तारीख सुबह बम-विस्फोट अवश्य किया जायगा इसलिये बम आज ही रात कौरव पाडवो के किले के पास गाड दिये जायें। अवसरवश साथी लेखराम और भागराम भी दिल्ली मे ही थे। लेखराम को तो इसलिये बुलाया था कि विस्फोट से पूर्व हमारा सामान, साइकिलें आदि गेहनक ले जाये और हम घटना से पहिली रात सराय छोड दे। भागराम को कुछ दिन पूर्व ही जम्मू से बुला लिया था कि बम ढालने के काम मे सहयोग देने के लिये भैया का साथ कर दें।

भगवती भाई और मैं दोनो ही इस समय मृत्यु या गिरफ्तारी की सम्भावना का सामना कर रहे थे इसलिये हमारे साथियों का सम्पर्क मुख्य दल से हो जाना उचित था। हम चार आदमी रात साढे ग्यारह बजे बम लेकर पुराने कौरव-पाडवो के किले के पीछे निश्चित स्थान पर पहुचे और डेढ-एक घण्टे में बम दबा कर लौट आये।

दूसरे दिन सुबह हसराज ने फिर अपने आविष्कार के परीक्षण शुरू किये। उस ने बिना तार के डेढ गज की दूरी से बैटरी पर लगा बल्ब जला कर दिखाया। आविष्कार की शीशी उस के हाथ मे होने से तो बल्ब जल जाता था परन्तु आविष्कार की शीशी किसी दूसरे के हाथ मे होने से नहीं जलता था।

हसराज ने ही फैसला कर दिया—"इस बार तुम लोग तार गाड कर बैटरी से विस्फोट कर लो। भविष्य के लिये मैं गैस और दूसरी चीजें अच्छी मात्रा मे ऐसी बना दूगा कि उन का उपयोग जो चाहे कर सकेगा।" हम लोग हसराज के ढग पर दांत पीस कर रह गये। हसराज दल का साथी तो था नहीं कि दल की आज्ञा न मानने पर उसे दण्ड देने की बात सोची जाती। अब चिन्ता हुई कि शीघ्र ही बैटरी और तारो का प्रबन्ध किया जाये। हसराज ने एक महत्वपूर्ण सहायता दी कि ढाई-ढाई आने मे मिलने वाले जेबी बैटरी के दो चपटे सेल एक डिब्बे मे जोड कर उस मे एक स्विच लगा दिया और डिब्बे मे तार को जोडने के लिये दो जगहें बना दी। पांच आने मे ऐसी बढिया बैटरी बना लेना जो ढाई-तीन सौ गज तक काम दे सके, स्वय हमारे लिये सम्भव न था। हमे विश्वास था कि हसराज सब कुछ कर सकता है। वह भय के कारण हमारी

सहायता नहीं कर रहा था। एक बार हमारी सफलता देख कर उस का साहस बढ़ जायगा।

हम लोग बाजार में तार लाने जा रहे थे। उसी समय कैलाशपति ने आकर समाचार दिया कि भैया ने हमें आवश्यक बात के लिये बुलाया है। मैं और भगवती उस के साथ 'कुदसिया बाग' पहुँचे। भैया के साथ एक और भी व्यक्ति था, लम्बा चौड़ा शरीर गहुआ रंग, तीखी आँखें।

भैया ने बात शुरू की— मैंने दल की ओर से २३ तारीख की घटना के लिये अनुमति दे दी थी लेकिन कई ऐसी समस्यायें आ पड़ी हैं कि इस बात पर दुबारा विचार कर लेना आवश्यक है।' वे लगभग पाँच-छः मिनिट बोले। अभिप्राय यही था कि गणेशशंकर जी विद्यार्थी से उन्होंने फिर परामर्श किया है और उन का कहना है कि लाहौर में २४ तारीख में कांग्रेस अधिवेशन होने जा रहा है। यह कांग्रेस के इतिहास में बहुत महत्वपूर्ण अधिवेशन होगा। पिछले वर्ष कलकत्ते के अधिवेशन में यह प्रस्ताव पास हुआ था कि यदि सरकार एक वर्ष में कांग्रेस की मांगों को पूरा न कर दे तो कांग्रेस १९२९ के अधिवेशन से व्यापक सार्वजनिक आन्दोलन आरम्भ कर देगी। १९२८ में गांधी जी ने इस बात की प्रतिज्ञा कर ली थी। अब यह उनके आन्दोलन आरम्भ करने का समय है। इसलिये गांधी जी लाहौर अधिवेशन में जाते समय कल यहां दिल्ली में वाइसराय से आखिरी बात करने जायेंगे।

मैंने और भगवती भाई ने सुझाया कि कांग्रेस ने १९२८ में जो चेतावनी ब्रिटिश सरकार को एक वर्ष में अपनी शर्तें पूरी करने के लिये दी थी, उन की सरकार ने उपेक्षा कर दी है। यह बात हमने अपनी घोषणा में, जो कि विस्फोट के बाद प्रकाशित की जायगी, स्पष्ट कर दी है। सरकार ने देश की माग की उपेक्षा करके राष्ट्र का अपमान किया है। उसी के प्रति हम लोग इस घटना द्वारा विरोध प्रकट कर रहे हैं। यदि कांग्रेस सचमुच आन्दोलन आरम्भ करना चाहती है तो इस घटना से जनता का उत्साह कम न होकर बढ़ेगा ही। सरकार द्वारा देश की माग की उपेक्षा किये जाने पर भी गांधी जी का वाइसराय से फिर मुलाकात के लिये प्रार्थना करना देश और कांग्रेस दोनों का अपमान है इसलिये हम मुलाकात की तारीख के दिन सुबह ही वाइसराय को समाप्त कर देना चाहते हैं। यह हमारी ओर से कांग्रेस की समझौतावादी नीति का विरोध है। कांग्रेस तो युद्ध घोषणा से सदा ही कतराती रहेगी। जब हम जनता की ओर से सरकार के साथ समझौता असम्भव कर देंगे, तभी संघर्ष शुरू होगा।

भैया के साथ नये आये व्यक्ति का परिचय हमें युक्त प्रान्त के बहुत महत्वपूर्ण संगठनकर्ता बी० (वीरभद्र तिवाड़ी) के नाम से दिया गया था। पैनी

दृष्टि से देखकर आँखें झुकाये, घास मे उगली चलाते हुये बात करने का उस का तरीका मुझे बहुत विचारपूर्ण और प्रभावोत्पादक मालूम हुआ था।

वीरभद्र न समस्या की बहुत लम्बी चौडी व्याख्या की जिस का अभिप्राय था कि वह हम लोगो से पूर्णतया सहमत है परन्तु विद्यार्थी जी और दूसरे काग्रेसी नेताओ की सहानुभूति खो बैठना दल के लिये उचित नही होगा इसलिये घटना को सप्ताह भर के लिय स्थगित कर दिया जाय। गाधी जी और वाइसराय की भेंट का परिणाम देख लेन से काग्रेसी नेताओ को सन्ताप हो जायगा। उस ने यह भी कहा कि यह विश्वस्त सूत्र से मालूम हुआ है कि पण्डित जवाहरलाल के नेतृत्व म इस बार सघर्ष अवश्य ही आरम्भ हो जायगा। गाधी जी भी इस के लिये तैयार है। इसीलिय पण्डित नेहरू को उग्र पक्ष के प्रतिनिधि के रूप मे काग्रेस का मूल्य भी अधिक होगा।

दिल्ली मे दल के प्रतिनिधि कैलाशपति न भी घटना स्थगित कर देन का ही अनुमोदन किया। उस का तर्क था कि अभी दल की शक्ति सरकार पर इतनी बडी चोट करने योग्य नही है। इस घटना क बाद सरकार जैसी प्रतिहिंसा से क्रातिकारियो की छानबीन करेगी उससे दल को बहुत नुकसान पहुचा। बहस उपरोक्त युक्तियो और तर्क अनेक प्रकार से दोहरा-दोहरा कर प्राय चार घण्टे तक चलती रही। न मैं और न भगवती भाई वीरभद्र और कैलाशपति का बात मानने को तैयार हुए और न व दोनो हम लोगो से सहमत।

आजाद का मत था कि हम दूसरे लोगो क हाथ की कठपुतली नही बनना चाहिये। एक बार तो उन क कहन स घटना स्थगित की जा चुकी है परन्तु बिना सोचे कदम उठाना भी ठीक नही है। यह केवल हमारा शौक ही तो नही है। काग्रेस की अहिंसात्मक, समझौतावादी नीति और हमारी नीति अलग अलग है। आप लोग सोच-समझ कर निश्चय कीजिये। काम सर्वसम्मति म होना चाहिय।

बहस समाप्त ही नही हो रही थी। मेरे मन म बिजली के तार खरीद लाने की खलबली मची हुई थी। बहस का अन्त होता न देखकर मैं कुछ देर म लौट आने की बात कह कर उठ गया। बाजार से ढाई सौ गज बिजली का साधारण, पलस्तिकल तार खरीद कर नये बाजार की जगह में पहुचा और हसराज की सहायता से तारो मे जोड लगा कर उन्हे बैटरी म जोड कर तारो के दूसरे सिरे पर बल्ब लगाकर तारो के ठीक होने का परीक्षण करने लगा।

लगभग छ बजे भगवती भाई भी लौट आये। उन का चेहरा उदास था। मुझे एक ओर बुलाकर उन्होने बताया कि फैसला विस्फोट स्थगित कर देने का हुआ है।

"नही, अब स्थगित नही होगा।" मैंने दृढता से कहा।

"यह कैसे हो सकता है!" उन्होने विरोध किया।

"उन लोगों की बातों से न मेरा समाधान हुआ है न तुम्हारा इसलिये इस निर्णय का विरोध करना हमारा नैतिक कर्तव्य है, चाहे जो मूल्य देना पड़े।"

"यह ठीक नहीं है।" भगवती ने मेरी बात अस्वीकार कर दी।

"मैं तो इसी रात विस्फोट करूंगा।" मैं अड़ गया, "न मैं जिन्दा लौटूंगा, न मुझे जवाबदेही करनी पड़ेगी। मेरे बाद तुम दल को उत्तर दे सकते हो कि यशपाल नहीं माना। यदि मैं घटनास्थल से जीवित लौट आया तो घटना के प्रभाव से जनता की दृष्टि में दल का बढ़ा हुआ आदर हम लोगों की सफाई होगी। इस पर भी यदि दल मुझे अपराधी ठहरायेगा तो जो दण्ड होगा, मैं झेल लूंगा। यदि दल चाहे तो आज्ञाभंग के अपराध में मुझे गोली मार दे।"

भगवती भाई कुछ देर मौन रहे और फिर निश्चय से बोले—"हम दोनों एक साथ हैं। जो होगा देखा जायगा। विस्फोट स्थगित नहीं करेंगे।"

दल ने विस्फोट स्थगित करने का फैसला कर लिया था इसलिये हम लोगों ने दल की ओर से इस अवसर पर जो घोषणा 'कमाण्डर-इन-चीफ करतारसिंह' अर्थात भैया के नाम से लिखी थी, उस का उपयोग न हो सकता था। इससे पूर्व कमाण्डर-इन-चीफ के स्थान पर कल्पित नाम बलराज दिया जाता था। इस घोषणा पत्र पर लगाने के लिये भैया ने हमें दल की मोहर दे दी थी। घटना स्थगित कर दी जाने के कारण भैया ने भगवती भाई से मोहर लगे घोषणापत्र और मोहर लौटा देने के लिये कहा था। इस मोहर में तोरण या मेहराब की तरह बनी हुई दो तलवारों के साथ H S R A अक्षर बने हुए थे और नीचे दो हाथ एक-दूसरे से मित्रता में बंधे अंकित थे। यह मोहर विदेशी सरकार से युद्ध और देश की सम्पूर्ण जनता की एकता के चिन्ह स्वरूप थी।

वीरभद्र तिवाड़ी का सुझाव घटना को केवल सप्ताह भर के लिये स्थगित कर देने का था। दिसम्बर के अन्त में वाइसराय प्रायः ही नये वर्ष का त्योहार मनाने कलकत्ते जाया करते थे। उस समय भी उनकी गाड़ी के नीचे विस्फोट किया जा सकता था परन्तु हम लोगों को घटना स्थगित करना मंजूर न था। हमारे विचार में राजनैतिक दृष्टि से घटना का कांग्रेस से पहले होना अधिक उपयोगी था क्योंकि इससे कांग्रेस के निर्णयों पर प्रभाव पड़ने की सम्भावना थी। दूसरी ओर कांग्रेस की समझौतावादी नीति अपना लेने पर यदि हम उस नीति के विरुद्ध प्रदर्शन करते तो यह कांग्रेस से विरोध प्रकट करना ही होता। हम जनता के सामने कांग्रेस के विरोधी के रूप में नहीं, बल्कि स्वयं विदेशी सरकार का उग्र विरोध करने वाले एक संगठन के रूप में आना चाहते थे।

उपरोक्त बात केवल तटस्थ राजनीति जान पड़ेगी परन्तु उस समय मैं केवल तटस्थ दृष्टि से ही समस्या पर विचार नहीं कर रहा था। इस घटना के तुरन्त किये जाने से मेरा व्यक्तिगत लगाव भी था। अक्टूबर में जब घटना की पूरी

तैयारी हो चुकी थी, भगवती भाई ने ध्रुव जी से मेरा एक फोटो फौजी अफसर की पोशाक म (सिर पर हैलमट, फौजी वर्दी पर थाडी पेटी कसे, बिरचिस और घुटनो तक बूट पहने, घुडसवार पल्टन के मेजर की पोशाक मे) इस विचार से बनवा लिया था कि मेरी लगभग निश्चित मृत्यु के बाद स्मृति के रूप मे रह सकेगा। हम लोग किसी भी साथी के निश्चित मृत्यु की ओर जाते समय प्राय उस का एक फोटो बनवा लिया करते थे। इन्द्रपाल जब सिर मुडा कर तेहखड म साधु बनने गया था तो उस का भी एक फोटो साधारण वेश में बनवा लिया गया था। यह फोटो खिच जाने के बाद से मैं अपने आप को बलिदान हो चुका ही समझने लगा था। अब जीता-जागता बने रहने म, अपनी दृष्टि म ही अपमान और लज्जा अनुभव हो रही थी। यदि २३ दिसम्बर को ही विस्फोट कर देने का निश्चय जिद्द कहा जाय तो इस जिद्द का कारण मेरी आत्मसम्मान की भावना या अहकार भी समझा जा सकता है।

भगवती भाई घोषणा के कागज और मोहर इत्यादि भैया को लौटाकर प्राय साढे आठ नौ तक लौट आये। साइकिलें और दूसरा सामान जो सुविधा से लेखराम और इन्द्रपाल रोहतक या लाहौर न ले जा सकते थे, मयालीराम जी गुप्त के मकान पर पहुचा दिया गया। साढे नौ बज गये थे। विलम्ब न करने के विचार म भोजन किये बिना ही बैटरी, तारो के गुच्छे और ज़मीन खोदने के औजार लेकर हम लोग कौरव-पाण्डवो के किले की ओर पैदल चल दिये।

लेखराम, भागराम, इन्द्रपाल, हसराज सभी लोगो के हमारे यहा होने के कारण अच्छी-खासी भीड थी। हमारे पडोसियो ने मुझ से पूछा—"ठाकुर साहब, क्या बात है, बहुत मेला लग रहा है?"

"अज मेला समाप्त हो जायगा।" मैंने मुस्कराकर उत्तर दिया और फिर उनका समाधान किया, "आज रात विलायत जा रहा हू। घर-गाँव के लोग है। मिलन के लिये आ गये हैं, मानो फासी पर चढ रहा हू।"

साथियो को भूख लगी थी। रास्ते मे 'खारीबावली' मे कुछ पूरिया और मिठाई ले ली। हम लोग तार गाडने के स्थान पर समय से कुछ पहिले ही पहुच गये थे। लाइन पर से सवारी गाडी गुजर जाने की प्रतीक्षा म खडहर के एक भाग पर बैठ कर भूख मिटाने लगे। भूख मालूम होने पर भी मैं मानसिक तनाव के कारण कुछ खा न पा रहा था। दिन भर और उससे पहली रात भी कुछ खा न सकने से मुह कडवा और अरुचि हो रही थी।

मुझे कुछ खाते न देखकर इन्द्रपाल ने टोका—"अरे, इस बलि के बकरे को अच्छी तरह ठूस-ठूस कर खिलाओ। बकरे को खूब खिला-पिला कर मन्दिर म ले आया जाता है। भूखा रहेगा तो इसकी आत्मा तडपती रहेगी।" और

मुझे दिखाकर खुद खाता जा रहा थी।

"तू क्या समझता है, यहीं पीछा छोड दूगा ? भूत बन कर आऊगा और तेरी खोपडी पर सवार रहूगा।" मैंने हसी म उत्तर दिया। तब क्या मालूम था, हमारी उस मण्डली के अधिकाश साथी—भगवती भाई, भागराम और इन्द्रपाल मुझ मे पहल ही चल देंगे। गाडी गुजर जाने पर हम लोगों ने तार गाडना शुरू कर दिया। पिछले दो दिन की हल्की वारिश से जमीन नम और नरम थी। दो ही घण्टे मे ढाई सौ गज तार गाडकर हम लोग लौट चले।

लाइन के नीचे जमा से जाता हुआ तार जहा समाप्त होता था वहा से सडक लगभग दो सौ गज दूर थी। सडक तक की जगह रेतीली और भुरभुरी थी। मोटरसाइकिल को सडक पर छोड देना आवश्यक था। भगवती भाई ने शका की, तुम मोटरसाइकिल सडक पर छोडकर बैटरी का स्विच दवाने यहा तक आओगे। कुछ देर पहले ही आना पडेगा। घण्टे डेढ घण्टे प्रतीक्षा करनी पड सकती है। इस बीच म सडक पर अकेली खडी गाडी पर किसी का भी ध्यान जायगा। हो सकता है उस समय कोई रौंद इधर से गुजरे। ऐस समय कोई आदमी साइकिल के समीप होना आवश्यक है जो कुछ जवाब द सके। कह सके कि दिल्ली आने समय गाडी बिगड जाने के कारण या तेल समाप्त हो जाने के कारण रुकना पड गया है। अकेली पडी गाडी की चोरी भी हो सकती है। मोटरसाइकिल चोरी हो गयी तो तुम बच सकने का अवसर होने पर भी न बच सकोगे

रेल लाइन से हम लोग लगभग दो बजे नया बाजार की जगह मे लौट आये। थोडा-बहुत शेष बचा सामान समेटा गया। मैंने फौजी अफसर की वर्दी पहन ली और अपने दूसरे कपडे भगवती भाई को सौप दिये। पहले यह निश्चय था कि इन्द्रपाल, हसराज और भागराम चार बजे की गाडी से लाहौर लौट जायगे, लेखराम रोहतक लौट जायगा और भगवती भाई गाजियाबाद स्टेशन पर जरूर मेरी प्रतीक्षा करेंगे

वाइसराय की गाडी के नयी दिल्ली पहुचने का समय प्राय छ बजे था। उससे छ-सात मिनिट पहले गाडी को कौरव-पाण्डवों के किले के पीछे से गुजरना चाहिये था। घटना के बाद यदि मैं बिना बाधा पाये निकल सकता तो मोटर साइकिल पर सीधा गाजियाबाद चला जाता। साइकिल को गाजियाबाद स्टेशन पर छोडकर मैं और भगवती भाई कलकत्ते के गुजान शहर मे जा छिपते। उन दिनों कलकत्ते म बडे दिन की घुडदौड के कारण बहुत भीड भी रहती थी। सब लोगों के अपनी-अपनी दिशा मे चल पडने से पहले भगवती बोले—"साइकिल की रखवाली के लिये मैं तुम्हारे साथ जाऊगा।"

सिर्फ साइकिल की रखवाली के लिये भगवती भाई को ... [illegible]

मुझे उचित न जचा। मैने उन्हे साथ ले जाने का विरोध करके कहा— अच्छा हो यदि भागराम मेरे साथ जाय। लडाई मे कोई गोली मेरे हाथ या बाह मे लग जाने पर भी मैं बचा रहू तो मैं पीछे बैठ जाऊगा और वह तेज साइकिल चलाकर मुझे गाजियाबाद पहुचा देगा।

भागराम तुरन्त तैयार हो गया। वाइसराय की गाडी के नीचे विस्फोट करने के कारण मुझे प्राय साहसी समझा गया है क्योकि मैं निश्चित मृत्यु का सामना करने गया था। इस दृष्टि से भागराम का साहस मेरी अपेक्षा अधिक सराहनीय माना जाना चाहिये। मैं तो कई दिन से इस बात के लिये तैयार ही नही कर रहा था बल्कि जूझ रहा था। भागराम इशारा पाते ही एक क्षण मे मेरा साथ देने के लिये तैयार हो गया। भागराम साधारण वेश मे था। साधारणत उस का स्वास्थ्य ठीक न रहने कारण जाडे मे उस ने एक पुराना फौजी ओवरकोट कबाडी के यहा से खरीद लिया था। वह इस समय बहुत काम आया। एक पिस्तौल उसे भी दे दिया गया कि मेरे सडक से आगे चले जाने पर अपने ऊपर आये सकट का सामना कर सके और दोनो के सकट मे पडने पर दोनो लड सके। खैर भगवती भाई को गाजियाबाद जाना पडा।

सब लोगो के चले जाने के बाद हम लोग लगभग प्रात साढे चार बजे चुपचाप मकान के जीने से उतर गये। मोटरसाइकिल नीचे गली मे। उसे सडक तक धकेल कर ले गये ताकि गली का सन्नाटा भग न हो। सडक पर गाडी को चालू किया। भागराम मेरे पीछे अदली के रूप मे बैठ गया और हम लोग घटनास्थल के लिये चल दिये। पहले दो दिन वर्षा होती रहने के कारण उस रात सर्दी और कोहरा बहुत था। घने कोहरे मे सडक के किनारे बिजली के लैम्प प्रकाश के धुधले बिन्दु मात्र जान पडते थे। मोटरसाइकिल के लैम्प का तीव्र प्रकाश भी कोहरे को बहुत दूर तक न बेध पा रहा था। शहर के बाहर कोहरा और भी घना था। कौरव पाण्डवो के किले के समीप पहुचकर गाडी सडक पर खडी कर दी।

सडक के परे तार गडे स्थान की ओर जाने से पहले मैंने भागराम को समझा दिया कि वाइसराय की गाडी आने से पहले पाइलट इजन गुजरेगा। वाइसराय की गाडी से कुछ मील आगे पाइलट इजन लाइन की देखभाल के लिये चलता था ताकि लाइन पर कोई गडबड या आशका हो तो वाइसराय की गाडी खतरे से पहले ही रोक ली जा सके। लाइन पर से अकेले इजन और पूरी गाडी के गुजरने की आहट मे काफी फरक रहता है। भागराम को बता दिया कि इस इजन को मैं यो ही निकल जाने दूगा। पाइलट के लगभग दस पन्द्रह मिनिट बाद वाइसराय की गाडी आयेगी तभी मैं बम चलाऊगा। विस्फोट का शब्द होने के बाद यदि लडाई लड और गोलिया चलने की आहट मिल

और मेरे आने में विलम्ब हो तो वह मोटरसाइकिल चालू करके लौट जाये। यदि विस्फोट से पहले ही पुलिस की रौंद करती गारद इधर आने पर प्रश्न किया जाये तो बात बना दे कि कप्तान साहब रौंद करने आये थे। साइकिल बिगड गयी है। वे आगे चले गये है और मोटर भेजने के लिये कह गये है।

सूखे कुएं के समीप बिजली के दबे हुये तारो का सिरा मैंने खोज लिया और अपने साथ लायी हुई हल्की बैटरी उस में लगा दी। गाडी आने की प्रतीक्षा करने लगा। प्रतीक्षा में समय बिताने का एक साधन घडी देख कर मिनिट गिनना भी होता है। सन्तोष होता है, इतना समय बीत गया इतना शेष है पर मै अपनी घडी भगवती भाई को सौंप आया था। सर्दी बहुत कडी और कोहरा भी बहुत ही घना था। चुस्ती बनाये रखने के लिये मैं बैटरी के चारो ओर चहलकदमी करने लगा। ज्यो ज्यो समय बीत रहा था पौ फटने के प्रकाश के बजाय धुन्ध से अन्धेरा और भी घना होता जा रहा था। वर्षा से भीगी जमीन से उठा वाष्प वायु में जमता जा रहा था।

लम्बी प्रतीक्षा के बाद मथुरा की ओर लाइन पर गाडी की आहट जान पडी। आहट समीप आ रही थी। याद था, पहले पाइलट इजन आयगा। आहट घटनास्थल पर पहुच गयी परन्तु पाइलट इजन के माथे पर लगा प्रकाश न दिखायी दिया। आहट नयी दिल्ली की ओर गुजर गयी। सोचा, शायद पाइलट इजन के सामने प्रकाश (सर्चलाइट) न होता हो या कोहरा और धुन्ध इतना घना है कि प्रकाश दिखायी नही दे सका।

अब वाइसराय की गाडी के आने में पन्द्रह मिनिट से अधिक समय न हो सकता था। कोहरा भरी वायु में अन्धकार का कालापन कुछ कम होकर सफेदी बढ गयी थी परन्तु ऐसे जैसे धुनी हुई रुई हवा में भर गयी हो। दस कदम दूर की झाडिया भी दिखायी न दे रही थीं। सोचा, यदि वाइसराय की गाडी के सामने लगा तीव्र प्रकाश भी दिखायी न दिया तो निश्चित स्थान पर गाडी का पहुचना कैसे पता लगेगा? निश्चय किया, जैसे भी हो आहट से अनुमान लगाना होगा कि गाडी का इजन निश्चित स्थान पर पहुच रहा है।

हमारी योजना थी कि इजन के निश्चित स्थान पर पहुचते-पहुचते इजन के मुह पर धक्के के रूप में विस्फोट किया जाय। इससे इजन पटरी से नीचे गिर जायगा, जैसा दो गाडियों के आमने सामने भिड जाने पर हो सकता है। मथुरा की ओर से फिर ताइन पर आहट सुनायी दी। आहट नयी दिल्ली की ओर बढती आ रही थी। कोहरे में आखें फाड फाड कर मैंने इजन के सामने लगा प्रकाश देखने का यत्न किया। कुछ न दिखायी दिया। अब आहट के आधार पर ही ठीक समय पर बैटरी का बटन दबाना आवश्यक था। गाडी की आहट बिलकुल पास आ गयी। मैं सास रोके, बटन पर हाथ रखे अपनी सम्पूर्ण चेतना को कानो

मे समेटे आहट ठीक स्थान पर पहचानने की प्रतीक्षा कर रहा था। मेरी समझ के अनुसार वह पल आया और मैंने स्विच दबा दिया।

स्विच के दबते ही विस्फोट का भयकर धडाका हुआ। मेरी कल्पना थी कि विस्फोट के शब्द के साथ ही गाडियो के आपस मे भिडने और गडगडाहट से ढलवान पर लुढकने का शब्द होगा। मेरी आशा और कल्पना के प्रतिकूल गाडी के नियमित रूप से, खूब तेज चाल से दौडते चले जाने की आहट नयी दिल्ली की ओर बढ गयी।

असफलता और निराशा से मेरा हृदय बैठ सा गया। मेरा अनुमान है, निराशा के ऐसे ही धक्के से लोगो के हृदयो की गति बन्द हो जाती होगी। मैं असफल, निराश, असहाय और भौंचक खडा रह गया।

विस्फोट मे से गाडी के सही सलामत गुजर जाने पर यही आशा थी कि लाइन के दोनो ओर कुछ-कुछ अन्तर पर पहरे के लिये खडे पुलिस के आदमी मेरी ओर दौड पडेंगे। मैंने कन्धे से लटकती पेटी से पिस्तौल निकाल कर हाथ मे साध लिया। दोनो पाओ के पजे पर शरीर को तोला और आखें फाड-फाड कर अपनी ओर आने वालो को देखने की चेष्टा करने लगा।

लगभग एक मिनट इसी प्रकार गुजर गया। मन म विचार आया, मैं व्यर्थ ही पकडे जाने की प्रतीक्षा कर रहा हू। चलना चाहिये।

मोटर साइकिल की ओर चलते ही ख्याल आया, यह असम्भव है कि पकडने वाले न आयें। भागने का अर्थ होगा कि मेरी पीठ पर गोली लगे। मरना या तो पीठ पर गोली खाकर मरना अपमानजनक जान पडा। फिर खडा हो गया, बल्कि खूब याद है कि साहस से मुस्कराने की चेष्टा कर के मन ही मन ललकारा—आओ, जिसे आना हो! डेढ दो मिनट इसी अवस्था म बीत गये। न किसी के आने की आहट मिली न कोई आता दिखायी दिया।

मैं मोटर साइकिल की ओर चल पडा परन्तु दो कदम उस ओर उठा कर पीठ पीछे देख लेता कि कोई पीछा तो नही कर रहा। ऐसे ही पीछे देखता, आगे बढता सडक पर पहुच गया।

मुझे देखते ही भागराम बोला—"कुछ नही हुआ ?"

हाथ हिला कर अपनी असफलता और निराशा प्रकट की।

"मसाला कम होगा।" भागराम ने अनुमान प्रकट किया।

"हो सकता है।" उत्तर दे दिया।

"लौटने मे बहुत देर लगा दी, मैं परेशान था।" भागराम ने कहा, "न गोली चलने की आवाज आ रही थी न तुम्ही आ रहे थे।"

मैं कुछ बोल नही पा रहा था इसलिये टाल दिया—"देख रहा था शायद कोई आता हो।"

मोटरसाइकिल चालू करने के लिये उसने स्टार्टर पर पाव मारा। एक बार, दो बार, दस-बार, बीस बार स्टार्टर पर पूरी शक्ति से पाव मारा। मैं हाफ गया। इंजन नही चला। मैं एक ओर हट गया और भागराम ने चलाने की कोशिश की परन्तु मोटरसाइकिल न चली।

भागराम ने विचार प्रकट किया कि सर्दी से इंजन जाम हो रहा है, ढकेलने से ठीक हो जायगा। इंजन को गेयर लगाकर दोनो ने मिलकर मोटरसाइकिल को कुछ दूर तक ढकेला। इस पर भी गाडी न चली। हम लोग गाडी को लगभग दो फर्लांग ढकेल कर ले गये परन्तु वह न चली।

गाडी के मडगार्ड और तेल के टैंक पर बहती हुई ओस की धारायें दिखा कर भागराम ने अनुमान प्रकट किया—"ओस की बूँदें 'प्लग' मे चली गई है। प्लग को खोलकर साफ किये बिना साइकिल नही चलेगी।" इस झुझलाहट और छटपटाहट मे लगभग पन्द्रह-बीस मिनट गुजर गये। दोनो मे से किसी को भी यह न सूझा कि साइकिल को कुछ कदम सडक से परे ढकेल कर झाडियो मे छिपा दे और अपनी जान बचाने के लिये भाग निकलें। विलम्ब का प्रत्येक पल हमे निश्चित गिरफ्तारी या पुलिस से मुठभेड की ओर ढकेल रहा था।

वाइसराय की गाडी को घटनास्थल से नयी दिल्ली पहुचने मे छ-सात मिनिट से अधिक न लगने चाहिये थे और गाड़ी के स्टेशन पर पहुचते ही पुलिस का तहकीकात के लिये घटनास्थल की ओर दौड पडना अत्यन्त आवश्यक था। वही हुआ भी।

सडक पर मोटरसाइकिल को ढकलते समय घन कोहरे मे से बहुत से सिपाहियो के एक साथ कदम मिलाकर चलने की आहट आयी।

"बस अब, रहने दो!" मैंने भागराम से कहा, "पुलिस या फौज आ रही है। तुम गाडी के उस तरफ हो जाओ। गोली चलने पर तुम बैठ जाना और साइकिल की आड लेकर अपने आपको बचाते हुये अधिक से अधिक आदमियो को गिराने की कोशिश करना। पहले मैं सामने से गोली चलाऊंगा।"

सिपाहियो के कदमो की आहट तेजी से हमारी ओर बढ़ रही थी। कोहरे और धुध मे से हमारी ओर आती गारद की धुधली-धुधली झलक भी दिखायी दी। उनका अफसर गारद से दो कदम आगे चल रहा था। गारद के कन्धो पर राइफलें थीं।

मैं तनकर सडक पर एक ओर खडा हो गया कि गारद के बिलकुल समीप आ जाने पर गोली चलाऊंगा ताकि निशाना चूके नही और पहल करके फटाफट दो तीन को गिरा दू।

आज उस बात को सोचने पर समझ आता है कि पुलिस से बचने का बहुत सीधा ढग उस समय चुपचाप झाडियो मे छिप जाना और गारद के गुजर जाने

पर दिल्ली की ओर चल पड़ना होता परन्तु उस समय समझ की अपेक्षा उत्तेजना का ही प्राबल्य था। खैर हुआ यह —

गारद आठ ही दस कदम पर थी। आगे चलते हुए अफसर की नजर मुझ पर पड़ चुकी थी। मैंने जेब में पड़े पिस्तौल को मजबूती से थाम लिया। गारद का कदम और आगे बढ़ा। सहसा अफसर ने ऊंचे और कड़े स्वर में हुक्म दिया 'आईज राइट!'

पिस्तौल थामे मेरा हाथ जेब से बाहर निकलता-निकलता ठिठक गया। मैं समझ गया कि हुक्म गोली चलाने का नहीं बल्कि मुझे सलाम करने का है। पल भर में मैं स्थिति भाँप गया, अफसर ने मुझे सदिग्ध या अपराधी नहीं बल्कि अपने से बड़ा अफसर और भागराम को मेरा अरदली समझ लिया है। उसका ऐसा समझ लेना अस्वाभाविक भी नहीं था क्योंकि मेरी वरदी के कन्धों पर 'मेजर' के पद के चिन्ह लगे हुये थे। शायद उसने समझा है कि मैं उससे पहिले ही मोटर साइकिल पर घटनास्थल की ओर जा रहा हूं। मैंने अफसराना गम्भीरता और कायदे से ठोढ़ी झुका कर गारद की सलामी स्वीकार कर ली। गारद मार्च करते हुए आगे बढ़ गयी।

"खूब रहा" मैंने भागराम को सम्बोधन किया, "फिर मोटरसाइकिल ढकेलो। देखें, आगे क्या होता है।"

हम लोग बारी-बारी से गाड़ी को दिल्ली की ओर ढकेलने गये। जेल के सामने पहुंचकर मैंने गाड़ी ढकेलने के लिये भागराम को ही दे दी क्योंकि सड़क पर आते-जाते लोग दिखायी देने लगे थे। हम लोग 'फैजबाजार' में पहुंच गये। यहां कोतवाली के समीप ही एक मोटर और मोटरसाइकिल ठीक करने का कारखाना था। एक व्यक्ति रजाई में सिकुड़ा कारखाने के बरामदे में पड़ा था।

भागराम ने उसे बड़े स्वर में पुकार कर जगाया और बोला—"कप्तान साहब का मोटर साइकिल खराब हो गया है, इसे चालू करके रक्खो। आदमी आकर ले जायगा।"

सूर्य उदय हो चुका था परन्तु बाजार में भीड़ न थी। हम दोनों 'चांदनी चौक' की ओर चल गये। अब मुझे और भागराम को भी बहुत थकावट अनुभव हो रही थी। चार मील मोटरसाइकिल ढकेली थी। रात सो नहीं पाये थे। मैं तो अड़तालीस घण्टे से अधिक समय से न सोया था, न कुछ खा सका था। अब पांव उठाना दूभर जान पड़ रहा था। कुछ खाकर शरीर में सामर्थ्य लाना आवश्यक समझा।

हम दोनों उस समय चांदनी चौक के बहुत फैशनेबुल रेस्तोरां 'मानसरोवर' में गये। भाग्य की बात भगवती भाई ने मेरी जेब में दस-पन्द्रह रुपये जबर-दस्ती छोड़ दिये थे। भागराम ने सलाह दी कच्चे अण्डे खाकर खूब गरम दूध

पीना ठीक होगा। हम दोनों अलग-अलग मेजो पर बैठे क्योंकि अर्दली और साहब का एक जगह बैठना उचित न था।

मुझे भूख तो तब भी मालूम नही हो रही थी। सिर चकरा रहा था और मुह ऐसे कडवा था मानो चिरायता पिया हो। मैंने जबरदस्ती छ कच्चे अन्डे तोड कर निगल लिये और गरम-गरम दूध पिया। कुछ देर होटल मे विश्राम करते रहे परन्तु वहा कितनी देर बैठा जा सकता था।

हम लोग बाजार मे आकर स्टेशन की ओर चलने लगे। देहली मे अब हम दोनो का कोई स्थान न था। फौजी अफसर की वर्दी मे जाता भी तो किसके यहा? जिसके यहा जाता वह स्थिति भाप कर घबरा जाता। भगवती भाई गाजियाबाद स्टेशन के वेटिंग रूम मे हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे परन्तु वहा पहुचने का साधन, मोटरसाइकिल धोखा दे गयी थी। रेल गाडी से गाजियाबाद जाने का मतलब था, मेजर की वर्दी पहने जिस पर H S R A के बिल्ले लगे थे, दिल्ली स्टेशन से ट्रेन पर सवार होना।

मेरे शरीर पर 'मेजर' की वर्दी तो थी परन्तु इस वर्दी और मेरी फौजी टोपी पर लगे हुए पीतल के चिन्ह मुझे मुसीबत मे डाल सकते थे। यह चिन्ह 'हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आरमी' की मोहर के आकार के थे और इन मे H S R A अक्षर स्पष्ट पढ़े जा सकते थे। वर्दी पर यह चिन्ह लगाने का अभिप्राय ही यह था कि हम आतकवादी अपराधी के रूप मे छिप कर काम नही कर रहे थे बल्कि स्वतन्त्रता के युद्ध म विदेशी सरकार से लड रहे थे। अब सकट-स्थल से बचकर निकल आने पर यह चिन्ह ही आशका का कारण थे। दूसरा उपाय भी नही था। इसी हालत मे दिल्ली स्टेशन पर पहुचा। मै रोब और उपेक्षा का निश्शक व्यवहार कर रहा था।

भागराम ने मेरे लिये फर्स्टक्लास का और अपने लिये थर्डक्लास का टिकट खरीदा। मै कदम-कदम पर सन्देह किया जाने और पुलिस से गोली चलने की आशका अनुभव कर रहा था परन्तु व्यवहार यथाशक्ति नितान्त स्वाभाविक बनाये था।

आखिरी अडचन गाजियाबाद जाने वाली गाडी के कम्पार्टमेट मे कदम रखने पर आयी। एक गोरा सिपाही फर्स्टक्लास के बर्थ पर मजे मे लेटा अखबार पढ रहा था। आशका हुई यह मेरी वर्दी के विचित्र बिल्लो से कैसे न चौंकेगा? गाडी मे मेरे कदम रखते ही उसने मेरी ओर तिरछी आखो से देखा और कूद कर एक दम खडा हो गया। सैल्यूट किया और फर्स्टक्लास कम्पार्टमेट मे लेटे हुए पकडे जाने के भय और सकोच म सिर झुकाकर बाहर चला गया।

गाडी दिल्ली स्टेशन से बाहर निकल जाने पर आश्वासन पाया कि फिलहाल तो बचे। गाजियाबाद स्टेशन पर गाडी लगभग दस बजे पहुची। मुझे

देखकर भगवती भाई विस्मय से अवाक रह गये। मुझे सात बजे से बहुत पहले ही पहुच जाना चाहिये था। रास्ते भर मेरे मन म यही आशंका थी कि भगवती भाई ने सात के बजाय आठ तक प्रतीक्षा की होगी। इसके बाद उन्हे चले ही जाना चाहिये था परन्तु वे वेटिंगरूम म कुरसी पर बैठे अखबार पढ रहे थे। मुझे देख कर आखो ही आखो म उन्होने प्रश्न किया, कैसे क्या ?

मैंने हाथ के नकारात्मक सकेत स उत्तर दिया—कुछ भी नही।

भगवती भाई को सन्देह हुआ था कि शायद हसराज की बैटरी न धोखा दिया। मैंने बताया कि विस्फोट तो बहुत ज़ोर स हुआ परन्तु गाडी को शायद कुछ भी नुकसान नही पहुचा बल्कि मोटरसाइकिल ही फेल हो गयी। वहा स पैदल लौटना पडा और दिल्ली म गाडी से आये। मुझ मर गया समझ कर भगवती भाई के चेहरे पर मातम की जो मुर्दनी छा गयी थी, वह मुझे देखकर और वास्तविकता जान कर तुरन्त दूर हो गयी। मेरी पीठ पर हाथ मार मुस्कराकर उन्होने कहा—"Never mind we will try again (चिन्ता मत करो, फिर कोशिश करेंगे)।"

भागराम सुबह सर्दी लग जाने स बहुत असुविधा अनुभव कर रहा था। उसे सीधे लाहौर भेज दिया कि इन्द्रपाल के यहा जाकर आराम कर सके। मैं और भगवती भाई फिर उसी पैसेंजर गाडी मे जा बैठे। गाडी हर स्टेशन पर ठहरती, धीमी चाल से मुरादाबाद की ओर जा रही थी। भगवती भाई सूट पहने हुए थे। मैंने फौजी वर्दी उतार कर अपने साधारण कपडे पहन लिये थे। हम दोनो का मन बहुत ही बुझा हुआ था। दोनो गाडी म चुपचाप लेटे रहे। हमारी गाडी के मुरादाबाद स्टेशन पर पहुचते ही अखबार बेचने वाल की ऊची पुकारें सुनायी दी।

"ताजा परचा! बडे लाट की गाडी के नीचे बम चल गया! रेल की पटरी टूट गयी! स्टेशन ट्रेन का डिब्बा उड गया! एक आदमी मारा गया!"

हमे विस्मयपूर्ण उत्साह हुआ। हमारी पैसेंजर से एक या डेढ घण्टे बाद दिल्ली से चलने वाली एक्सप्रेस गाडी स घटना के बाद तुरन्त छपे अखबारो के विशेषाक हम से पहले ही मुरादाबाद पहुच गय। यह एक्सप्रेस गाडी हमारी पैसेंजर को पीछे छोड आयी थी।

विशेषाक पढ कर मालूम हुआ कि बम-विस्फोट वाइसराय की स्पेशल ट्रेन के खाना खाने के कम्पार्टमेंट के नीचे हुआ था। इस कम्पार्टमेंट मे केवल नीचे का लोहे का ढाचा ही बच रहा था शेष सब टुकडे-टुकडे होकर हवा मे उड गया था। रेल की पटरी का छ फुट के लगभग टुकडा भी टूट कर दूर जा पडा था। गाडी बहुत तेज चाल म होने के कारण उस टूटी जगह के ऊपर से खिचती चली गयी थी। वाइसराय का सक्रेटरी खाने के कम्पार्टमेंट के साथ के

ही कमरे में था। वह धमाके से बेहोश हो गया था। एक बैरा दिल्ली समीप आती जान कर खिड़की खोल कर बाहर झांक रहा था। उस का मुंह जल गया था। वाइसराय का कम्पार्टमेंट विस्फोट की जगह से आगे निकल चुका था। वह धमाके से अपने बिस्तर से उछल पड़ा था। ट्रेन नयी दिल्ली स्टेशन पर रुकते ही ट्रेन को त्रिपालों से ढांक दिया गया ताकि ट्रेन को ध्वस्त हालत में देखने से जनता पर बुरा प्रभाव न पड़े।

वाइसराय गाड़ी से उतर कर अपने महल (गवर्नमेंट हाउस) में जाने से पहले, अपनी प्राण-रक्षा के लिये भगवान को धन्यवाद देने के लिये गिरजाघर पहुंचा था।

घटना की वास्तविकता जान कर हम लोगों की जान में जान आयी। आपस में बात कर सन्तोष अनुभव किया कि यदि कोहरे के कारण इंजन दिखायी देना असम्भव न होता तो विस्फोट ठीक इंजन के सामने हो सकता और पूरी गाड़ी तहस-नहस हो जाती। हम लोग मुरादाबाद में उतर गये और उस के बाद आने वाली 'देहरा-एक्सप्रेस' में कलकत्ते के लिये रवाना हो गये।

घटना का समाचार हम से पहले कलकत्ते में पहुंच चुका था। सुशीला जी से मिले। यह जान कर कि हम लोग थोड़ा-बहुत काम कर आये हैं, उन की आंखें प्रसन्नता से चमक उठीं। कलकत्ते में लाहौर से कांग्रेस अधिवेशन के समाचार आ रहे थे। वाइसराय की गाड़ी पर आक्रमण के समाचार से कांग्रेस के अधिवेशन में इकट्ठा हुआ जनसमुदाय प्रसन्नता और उत्साह से बावला हो उठा था।

गांधी जी ने कांग्रेस के अधिवेशन के आरम्भ में ही एक प्रस्ताव वाइसराय पर आक्रमण करने वाले लोगों की निन्दा, वाइसराय के प्रति सहानुभूति और उस की प्राण-रक्षा के लिये भगवान को धन्यवाद देने का स्वयं उपस्थित किया था। गांधी जी के इस प्रस्ताव में वाइसराय पर आक्रमण करने वाले लोगों को कायर और उन के काम को जघन्य कहा गया था। हम लोगों को गालियां देकर गांधी जी ने बहुत करुण शब्दों में अधिवेशन में उपस्थित सदस्यों से प्रार्थना और अनुरोध किया कि वे उन के प्रस्ताव पर विवाद किये बिना उसे सर्वसम्मति से स्वीकार कर लें।

गांधी जी के प्रति जनता की अन्ध श्रद्धा, उन के व्यक्तित्व के प्रति असीम आदर और कांग्रेस नेताओं द्वारा गांधी जी की मान रक्षा की अनेक अपीलों के बावजूद जनता इस प्रस्ताव पर बौखला उठी। अधिवेशन में उपस्थित १९१३ प्रतिनिधियों में यह प्रस्ताव केवल ८१ के बहुमत से ही पास हो सका। इस ८१ के बहुमत में भी कितने आदमियों को वास्तव में क्रान्तिकारियों के काम से विरोध था, यह अनुमान कर लेना कठिन नहीं। उस समय पंजाब में कांग्रेस की एक

प्रमुख नेता श्रीमती सरलादेवी चौधरानी ने सार्वजनिक रूप से स्वीकार किया था कि वे इस वासिया आत्मिता का जानता है उन्होंने गाधी जी के नाराज हो जाने की आशका से ही प्रस्ताव के पक्ष म अपना मत दिया था।

हम लोगो के सामने अब फिर दल न मम्पर्क जानने और अपने लिये एक नया स्थान जमाने का प्रश्न आया। इस बार मैं कलकत्ते के सेन्ट्रल एवेन्यू म श्री सुरेन्द्र विद्यालंकार के यहा ठहराया गया था। म सुरेन्द्र जी को दखते हा पहचान गया वे गुरुकुल कागडी म मुझ स दो तीन कक्षा ऊपर विद्यार्थी थ। मैंने अपना वास्तविक नाम परिचय दना आवश्यक न समझा। उन्हें केवल इतना बता दिया गया था कि म क्रातिकारी हूँ और दिल्ली की घटना के कारण मुझ फरार हो जाना पडा है। भगवती भाई तीन चार दिन बाद कलकत्त स लखनऊ के लिये चल दिये। अब हम रा विचार लखनऊ म अड्डा जमाने का था। वाइसराय की गाडी के विस्फोट का आ याना म मरे स्वास्थ्य पर बाधा तो व पड़ा था इसलिये उन्होंने मुझ चार पाच दिन सुरेन्द्र जी के गृहस्थ म विश्राम के लिये छोड दिया।

निश्चित दिन पूर्व निश्चित गाडी स म लखनऊ पहुचा। भगवती भाई स्टेशन पर मिल गया। उन्होंने लखनऊ के अमीनाबाद पार्क म जहा अब सालोमन कम्पनी का दवा की दुकान है ऊपर की मजिल म एक कमरा किराये पर ले लिया था। उस समय लखनऊ की बस्ती आज जैसा घनी न थी। हमने कमरा दस ग्यारह रुपये माहवार पर लिया थ अब वह शायद दो सौ म भी कठिना से मिलेगा।

मैंने लखनऊ आते ही एक साइनबोर्ड बनवा लिया सैनिटरी सप्लायर्स। साइनबोर्ड दोमजिले पर अपने कमरे के सामने लटका दिया। उस समय (१९३ म) पड़ोसियो ने और नीचे के दुकानदारो ने इस साइनबोर्ड का कुछ अर्थ न समझा। उन्हें कौतूहल था हम लोग क्या काम करते हैं। उन्हें बताया कि हमारा सामान प्राय अस्पतालो कारखानो स्कूल कालिजो और रईसो की कोठियो म हो लगा सकता है। उन्हें सनिटरी के सामान का सचित्र सूचीपत्र भी दिखा दिये। उन दिनो फ्लश-सिस्टम और वाशबेसिन आदि लखनऊ-अमीनाबाद के लोगो के लिये भी अपरिचित वस्तुएं थी। म कलकत्ते स चलते समय सनिटरी का सामान बचने वाली कम्पनियो से ऐसे सामान के सूचीपत्र लेता आया था।

निवास के लिये नयी जगह तो हम लोगो ने बना ली। अब प्रश्न था दल और भैया का निर्णय न मानने के बाद उस के सामने जवाबदेही का। अपनी दृष्टि म हम लोग दल का निर्णय न मानने के लिये लज्जित नहीं थे। पिछले दो महीने के अनुभव से यह भी जान चुके थे कि आजाद भैया का मिजाज काफी गरम है। प्रश्न यही था कि बदमजगी का अवसर आये बिना मामला

सुलझ जाये और भविष्य मे सहयोग से काम हो सके। इतना तो निश्चित ही था कि पहली मुलाकात मे भैया एकदम बिगड उठेंगे। मैं और भगवती भाई एक साथ ही जाकर मिलते तो वह दोनों से ही बिगडते। इसलिये उचित जचा कि पहले मैं जाकर मिलू और परिस्थिति भगवती भाई को बता दू।

मै दो जनवरी के दिन दिल्ली पहुचा और 'न्यू हिन्द होटल' मे साथी प्रोफेसर नन्दकिशोर निगम के यहा कैलाशपति का पता लेने गया। अवसरवश वहा आजाद ही मिल गये। दूसरे साथियो के सामने उन्हो ने मुझ से साधारण गम्भीरता से बात की। इसी से समझ गया कि उनके मन मे नाराजगी है। साधारणत मुलाकात के समय वे मुस्कराहट और आत्मीयता से ही सम्बोधन करते थे। बात करने के लिये वे मुझे यमुना किनारे एकान्त मे ले गये और पूछा—"निर्णय के विरुद्ध तुम लोगो ने विस्फोट क्या किया ?"

मैंने बहुत स्पष्ट बात की—' जहा तक निर्णय के विरुद्ध काम करने का प्रश्न है, मैं अपराधी हू। इस विषय मे दल जो कुछ दण्ड देगा, मुझे शिरोधार्य होगा। भगवती भाई ने मेरे इस कार्य का विरोध किया था परन्तु मैंने उन की भी बात नही मानी क्योकि मेरे विचार मे इस घटना का राजनैतिक महत्व, विस्फोट कांग्रेस अधिवेशन से पहले करने मे ही था। लाहौर कांग्रेस मे जनता पर इस घटना का जो प्रभाव पडा है, उससे मेरा विचार ठीक ही प्रमाणित हुआ है।"

"तुम्हारे विचार का क्या मतलब ?" आजाद अपना क्रोध सम्भालने के लिये ओठ काटते हुए बोले, "तुम्हारा विचार क्या दल के निर्णय से भी बडा हो गया ? अगर तुम्हे ऐसा ही करना है तो दल मे तुम्हारा क्या काम ? जाओ, जो करना है करो! यह तुम्हारी बेजा हरकत थी कि जब इस प्रश्न पर विचार हो रहा था तुम बहाना बना कर उठ गये। जैसे हम सब लोग मूर्ख हो और व्यर्थ बकवास कर रहे हो।" उन की आखें क्रोध से लाल हो गयी।

मैंने विनय से कहा—"मीटिंग से उठ जाने का कारण विचार मे भाग लेने के प्रति उपेक्षा नही थी। असली बात यह थी कि बिजली का तार खरीदना था। देर होने से दुकानें बन्द हो जाती।" मैंने यह भी कहा, "एक कारण यह भी था कि घटना दो बार स्थगित हो चुकी थी। मुझे आशका थी कि भगवती भाई को छोड कर हमारे दूसरे साथी यह न समझने लगें कि मैं जान बचाने के लिये बहाना कर रहा हू। मैंने दल के निर्णय के विरुद्ध काम किया है। यदि आप भविष्य मे मेरा विश्वास करके क्षमा कर सकते हैं तो क्षमा कर दीजिये वरना आप या दल जैसा उचित समझें।' मैंने जेब से पिस्तौल निकालकर आजाद के सामने रख दिया, 'मैं दल के सामने आत्मसमर्पण करता हू।"

भैया ने क्रोध से ओठ काटकर आखो मे छलक आये आसू रूमाल से पोछ

लिये। मेरा पिस्तौल मुझे लौटाते हुये बोले—"रखो-रखो इसे।" आजाद का यह स्वभाव ही था कि अपने आदमियों पर आया क्रोध दबाने से उन की आखों मे आसू आ जाते थे। क्रोध मे उन की आखें लाल तो जरूर हो जाती थीं परन्तु वह आप से बाहर न हो जाते थे। मैंने विचार प्रकट किया कि गाधी जी और काग्रेस ने वाइसराय पर आक्रमण की जो निन्दा और आलोचना की है, उस का उत्तर देना आवश्यक है। जनता के सामने अपने विचारो और कार्य-क्रम को रखने का यह बहुत अनुकूल अवसर है। काग्रेस ने २६ जनवरी का दिन पूर्ण स्वराज्य की घोषणा के लिये निश्चित किया है। हम भी उसी दिन अपनी घोषणा प्रकाशित करके उसे देश भर मे बाटने की योजना करनी चाहिये। भगवती भाई से मैं इस बारे मे बात कर चुका हू। मैंने यह भी कहा कि वे उचित समझें तो मैं और भगवती भाई एक विस्तृत वक्तव्य इस बारे मे लिख डालें। आप और दूसरे साथी उसे स्वीकार कर लें तो उसे छपवा लिया जाय। भैया ने इस बात का अनुमोदन बहुत उत्साह से किया और मेरे साथ ही लखनऊ चलने के लिये तैयार हो गये।

अमीनाबाद के मकान मे हम लोगो ने इस घोषणा के बारे मे खूब विचार कर के मूल विषय निश्चित कर लिये। उन्ही दिनों गाधी जी ने अपने साप्ताहिक पत्र यंग इण्डिया मे एक लेख Cult of the Bomb' (बम का मार्ग) लिखा था। हम लोगो ने अपनी घोषणा का शीर्षक रखा, 'Philosophy of the Bomb (बम का दर्शन)। यह घोषणा वाइसराय की स्पेशल ट्रेन पर आक्रमण के बाद अपने दल का दृष्टिकोण जनता के सम्मुख रखने के लिये और गाधी जी के लेख का उत्तर देने के लिये भैया आजाद (हि० स० प्र० स०) के कमाण्डर इन चीफ) की ओर से अग्रेजी मे प्रकाशित की गयी थी। इस घोषणा के मसविदे का यहा उद्धृत कर देना अप्रासगिक न होगा।

◇

बम का दर्शन

THE PHILOSOPHY OF THE BOMB)

"वाइसराय पर आक्रमण की घटना के बाद कांग्रेस और गांधी जी ने क्रान्तिकारियों की आलोचना और निन्दा का एक बवंडर खडा कर दिया है। क्रान्तिकारी अपने विचारों की आलोचना और विचार-विनिमय से नहीं कतराते परन्तु हमारे विरुद्ध दुष्प्रचार द्वारा जो लाछन लगाये जा रहे है, उन का निराकरण करना और जनता के निर्णय के लिये वास्तविक स्थिति प्रकट करना आवश्यक है।

"क्रान्तिकारियों पर हिंसात्मक होने का लाछन लगाया जाता है। हिंसा और अहिंसा का अर्थ क्या है? हिंसा का अर्थ है, शारीरिक बल द्वारा अन्याय करना। क्रान्तिकारी ऐसा नहीं कर रहे है। साधारणत अहिंसा का अभिप्राय समझा जाता है, स्वय कष्ट उठाकर अपने प्रतिद्वन्दी का हृदय आत्मिक शक्ति द्वारा बदल कर वैयक्तिक अथवा राष्ट्रीय उद्देश्य को पूरा करना। क्रान्तिकारी भी अपने विश्वास के अनुसार न्याय की माग करते है, उस के लिए अनुरोध और तर्क करते हैं। वे उद्देश्य के लिये अपनी मानसिक और शारीरिक शक्ति का पूर्ण उपयोग करते हैं और अपने उद्देश्य के लिये कष्ट उठाने या बलिदान हो जाने में किसी से पीछे नहीं हैं।

"क्रान्तिकारियों के विचार और व्यवहार से आप सहमत हों या असहमत परन्तु उन के व्यवहार को हिंसा कह देना अनुचित है। सत्याग्रह का अर्थ है, सत्य के लिये आग्रह करना। सत्य के लिये आग्रह केवल आत्मिक बल से ही क्यों किया जाय? शारीरिक शक्ति का भी उपयोग क्यों न किया जावे? क्रान्तिकारी अपने विश्वास के अनुसार सत्य, न्याय और देश की स्वतन्त्रता के लिये किसी भी उपाय की अपेक्षा करना उचित नहीं समझते। वे अपनी सम्पूर्ण आत्मिक, नैतिक और शारीरिक शक्ति को उद्देश्यपूर्ति में लगा देना चाहते हैं।

"गांधी जी तथा कांग्रेस और क्रान्तिकारियों के मार्ग में हिंसा और अहिंसा

का अन्तर नहीं अपितु इस बात का है कि गांधीवादी उद्देश्य की पूर्ति के लिये केवल आत्मिक शक्ति का ही प्रयोग करना चाहता है और क्रान्तिकारी अपना सभी प्रकार की शक्ति और सम्भव उपायों का उपयोग अपने लक्ष्य की सिद्धि करना आवश्यक समझता है।

क्रान्तिकारियों का विश्वास है कि देश की जनता की मुक्ति केवल क्रान्ति द्वारा ही सम्भव है। क्रान्ति से हमारा अभिप्राय स्वदेशी सरकार और विदेशी सरकार में सामान्य संघर्ष ही नहीं है। हमारी क्रान्ति का लक्ष्य एक नवीन न्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था है। इस क्रान्ति का उद्देश्य पूँजीवाद को समाप्त करके श्रेणीहीन समाज की स्थापना करना और विदेशी और देशी शोषण से जनता को मुक्त करके आत्मनिर्णय द्वारा जीवन का अवसर देना है। इसका उपाय श्रमिकों के हाथ से शासन शक्ति देकर मजदूर तथा श्रम करने वालों के शासन की स्थापना करना है।

देश का युवक वर्ग आज क्रान्ति के द्वार पर खड़ा है। वह मानसिक दासता और साम्प्रदायिक रूढ़िवाद की कड़ियों को तोड़ कर फेंक देना चाहता है। यह क्रान्ति के दान की ओर बढ़ रहा है। उसकी मनःप्रवृत्ति उसमें विदेशी दासता के प्रति घृणा और संघर्ष का आवेश पैदा कर रही है। वह अपनी इस आग में अन्यायी और शोषक व्यवस्था को भस्म कर देना चाहता है। अन्याय और शोषण के प्रति युवकों का विद्रोह ही आतंकवाद का रूप ले रहा है। आतंकवाद सार्वजनिक क्रान्ति का पहिला कदम मात्र है। इसे पूर्ण क्रान्ति नहीं कहा जा सकता परन्तु इसके बिना क्रान्ति आरम्भ भी नहीं हो सकेगी। संसार भर की क्रान्तियों का इतिहास इसी मार्ग पर चला है। आतंकवाद अन्यायी शोषक के हृदय को दहलाता है और पीड़ित तथा दलित जनता को प्रतिकार द्वारा आत्मविश्वास, उत्साह और साहस देता है। हमारा लक्ष्य आतंकवाद नहीं है। भारत का मार्ग क्रान्ति में परिणत होगा और क्रान्ति सर्वसाधारण जनता की सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक स्वतन्त्रता में परिणत होगी।

क्रान्तिकारी क्रान्ति के मार्ग में ही विश्वास करते हैं। वे देश की जनता को इसी मार्ग पर ले जाना चाहते हैं और इसी के लिये प्रकट और गुप्त रूप से प्रयत्न कर रहे हैं। क्रान्तिकारियों के सामने संसार भर की दलित और शोषित जातियों की मुक्ति के संघर्ष मार्ग दर्शक के रूप में मौजूद हैं। शोषितों और दलितों ने निरन्तर संघर्ष से ही सदा शोषकों को पराजित किया है। भारत के क्रान्तिकारी भी अपने लक्ष्य में अवश्य सफल होंगे।

कांग्रेस का मार्ग क्या रहा है? आज कांग्रेस अपना लक्ष्य स्वराज्य से बदल कर पूर्ण स्वतन्त्रता घोषित कर रही है। ऐसे समय कांग्रेस से यही आशा की जानी चाहिये कि वह विदेशी सरकार से युद्ध की घोषणा करती परन्तु कांग्रेस

विदेशी सरकार से लडने वाले क्रांतिकारियों पर ही चोट कर रही है। क्रान्तिकारियों पर कांग्रेस की पहली चोट क्रान्तिकारियों द्वारा २३ दिसम्बर १९२९ को वाइसराय पर आक्रमण की निन्दा है। यह प्रस्ताव स्वयं गांधी जी ने पेश किया और इसे पास कराने के लिये उन्होंने अपनी पूरी शक्ति लगा दी थी। दस वर्ष से गांधी जी कांग्रेस और जनता को प्रेम और सद्भावना द्वारा विदेशी सरकार के हृदय परिवर्तन का उपदेश देते आ रहे हैं। गांधी जी देश की शत्रु विदेशी सरकार के प्रतिनिधियों को तो मित्र कह कर सम्बोधन करते हैं परन्तु देश की स्वतन्त्रता के लिये अपना जान पर खेल जाने वाले क्रान्तिकारियों को 'कायर' और उन के काम को 'जघन्य' कह कर गालियां देते हैं।

'गांधीजी का यह प्रस्ताव कांग्रेस में किस प्रकार पास कराया गया, यह किसी से छिपा नहीं है। जनता को गांधी जी के रूठ जाने और कांग्रेस छोड देने की धमकियां दी गयी। तिस पर भी १७१३ प्रतिनिधियों की उपस्थिति में से गांधीजी के प्रस्ताव का केवल ८१ का ही बहुमत मिल सका। यह घटना इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि जनता किस के साथ है। गांधी जी के प्रस्ताव की यह दशा उस कांग्रेस के अधिवेशन में हुयी जो अहिंसा को सिद्धान्त रूप से मान हुये है। देश की विराट जनता का विचार क्या है? यह समझ लेना कठिन नहीं है।

गांधी जी ने कांग्रेस में दिये अपने भाषण को 'दी कल्ट आफ बम' के नाम से अपने पत्र यंग इण्डिया में प्रकाशित किया है। यह लेख तीन अंशों में है। एक अंश—उन का विश्वास, दूसरे में—उन की राय और तीसरा—उन के तर्क है। गांधी जी के विश्वास के विषय में हम कुछ नहीं कहना क्योंकि विश्वास का सम्बन्ध युक्ति से नहीं होता। हम उन की राय और तर्कों पर ही विचार कर सकते हैं। गांधी जी का कहना है कि उन के दस वर्ष के राजनैतिक नेतृत्व में देश की जनता ने अहिंसा के सिद्धांत को अपना लिया है। देश की जनता गांधी जी के प्रति श्रद्धा और भक्ति प्रकट करती है, इस में सन्देह नहीं है परन्तु इस का अर्थ यह नहीं कि जनता उन के राजनैतिक विचारों की अनुगामी है। जनता अधिकांश में अशिक्षित है और राजनैतिक दृष्टिकोण से विचार ही नहीं करती। वह गांधी जी को एक आध्यात्मिक और धार्मिक महापुरुष के रूप में देखती है और गांधी जी के विचारों को समझने की चिन्ता ही नहीं करती। गांधी जी न जनता की अवस्था और न उसके विचार ही जानते हैं। गांधी जी का सम्बन्ध जनता से समूह के रूप में, व्याख्यानों की वेदी से दर्शन देकर होता है। कितने वर्षों से उन्होंने कभी पीड़ित किसानों मजदूरों और भूखे मरते सफेदपोशों के बीच बैठ कर न बात की है और न उनकी भावना को समझा है। हमारे देश की जनता संसार के दूसरे मनुष्यों के समान ही है। अपने शत्रु से प्रेम करने के जादू को वह नहीं समझती। जनता जिससे प्रेम करेगी, उनका साथ भी देगी।

जिससे दुख पायेगी उससे घृणा करेगी और लडेगी । लडाई प्रेम से नही, घृणा से होती है । अन्याय और पाप से ताडन के लिये उस से प्रेम नही, घृणा करना आवश्यक है । हमारे देशकी जनता इसी स्वाभाविक नियम को मानती है ।

"गाधी जी का दावा है कि प्रेम द्वारा शत्रु को जीतन के सिद्धान्त मे उन का विश्वास प्रतिदिन वढता जा रहा है । हम पूछना चाहते है, अब तक उन्होने प्रेम स देश के कितने शत्रुओ का हृदय परिवतन कर लिया है ? क्या उन्हो ने ओडवायर, डायर, रीडिंग या इरविंग किसी भी हृदय जीत कर उन्ह भारत का मित्र बना लिया है ? उन का दावा ता पूरे ब्रिटिश राष्ट्र का हृदय जीत लेने का है ।

"यदि वाइसराय की गाडी के नीचे बम का विस्फोट ठीक ढग से हो जाता तो गाधी जी की आशका के अनुसार क्या अनर्थ हो जाता ? वाइसराय जरमी हो जात या मर जाते और वाइसराय से भारत के राजनैतिक नताओ की मुलाकात न हो पाती । इस मुलाकात म हुआ क्या ? देश के राजनैतिक नेता औपनिवेशिक स्वराज के लिय वाइसराय के सामने जाकर एक बार और गिड-गिडाये । पिछले वप कलकत्ता म विदशी सरकार को सघर्ष की चुनौती दे देने के बाद हमारे नेताओ का विदशी सरकार के सामने गिडगिडाना क्या उचित था ? यदि यह न हो सकता तभी अच्छा होता ।

'यदि इस विस्फोट स लाहौर और मेरठ षडयन्त्र के मामला और भुसावल के दमन के लिये जिम्मेवार भारत का शत्रु मर जाता तो अच्छा ही था । गाधी जी और पडित नहरू अपने आप को चतुर राजनीतिज्ञ समझत ह परन्तु कूटनीति मे उन्ह वाइसराय से मुह की ही खानी पडी है । साइमन कमीशन के विरोध मे जा राजनैतिक एकता भारत के सब दलो म हो गयी थी, वह इस वाइसराय ने कायम न रहने दी । स्वय काग्रेस ही आज दो दलो म बटी हुई है । भारत के इस दुर्भाग्य के लिये मौजूदा वाइसराय की कूटनीति ही जिम्मेवार है लेकिन गांधी जी इस आदमी को 'भारत का मित्र' बताते है ।

यदि गाधी जी समझते है कि क्रान्तिकारियो को काग्रेस से कोई आशा और सम्बन्ध नही तो यह हमारे साथ अन्याय है । हम स्वीकार करते है कि काग्रेस न देश की अचेतन जनता म स्वतन्त्रता की इच्छा जगायी है परन्तु काग्रेस का इतना ही काम नही है । हम उनस बडी-बडी आशाए हैं लेकिन काग्रेस पर समझौतावादी नेताओ का आधिपत्य काग्रेस की शक्ति को व्यर्थ कर रहा है । अहिंसा की नीति विदेशी शत्रु से समझौता करन का बहाना बन रही है । काग्रेस ने पूर्ण स्वराज्य क लक्ष्य को इस वर्ष स्वीकार किया है । क्रान्तिकारी पच्चीस वर्ष से इसी लक्ष्य के लिये सघर्ष करते चले आ रहे है । हमे आशा है कि काग्रेस मुक्ति के सच्चे मार्ग को अपनायेगी ।

"क्रांतिकारियों को सुधारों के लिये लालायित बताना उनके साथ सब से बड़ा अन्याय है। हम सुधारों के नहीं बल्कि व्यवस्था बदल देने की मांग करते हैं। ब्रिटिश गवर्नमेंट ने सुधारों के खिलौने क्रांतिकारियों की मांगों से नहीं दिये। यह खिलौने ब्रिटिश सरकार ने अपने उन पिट्ठुओं को रिझाने के लिये दिये हैं जो जनता का दमन करने में सरकार का साथ देते रहे हैं। कांग्रेस के होमरूल, स्वायत्त शासन, उत्तरदायी स्वायत्त शासन, पूर्ण उत्तरदायी शासन और औपनिवेशिक स्वाराज्य की मांगें विदेशी दासता के ही नाम हैं। क्रान्तिकारी इन्हें अपना लक्ष्य नहीं मानते। वे केवल पूर्ण स्वाधीनता में विश्वास रखते हैं और उसी के लिये बलिदान होते आये हैं।

"गांधी जी का दावा है कि जनता में दिखायी देने वाली जागृति का श्रेय कांग्रेस के असहयोग के कार्यक्रम के साथ साथ अहिंसात्मक नीति का है। यह धोखा है। जनता में जागृति सदा संघर्ष से आती है। रूस की जनता जागृति के मार्ग पर संघर्ष द्वारा ही आगे बढ़ी, अहिंसा की नीति से नहीं। सचाई तो यह है कि अहिंसा के बहाने समझौतावादी नीति ने कांग्रेस के असहयोग कार्यक्रम को भी असफल कर दिया है। अहिंसात्मक संघर्ष की नीति एक नया आविष्कार है जिसकी सफलता कभी प्रमाणित नहीं हुई। दक्षिणी अफ्रीका में अहिंसात्मक संघर्ष असफल रहा और भारतवर्ष में भी इस नीति द्वारा एक वर्ष में स्वराज्य पा लेने की प्रतिज्ञा मजाक ही बनी। बारदौली में इस नीति ने किसानों के आन्दोलन को असफल कर दिया। सब जगह असफल होने वाली इस नीति ने देश के भाग्य को बलिदान कर देश के साथ विश्वासघात किया है।

"गांधी जी ने देश की जनता को समझाया है कि क्रान्तिकारियों के साथ किसी प्रकार की सहानुभूति न प्रकट की जाये और न उन्हें कोई सहायता दी जाये ताकि क्रान्तिकारियों का 'भ्रम' दूर हो। गांधी जी जनता की भावना को समझने का दावा करते हैं परन्तु क्रान्तिकारियों की भावना को नहीं समझते। क्रान्तिकारी जान की बाजी लगाकर अपने उद्देश्य के लिये आगे बढ़ते हैं। वह 'शाबाश' और 'जय-जयकार' के नारों की परवाह नहीं करते। वह अपने देश की जनता और अपने उद्देश्य के प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा करने के लिये निन्दा और कठिनाइयों की भी चिन्ता नहीं करते। क्रान्तिकारियों को अपने कार्यक्रम की ठोस सचाई पर भरोसा है। वह बलिदान और सफलता की कसौटी पर पूरे उतरते हैं और यह असम्भव है कि जनता उन की सचाई को न पहचाने।

"हम अपने देश के नवयुवकों, श्रमिक वर्ग, किसानों और बुद्धिजीवियों से अनुरोध करते हैं कि वे देश की आज़ादी के झण्डे के नीचे इकट्ठे होकर हमारा साथ दें। देश में ऐसी व्यवस्था लाने का प्रयत्न करें जिस में राजनैतिक और सामाजिक दासता और आर्थिक शोषण असम्भव हो जाय।

अहिंसा के नाम पर खडी की गयी समझौतावादी नीति को ठोकर मार दीजिये ! हमारी संस्कृति और गौरव का कोई अर्थ उस समय तक नहीं होगा जब तक हम अहिंसा के नाम पर विदेशी दासता के सम्मुख सिर झुकाये रहेंगे !

क्रान्ति चिरजीवी हो !

करतारसिंह

प्रधान

हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसियेशन

यहां 'फिलासफी आफ दी बम' का कुछ संक्षिप्त अनुवाद दिया गया है। यह घोषणा अंग्रेजी के महीन अक्षरों के फुलस्केप कागज के चार पृष्ठों में थी। इसे तैयार करने में और छपवाने में कई दिन लग गये। छपवाई का प्रबन्ध आजाद ने किया था। अपने क्रान्तिकारी काम के विस्तार के लिये प्रेस का महत्व भैया खूब समझते थे। आवश्यक साहित्य यथेष्ट मात्रा में गुप्त रूप से छपवा लेने का प्रबन्ध उन्होंने काफी अच्छा किया हुआ था। जैसे उन्हें बम ढालने के लिये अपना कारखाना बना लेने की धुन सवार थी, वैसे ही अपना गुप्त प्रेस बना लेने की लगन भी थी। उस समय हमारा छपाई का काम कानपुर में ही होता था।

इन दिनों हम लखनऊ में अमीनाबाद के मकान में ही थे। भोजन बनाने का प्रबन्ध नहीं था। भैया और भगवती भाई दोनों प्रायः 'गुईन रोड' पर 'शुद्ध महावीर हिन्दू होटल' में भोजन कर आते थे। एक तो मेरा पेट खराब था, दूसरे 'महावीर हिन्दू होटल' के रिवाज के अनुसार पटरे पर पालथी मार कर भोजन करने में मुझे सुविधा ही न होती थी। पतलून पहन कर पालथी से बैठने में असुविधा भी होती है। धोती मेरे पास थी नहीं। मैं अमीनाबाद में एक छोटे से मुस्लिम दुकान से डबल रोटी, मक्खन और पाव भर टमाटर ले आता था। उन दिनों लखनऊ में टमाटर शायद चार पैसे में सेर भर मिलते थे। एक छोटा स्टोव चाय बनाने के लिये ले लिया था। जमे हुये विलायती दूध के डिब्बे भी उन दिनों बहुत सस्ते थे, शायद तीन आने में एक डिब्बा मिलता था जो चार-पांच दिन चल जाता था। मैं डिब्बे में से जमा हुआ दूध निकालने लगता तो उस की तारें सी बंध जाती थीं।

डिब्बे से निकलते दूध के तारों को देख कर आजाद नाक सिकोड कहते—"छी-छी ! यह क्या खाता है ?" एक बार मैंने जमा हुआ दूध डबल रोटी पर लगा कर एक टुकड़ा खाने का आग्रह आजाद से किया। बहुत 'ना-ना' करके उन्होंने अनिच्छा से टुकड़ा खाया और फिर माथे पर तियोरियां चढ़ा कर बोले—"वाह पट्ठे, यह मजे है ?" और उन्होंने डिब्बा ही खत्म कर दिया। इस के बाद जब भी मैं नया डिब्बा लाता, भैया उसे झपट कर भगवती भाई को पुकारते

"आओ, बाबू भाई आओ, रबड़ी लिवायें।" और दोनों बाजार पूरा किया चाट जाते। दोनों को ही चटोरेपन का बहुत शौक था।

जनवरी १९३० के तीसरे सप्ताह में आज़ाद ने दल के खास कार्यकर्ताओं की एक बैठक कानपुर में बुलायी थी। प्रयोजन था, नयी केन्द्रीय समिति बना कर सगठन के लिये क्षेत्र और काम बांट दिये जायें। यह बैठक शायद 'राम-नारायण के बाज़ार' में एक मकान की ऊपर की मंज़िल में हुयी थी। मकान पुराने ढंग का था। बिजली नहीं थी। भैया हमें लखनऊ से सन्ध्या की गाड़ी में लिवा ले गये थे। तब कोने में उन के दो विश्वस्त साथी रिवाल्वर लिये पहरा दे रहे थे। इस सभा में आज़ाद, भगवतीचरण, वीरभद्र, कैलाशपति और मेरे अतिरिक्त एक और भी सज्जन थे जिन्हें मैं तुरन्त ही पहचान गया और आश्चर्य भी हुआ। यह थे, आजकल उत्तर प्रदेश (१९५२) समाजवादी दल के एक प्रमुख नेता सेठ दामोदरस्वरूप। सेठ जी ने भी मुझे पहचान लिया।

सेठ जी से मेरे पूर्व परिचय की कहानी भी अद्भुत है। सम्भवतः १९२६ या २७ की बात है। आनन्द स्वामी (कृष्णानन्द जी) ने देहरादून और मसूरी के बीच राजपुर में डाक्टर केशवचन्द्र शास्त्री के बंगले और औषधालय के साथ वाली बड़ी बारादरी में 'शान्ति-आश्रम' चालू किया था। प्रयोजन था, नौजवानों को शरीर सुधार और राष्ट्रीय भावना की शिक्षा देना। स्वामी जी ने मुझे भी बुला लिया था। प्रकट में मैं नवयुवकों को लाठी, गतका, क्रिकेट और जुजुत्सु की शिक्षा देता था और बातचीत में उन्हें क्रान्तिकारी कार्यक्रम की ओर आकर्षित करने की चेष्टा करता था।

डाक्टर शास्त्री प्राकृतिक चिकित्सा करते थे। उन के रोगी प्रायः बड़ी-बड़ी फीसें दे सकने वाले अमीर आदमी ही होते थे परन्तु एक रोगी ऐसा था जिसे उन्होंने सहानुभूति के कारण ही अपने यहाँ रख लिया था। यह थे सेठ दामोदर स्वरूप। सेठ जी काकोरी-षड्यन्त्र के मामले में गिरफ्तार होकर मुकद्दमे की हालत में जेल में बहुत बीमार हो गये। उन का रोग डाक्टरों की राय में असाध्य था इसलिये सरकार ने उन्हें रिहा कर दिया था। रोगी की उस अवस्था में सेठ जी को शास्त्री जी ने चिकित्सा और उपचार के लिये अपने यहाँ आश्रय दिया था।

शास्त्री जी के औषधालय में क्रान्तिकारी रोगी के होने की बात सुन कर मैं सेठ जी को देखने के लिये गया था। बिस्तर पर उन का शरीर चमड़ी से मढ़े कंकाल जैसा ही था। उठने-बैठने की बात क्या, बिना सहायता के करवट भी न ले सकते थे। उन्हें कुछ भी पचता न था। कभी किसी फल का रस निचोड़ कर, कभी दूध फाड़ कर उस का पानी उन्हें दिया जाता था। वह भी प्रायः उन के पेट में न टिक पाता था। सेठ जी के क्रान्तिकारी उद्देश्य के प्रति आदर और उन के दारुण कष्ट के प्रति सहानुभूति के कारण मैं अपने सन्तोष

के लिये उन की सेवा करता था।

मुझ से पहले भी एक व्यक्ति सेठ जी की काफी सेवा कर रहा था। यह थी, एक अमेरिकन महिला मिसेज फ्रेडा दास, डाक्टर शास्त्री की मित्र और मेहमान और उड़ीसा के एक बड़े ताल्लुकदार श्रीयुत दास की धर्मपत्नी। सेठ जी का दारुण कष्ट देख कर फ्रेडा की आखो मे आसू आ जाते थे। यह जान कर कि सेठ जी के इस रोग का कारण राजनैतिक बंदी के रूप मे जेल काटना था, फ्रेडा उन का आदर भी करने लगी थी। फ्रेडा जिस नि सकोच और आत्मीय-भाव स सेठ जी के पूरे शरीर को नित्य गर्म पानी से धो-पोछ कर, बिस्तर की रगड से जख्मी हो गई उन की पीठ पर पाउडर आदि लगा उनके कपडे बदल कर बिस्तर सवार देती थी उसस सभी लोग उन्हे करुणामयी देवी समझ कर श्रद्धा करने लगे थे।

एक दिन 'शक्ति आश्रम' की ओर से की गयी सार्वजनिक सभा मे कुछ वक्ताओं ने फ्रेडा की मानवीय करुणा और भारत के प्रति सहानुभूति की प्रशसात्मक चर्चा भी कर दी।

दूसरे दिन से डाक्टर शास्त्री की अमेरिकन धर्मपत्नी और उन की साली माबेल ने भी सेठ जी की सेवा मे हाथ बटाना आरम्भ कर दिया। सेवा के लिये नये उत्साह मे इन दोनो महिलाओ न फ्रेडा को अपना प्रतिद्वन्दी मान लिया। फ्रेडा की इच्छा थी कि रोगी की सेवा का काम आरम्भ किया है तो निबाहती रहे। उस शायद रोगी से कुछ ममता भी हो गयी थी। मिसेज़ शास्त्री और उनकी बहन चाहती थी कि इस पुण्य कार्य को वे ही करें। तीनो की प्रतिद्वन्द्विता बढकर विकट झगडे का रूप ले बैठी। इस झगडे की लपेट मे थोडा बहुत मैं भी फस गया।

मिसेज शास्त्री और माबेल, फ्रेडा की अपेक्षा भी अधिक ममता से सेठ जी के पास घन्टो बैठी रहने लगी और उन्ह समझाती—"तुम हमारे मेहमान हो, मेरा पति तुम्हारी चिकित्सा कर रहा है इसलिये तुम्ह किसी दूसरे से सेवा नही करानी चाहिये।"

मैं प्राय सेठ जी के समीप रहता था इसलिए श्रीमती शास्त्री और माबेल ने मुझे भी शिकायत सुनान क विश्वास म ल लिया और मुझ से भी फ्रेडा की शिकायत शुरु की—"यह कैसी कृतघ्न औरत है। हमारे घर मे पडी है और हमे अपने मेहमान की सेवा करने का अवसर नही देती और इस मौके से अपनी प्रशसा और यश कमाती है। यह हमारा अधिकार है, इसका नही। तुम हमारे और सेठ जी के मित्र हो। तुम्हारा यह कर्त्तव्य है कि फ्रेडा को सेठ जी की सेवा न करने दो।"

दूसरी ओर फ्रेडा अपना दुख सुनाती—"इन औरतो को बीमार से कोई

सहानुभूति नही है। ये रोगी की शुश्रूषा और परिचर्या का ढग भी नही जानती मैंने तो नर्स का काम सीखा हुआ है। मेरे पास इस ट्रेनिंग का सर्टीफिकेट भी है। इन औरतों को केवल मेरी प्रशसा से ईर्ष्या है। मुझे प्रशसा की आवश्यकता नही है। मैं तो रोगी की, विशेष कर अपने देश के लिये त्याग करने वाले रोगी या व्यक्ति का यथासम्भव आदर और सहायता करना अपना मानवीय कर्तव्य समझती हू। तुम सेठ जी के मित्र हो, तुम्हारा यह कर्तव्य है कि उन औरतो को समझाओ कि इस मामले मे व्यर्थ झगडा न करें।"

सेठ जी इस झगडे से व्याकुल होने लगे। किसी समय पीडा रुकने पर जो थोडी-बहुत नीद आ जाती थी, वह सेवा-तत्पर देवियो के समीप बैठकर बात करते रहने के कारण दुर्लभ हो गयी। मैं किसी भी पक्ष की बात दूसरे पक्ष को समझा सकने मे असमर्थ था और बिगाड भी किसी से नही करना चाहता था। रोगी की सेवा के लिये होड बढती ही जा रही थी। सेठ जी भी उन दोनो पक्षो से तो कुछ कह नहीं पाते, यू भी उनका स्वर रोग के कारण इतना क्षीण हो गया था कि उन की बात सुन पाने के लिये कान को उनके मुह तक झुकाना पडता था। झगडे से खिन्न होकर सेठ जी अपनी मानसिक यातना की बात मुझ से ही कहते—"मैं तो घडिया गिन रहा हू कि कब प्राण निकलें। मावेल मुझ से प्रणय-लीला कर रही है। कहती है, मेरा सेवा करने का अधिकार उसी को है क्योंकि वह मुझे प्राणो से अधिक प्यार करती है। इसी प्रतीक्षा मे है कि मैं ठीक हो जाऊ तो मुझ से विवाह कर ले। फ्रेडा तो बेचारी मुझे बच्चे की तरह सम्भाल कर कभी एक आध बार माथा चूम लेती थी। यह चुड़ैल तो दिन भर पुच-पुच किया करती है। सिर भन्ना जाता है। एक ओर तो रोग का कष्ट, तिस पर यह व्याधि लग गयी।"

सेवा की होड का झगडा बहुत अधिक बढ गया और उसमे फ्रेडा हार गयी। मिसेज शास्त्री का आखिरी पैंतरा बहुत जबरदस्त था। उन्हो ने प्रचार शुरु कर दिया कि उनके पति तो बीमार का बहुत अच्छा इलाज कर रहे हैं परन्तु फ्रेडा जान-बूझ कर वैमनस्य से रोगी को कुपथ खिला देती है इसलिये रोगी अच्छा नही हो रहा बल्कि उसकी अवस्था गिरती जा रही है। फ्रेडा ने आसू बहाये और हार मान ली।

फ्रेडा ने दिल पर पत्थर रख कर प्रतिज्ञा कर ली कि अब वह रोगी के कमरे मे ही नही जायेगी। हार जाने पर भी वह अपनी ममता के पात्र रोगी का हाल जाने बिना न रह पाती थी। फ्रेडा शास्त्री जी का मकान छोड कर होटल मे चली गयी थी। मुझे बुला कर सेठ जी का हाल पूछती रहती थी। रोगी की सेवा के लिये अमेरिकन महिलाओ की यह प्रतिद्वन्द्विता कुछ लोगो को पहली सी जान पडती थी परन्तु इसका आधार जनता की नजरो मे ऊचा

उठने की वही प्रवृत्ति थी जिसके कारण कांग्रेस के नेतृत्व का परिणाम जेल जाना होने के युग में भी नेतृत्व के लिये भीषण प्रतिद्वन्द्विता और षडयंत्र चलते रहते थे।

फ्रेडा की अनुपस्थिति सेठ जी को भी खलती थी। वे मुझे उसे बुला लाने के लिये कह देते या उसका हाल-चाल पुछवाते रहते। एक दिन माबेल ने शिकायत की कि मैं फ्रेडा का साथ दे रहा हूं। शिकायत करने का ढंग जरा परेशानी पैदा करने वाला था। माबेल की आयु क्या थी, यह तो मैं जान न सका था, जिज्ञासा भी न थी। देखने में वह बिलकुल नवयुवती लड़की ही जान पड़ती थी। शरीर की गठन और नखशिख अच्छे थे। चेहरे पर चेचक के हलके दाग तो थे परन्तु पाउडर की तह के नीचे छिप जाते थे। कभी-कभी वह सैर के लिए मुझे साथ ले जाती थी। मुझे भी उस के साथ घूमना-फिरना, हंसना-बोलना अच्छा लगता था। फ्रेडा का साथ देने की शिकायत करते समय उसने कहा—"मैं तो तुम से इतना प्यार करती हूं और तुम मेरे विरुद्ध मेरे शत्रु की सहायता देते हो। अगर ऐसा करोगे तो तुम्हारे साथ घूमना फिरना और बोलना बन्द कर दूंगी।"

माबेल का यह ढंग मुझे अच्छा न लगा। उसे फ्रेडा से मिलना-जुलना छोड़ देने का वचन देना उचित न लगा। यह कहना भी अच्छा न लगा कि मुझे उसकी कोई परवाह नहीं थी। बड़ी दुविधा थी। दुविधा स्वयं ही सुलझ गयी। जाने किस कारण फ्रेडा अगले ही दिन राजपुर छोड़ कर चली गयी। लगभग तभी मुझे लायलपुर से तार द्वारा बहिन प्रेमवती के पिता की मृत्यु का समाचार मिला। मैं भी राजपुर से चल दिया और फिर वहां न लौटा। एक आध बार आनन्द स्वामी को पत्र लिख कर सेठ जी के स्वास्थ्य की बाबत जिज्ञासा की फिर भूल गया था। उस के लगभग चार वर्ष बाद सेठ जी को उस बैठक में ही देखा। वह मृत्यु से संघर्ष में जीत कर चलने-फिरने योग्य हो गये थे।

उस सभा में सेठ जी के आने का अर्थ था कि फिर जेल और फांसी की ओर कदम बढ़ा रहे थे। बाद में मालूम हुआ कि भैया उन्हें काकोरी का अनुभवी साथी समझ कर नये संगठन में सुझाव और सहायता की आशा से खींच लाये थे परन्तु इसके बाद दल के काम में सेठ जी को फिर कभी नहीं देखा।

केन्द्रीय समिति कानपुर की बैठक में कई महत्वपूर्ण सुझावों पर विचार हुआ। हम लोगों ने बैठक से पूर्व भैया से बात की थी कि हमारे सशस्त्र संगठन और काम के पीछे सैद्धान्तिक रूप से सुलझे हुये, दृढ़ और विश्वस्त लोगों का एक संगठन रहना आवश्यक है। यह संगठन दल को आवश्यक संख्या में साथी दे सके और दल के सशस्त्र कामों का पूरा प्रभाव जनता पर डालने का प्रयत्न करे। हमारा अभिप्राय मजदूरों, सरकारी नौकरों, सिपाहियों और विद्यार्थियों

मे ऐसी विचार-गोष्ठिया (स्टडी सर्कल) बनाने का था जहा युवक वर्ग क्रान्ति से मूल प्रयोजन और मार्ग पर स्पष्ट विचार और भावना ग्रहण कर सकें।

सेठ दामोदर स्वरूप को पुलिस खूब जानती थी। उन का स्वास्थ्य भी फरारी का कठिन जीवन निबाहने योग्य न था। इस कठिनाई के प्रतिफल म सेठजी राजनैतिक रूप से सचेत जनता म विश्वस्त क्रान्तिकारी के रूप म परिचित हो चुके थे। उदाहरणत दल के लिय धन सचय करन या नेताओ से कोई बात करने अथवा नवयुवको को उग्र राजनीति की ओर आकर्षित करन की कोई बात कहने पर उन्ह कोई सदिग्ध व्यक्ति या क्रान्तिकारियो के नाम पर ठगी करने वाला नही मान सकता था।

सेठजी को केन्द्रीय समिति म बुलान का अभिप्राय उन्हे दल की ओर से ऐसे सगठन का काम सौंपना था जो काग्रेस और नौजवान भारतसभा की अपेक्षा गुप्त हो परन्तु हिसप्रस के सशस्त्र दल की अपक्षा प्रकट हो। इस संगठन का काम शस्त्रा का प्रयोग छोडकर गुप्त साहित्य का प्रचार, धनसचय और ऐसे साथी तैयार करना हो जो किसी भी समय सशस्त्र सघर्ष के लिये बुलाय जा सकें। भैया का यह सुझाव था कि दल के आशकापूर्ण रहस्यो की रक्षा के लिय यह काम सेठ जी को सौप कर बिलकुल अलग कर दिया जाय। सेठ जी को आशका और सकट मे न डाला जाय। वे सकट का सामना करन वाल नवयुवक तैयार करें।

सेठ जी के वय और उन के झेले हुये कष्टो का विचार करके भैया न उन्हे हिसप्रस का प्रधान बना देन का प्रस्ताव किया। सन १९२८ म भैया आजाद ही दल के प्रधान और कमाण्डर-इन-चीफ दानो ही माने जाते थ। इन दोनो पदो मे व्यक्तिगत लाभ चाहे कुछ न रहा हो परन्तु दल के सीमित क्षेत्र मे एकाधिपत्य और सम्मान का एकाधिकार तो था ही। भैया न स्वय ही सेठजी को प्रधान का पद देने का प्रस्ताव किया और स्पष्ट कहा कि सिद्धान्तो के स्पष्टीकरण और लोगो के विचार परिवर्तन का काम वे स्वय ठीक ठीक नही निबाह सकते। आजाद का यह निस्पृहता का व्यवहार इस बात का प्रमाण था कि व दल के उद्देश्य को अपन व्यक्तित्व स अधिक महत्व देते थे।

दल क अनुशासन और रहस्य की रक्षा के लिये, प्रचार और सशस्त्र सगठन को अलग-अलग करके भी उन का मूल सम्बन्ध एक जगह रखने के लिये, दोनो क्षेत्रों का सेक्रेटरी या सयोजक भगवती भाई को ही बनाया गया। वे प्रधान (सेठ दामोदर स्वरूप) और कमाण्डर-इन-चीफ (भैया आजाद) दोनो मे सम्बन्ध सूत्र रूप दोनो के मत्री निश्चित किय गये। आजाद, सेठ जी और भगवती भाई का स्थायी केन्द्र बना कर इस सूत्र द्वारा प्रान्तो का पारस्परिक सम्बन्ध कायम रखना निश्चित हुआ। यू० पी० के सगठन का काम वीरभद्र

तिवारी को, दिल्ली का कैलाशपति को और पंजाब का मुझे सौंपा गया।

वीरभद्र तिवारी ने विश्वास दिलाया कि लाहौर कांग्रेस में उस की मुलाकात बंगाल के प्रसिद्ध क्रान्तिकारी प्रतुल गांगोली से हुयी थी और उन्होंने हमारे दल से अपने दल का सम्पर्क स्थापित कर लेने के लिये इच्छा प्रकट की थी। महाराष्ट्र के लिये भी आजाद ने एक आदमी का नाम सुझाया था परन्तु वे लोग समय पर आ नहीं सके।

सशस्त्र काम को प्रोत्साहन देने और अपना एक प्रेस जमाने का निश्चय किया गया। धन का प्रश्न महत्व का था। निश्चय किया गया कि धन यथासम्भव सहानुभूति रखने वाले लोगों से ही लिया जाये और डकैती से बचा जाये परन्तु संगठन और सहानुभूति रखने वाले लोगों की संख्या पर्याप्त रूप में बढ़ाये बिना धन का प्रश्न सुलझ नहीं सकता था। उस में समय लगना आवश्यक था। आरम्भिक अवस्था में डकैती करके काम चलाना ही अनिवार्य समझा गया। इस के लिये उचित अवसर और आयोजन की जिम्मेवारी आजाद पर छोड़ दी गयी।

वीरभद्र तिवारी ने सुनाया कि सशस्त्र संघर्षों और डकैती में भाग लेने वाले व्यक्तियों के घटनास्थल पर मारे जाने या गिरफ्तार हो जाने की सम्भावना रहेगी इसलिये संगठन की परम्परा बनाये रखने के लिये प्रान्तीय संगठन कर्ता सशस्त्र संघर्षों का संगठन और निर्देश तो करे परन्तु उन में सक्रिय भाग न ले।

मैंने इस सुझाव का विरोध किया था। मेरी आपत्ति यह थी कि काम आरम्भ करते समय यदि दल के मुख्य संगठन कर्ता उस में भाग न लेंगे तो नये साथियों में भी आत्मरक्षा की चिन्ता की कमजोरी अनिवार्य रूप से घर कर जायगी। दल की परम्परा और संगठन का आधार बनाये रखने के लिये केन्द्र का तिगड्ड आजाद, सेठ और भगवती काफी है।

कैलाशपति ने भी वीरभद्र के सुझाव का समर्थन किया। मैं भगवती भाई और आजाद तीनों इस सुझाव के विरुद्ध थे। समझौता इस बात पर हुआ कि सेठ जी को छोड़कर आरम्भ में सभी साथी कम से कम तीन बार सशस्त्र काम में सहयोग दें। कोई भी साथी अदालत से फांसी का दण्ड पाने योग्य काम कर चुकने के बाद और केन्द्रीय समिति के लिये अनिवार्य रूप से आवश्यक समझा जाने पर सशस्त्र काम में भाग लेने से रोक दिया जा सकता है। सशस्त्र काम में भाग न लेना अपनी इच्छा पर नहीं, बल्कि दल के निर्णय पर रखा गया। इसी बैठक में *'फिलासफी आफ दी बम'* को पूरे उत्तर भारत, बंगाल, महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश तक बांटने का निश्चय किया गया। अपने अपने प्रान्तों में पर्चे के ठीक बटवारे की जिम्मेवारी प्रान्तीय संगठन कर्त्ताओं को दे दी गयी।

इस बैठक के बाद दल के काम के लिये मेरा लाहौर में रहना ही अधिक

उपयोगी था। इन्द्रपाल को लखनऊ बुलाया। लाहौर में एक ऐसा मकान किराये पर लेने के लिये समझाया जो शहर से बाहर एक ओर हो। लाहौर में लगभग बीस वर्ष रह चुका था, वहां जान-पहचान खूब थी। इन्द्रपाल के हाथ ही पंजाब के लिये 'फिलासफी आफ दी बम' के पर्चे का बण्डल भी पहले ले लाहौर भेज दिया। अभिप्राय यह था कि अपने साथ ले जाने पर यदि पहचान कर पकड़ा जाऊं तो इतने परीश्रम से तैयार की गयी चीज़ व्यर्थ नष्ट न हो जाये।

इन्द्रपाल इस बार लखनऊ आया तो नया गरम सूट पहने था। उस से पूछा, ऐसा बढ़िया नया सूट कहां से मिल गया? मालूम हुआ कि इसी बीच उस का विवाह हो गया है। हम लोगों ने विस्मय प्रकट किया—"जब तुम सदा खतरे और मकट में सिर दिये हो तो इस शादी का क्या मतलब? यदि लड़की से तुम्हारा प्रेम होता, उसे जानते-पहचानते, उस के सकट से न घबराने और साथ देने का भरोसा होता तो भी एक बात थी।"

इन्द्रपाल ने उत्तर दिया—"लड़की से तो शादी के बाद अभी अच्छी तरह बात भी नहीं हुई है। सगाई पहले ही हो चुकी थी। विवाह में टालमटोल में लोगों को सन्देह हो रहा था और घर में खामुखाह झगड़ा-झझट चल रहा था। रोज ही लोग मुझे घेर कर समझाने के लिये बैठ जाते थे। ब्याह हो भी गया तो क्या। दल का काम अपनी जगह, ब्याह अपनी जगह। सभी सिपाहियों का विवाह होता है और सभी लड़ाई पर भी जाते हैं। विवाह क्या हमारे ही लिये कमजोरी बन जायगा। हम तो तीस रुपये माहवार के लिये सिपाही बन कर तोपों के आगे सीना करने वाले सिपाहियों की अपेक्षा अधिक समझदार हैं।

इन्द्रपाल के इस तर्क के आगे चुप हो जाना पड़ा। उस के व्यवहार पर मुग्ध होकर भगवती भाई गद्गद् स्वर में बोले—"He is a jewel यह आदमी रत्न है।"

इन्द्रपाल ने बताया कि वह ट्रेन में अच्छा नया सूट पहने यात्रा कर रहा था। रास्ते में एक भलेमानस मुसाफिर ने उस से अंग्रेज़ी में बात शुरू कर दी।

इन्द्रपाल ने उत्तर दिया कि वह अंग्रेज़ी नहीं जानता। मुसाफिर ने कुछ विस्मय से प्रश्न किया कि वह किस महकमे में नौकर है।

इन्द्रपाल ने बहुत स्पष्टवादिता से उत्तर दिया कि वह कलम की मजदूरी करने वाला कातिब है।

यह सुन कर मुसाफिर मुस्करा कर चुप रह गया।

हम लोगों ने उसे समझाना चाहा कि उस का सूट पहन कर यात्रा करना ठीक न था। यह बात उसे भली न लगी। उस ने एतराज़ किया, क्या अंग्रेज़ी न जानने वालों और मज़दूरी से पेट भरने वालों को सूट नहीं पहनना चाहिए? यह अंग्रेज़ी पढ़े-लिखे लोगों का ही अधिकार है। क्या यह अंग्रेज़ों की दिमागी

गुलामी नहीं है ?

हमने समझाया कि अधिकार और सिद्धान्त से तो सभी लोगों को सभी कुछ पहनने-ओढ़ने का अधिकार है परन्तु यदि तुम्हारे इस प्रकार के व्यवहार और बातों से किसी को तुम्हारे प्रति सन्देह हो जाय तो यह ठीक नहीं। ऐसे प्रश्न पूछने वाला सी० आई० डी० का आदमी भी तो हो सकता था। यदि वह तुम्हें असाधारण व्यक्ति समझ कर तुम्हारे आने जाने की जगह के बारे में जानने का यत्न करता ? जब हमने एक असाधारण काम हाथ में लिया है, जिसे गुप्त रखना आवश्यक है तो हमें ऐसा व्यवहार अपनाना आवश्यक है कि वह चाहे हमें स्वयं असाधारण और अनुचित जचे परन्तु सर्वसाधारण और हमें खोजने वालों की दृष्टि में इतना साधारण हो कि वे हम पर ध्यान ही न दें।

इन्द्रपाल को यह बात जच नहीं रही थी। उसे याद दिलाया, तेहखंड में बदरपुर की पुलिस के हाथ पड़ कर यदि मैं दीन बनिये का सा व्यवहार न करता और आत्मसम्मान दिखाने की चेष्टा करता तो क्या होता ? हम लोगों को जिन्दगी भर ऐसा ही अनुशासन निबाहना होगा।

इन्द्रपाल को यह तर्क समझ में आ गया। हाथ मिलाकर बोला—"अब आया समझ में!"

फरारी के दिनों में भी अनेक परिचित पूछा करते थे और अब भी पुरानी बातों को याद कर कई लोग पूछ बैठते हैं—पुलिस तुम पर सन्देह क्यों नहीं करती थी ? सन्देह न होने देने का एक ही उपाय था, खूब सोच समझ कर प्रकट में ऐसा स्वाभाविक व्यवहार करना कि असाधारण वास्तविकता बिलकुल छिप जाय।

लाहौर में इन्द्रपाल ने हमारे प्रयोजन के लिये एक मकान पुराने गवर्नमेंट प्रेस के आगे कृष्णनगर की ओर ले लिया था। तब कृष्णनगर की बस्ती घनी नहीं थी। उस समय कहीं कहीं मकान बन रहे थे। उस अहाते में दो ही मकान थे। एक में मकान मालिक की विधवा रहती थी दूसरा इन्द्रपाल ने किराये पर ले लिया था। इन्द्रपाल ने इस जगह को एकान्त होने और वहां अधिक लोगों के आने जाने की सम्भावना न होने के कारण पसन्द किया था।

मैं उस मकान में रात के समय पहुंचा था। सुबह उठ कर आस-पास देख रहा था। पड़ोसिन विधवा अपनी गाय या भैंस को सानी दे रही थी। उसे देखते ही पहचान लिया। यह थीं श्रीमती धनदेवी, स्वर्गीय लाला भगतराम पुरी की धर्मपत्नी। भगतराम जी पहले सूत्तरमण्डी में रहते थे। वे आर्य समाज के जाने-माने उत्साही कार्यकर्त्ता थे। हमारे परिवार का उनसे बहुत घनिष्ट परिचय था। मैं उन्हें मामा और धनदेवीजी को मामी कहता था।

धनदेवीजी मेरे फरार हो जाने की बात जानती थीं। आशंका थी कि मुझे

पहचान कर वे मा को खबर देने जायगी और बात फैल जायगी। मैं बहुत सावधानी से रहने लगा कि वे मुझे देख न पायें। दिन में तो प्राय मकान के बाहर जाता ही न था। सुबह तड़के या सध्या समय बाहर जाता तो उनके दरवाजे के सामने से गुजरना पड़ता था। तब प्राय साथ चलते इन्द्रपाल की ओर मुंह मोड़े रहता या दूसरी ओर देखते रहना। पोशाक लाहौर में ऐसी ही पहनता था जैसी वहा पहले रहने समय न पहनी थी।

पंजाब के अधिकांश स्थानों में तो 'फिलासफी आफ दी बम' के पर्चे अच्छी तरह बटवा देने में कोई उलझन न हुई थी। यह काम धनवन्तरी, एहसान इलाही और फजल कुर्बान ने नौजवान सभा के चुने हुए साथियों द्वारा कराने का प्रबन्ध कर लिया था। प्रश्न था, पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेश में पर्चे बाटने का। सीमान्त प्रदेश में भारतीय ब्रिटिश राज की सीमा होने के कारण राजनैतिक सतर्कता, दमन और पुलिस की कड़ाई अधिक थी। हम लोग भी सीमान्त में अपने सूत्र जमाने का यत्न करते ही रहते थे। कानपुर की बैठक में सीमान्त से सम्पर्क जोड़ने का काम भी मुझे सौंपा गया था।

सुखदेव ने रावलपिण्डी में हसराज वोहरा को निश्चित तौर पर बैठा दिया था। जयगोपाल तो कोहाट के समीप बिल्कुल सीमा के एक छोटे कसबे में रहने लगा था, जहां से आवश्यकता होने पर सीमा लाघ जाने में सुविधा हो सकती थी लेकिन वे दोनों गिरफ्तार होकर मुखबिर बन चुके थे। यहां नये सूत्र जमाने की जरूरत थी। पहले ही कह चुका हू कि इन्द्रपाल भी रावलपिण्डी कुछ दिन रह आया था। मैंने इन्द्रपाल को साथ लेकर स्वय रावलपिण्डी जाने का निश्चय किया।

रावलपिण्डी में इन्द्रपाल के १९२७ के परिचितों में से विश्वस्त साथियों से मिल कर बात की। वाइसराय की घटना के प्रभाव से इन लोगों में हमारे प्रति अगाध विश्वास उत्पन्न हो चुका था। पर्चे बाटने के प्रबन्ध में कोई कठिनाई नहीं हुई और जिन लोगों ने इस काम में उत्साह से सहयोग दिया था उन्हीं को लेकर भविष्य में एक स्थानीय संगठन की नींव डाल दी गयी। क्रान्तिकारी कार्य के जोखिम के लिये नौजवानों को उत्साहित करना एक समस्या रहती थी परन्तु ऐसे भी लोगों से सम्पर्क पड़ता था जिनके उत्साह को सीमा में रखना समस्या हो जाती थी। दोनों ही प्रकार के लोग आशंका का कारण थे। भीरु लोगों से तो ठीक समय पर कायरता के कारण काम पूरा किये बिना पीछे हट जाने या पुलिस के हाथ पड़ने पर दूसरों को भी फंसा देने का डर था। उच्छृंखल लोगों से आशंका रहती थी कि अकारण आपत्ति बटोरने की उमंग में कुछ किये बिना ही स्वयं फंस जाने के साथ दूसरों को ले डूबेंगे। रावलपिण्डी में ऐसे ही नवयुवकों से सम्पर्क पड़ा। उत्साह प्रकट करने के अवसरों के अभाव के कारण

वे कुछ कर डालने की उमग मे उच्छृंखलता की ओर बढ़ जाना चाहते थे।

'फिलासफी आफ दी बम' के बहुत अच्छे ढग से देश भर मे बट जाने और इस सम्बन्ध म कोई गिरफ्तारी न हो सकने से जनता म हमारे दल की शक्ति के प्रति आस्था बढ गयी। शिक्षित और सचेत लोगो को पर्चे मे प्रकट किये गये विचार और तर्क तो पसन्द आये ही, इसके साथ ही पर्चे के एक ही दिन, एक ही समय (२६ जनवरी सूर्योदय के समय) सभी जगह मिलने का प्रभाव भी बहुत हुआ। यही समझा गया कि हमारी शाखायें सूत्र और अनुशासन सभी जगह मौजूद हैं। जनता राजनैतिक दलो के सिद्धान्तो और कार्यक्रम से सहानुभूति रखने पर भी उन का भरोसा तभी करती है जब उन मे कुछ कर सकने की शक्ति भी देख पाती है। अब यह बता देने म आपत्ति नही है कि पर्चों को बाटने के लिये कई जगह अपने कोई निजी मित्र ढूढ कर पर्चे बटवा दिये गये, कही साथियो ने स्वय ही बाट दिये। दो-दो, तीन तीन शहर एक ही आदमी ने सम्भाल लिए। मैं सूर्योदय से पहले ही उस स्थान से रवाना हो गया था। जनता अधिकाश म इस पर्चे को क्रान्तिकारी कामो के आरम्भ की घोषणा समझी और उत्सुकता से विदेशी सरकार पर नवीन आक्रमणो की प्रतीक्षा करने लगी।

भगतसिंह और दत्त को जेल से निकालने की योजना

कानपुर की बैठक मे तय हुआ था कि सब से पहला काम लाहौर षडयंत्र के बन्दियो को जेल से छुडाने के लिये प्रयत्न किया जाये। भैया को हम हसराज की चमत्कारिक 'मूर्छा गैस' और 'अवरोधक' औषधि का रहस्य और यह चीजें यथेष्ट मात्रा मे मिल सकने के आश्वासन का समाचार दे चुके थे। स्वभाविक ही हमारी तरह ही उन्हें भी इसमे बहुत उत्साह हुआ था और सभी कैदियो को जेल या अदालत से छीन लाने की योजना सरल जान पडने लगी थी। मुझे पहला काम यही सौंपा गया था कि हसराज से गैस या 'वेव' तैयार करवाकर साथियो को जेल से छुडाने की योजना बनाऊं।

इन्द्रपाल गैस के सम्बन्ध मे समाचार लेने लायलपुर गया था। लौट कर उसने बताया कि आवश्यक चीजें न मिल सकने के कारण गैस नही बन सकी थी। हसराज का कहना था कि गैस बनाने के लिय कोकीन चाहिये। उस के पास जितनी थी, समाप्त हो गयी है।

मैं कोकीन का गैस मे कोई सम्बन्ध न समझ सकता था परन्तु हसराज की तो कोई भी बात समझ न आती थी। तर्क छोड कर विश्वास ही करना पडता था। मैं स्वय बाहर कम ही निकलता था। लाहौर मे अपने सूत्रो की कमी न थी। दुर्गा भाभी, धन्वन्तरी, एहसानइलाही थे ही। अब धर्मपाल, प्रेम, विशम्भर और सुखदेवराज भी हो गये थे। मैंने धन्वन्तरी को बुलाकर कहा—"हमारे साइन्टिस्ट (वैज्ञानिक) को दल के आवश्यक काम के लिये कुछ कोकीन चाहिये।"

धन्वन्तरी के साथ सुखदेव भी आया था। दोनो बहुत हसे और सन्देह प्रकट किया—"तुम्हारा साइन्टिस्ट कोकीन खाता है ?"

धन्वन्तरी और सुखदेवराज उस समय तक न तो यह जानते थे कि हमारा साइन्टिस्ट कौन है और न यह कि कोकीन से क्या बनाया जा रहा है। हसराज का परिचय दूसरो को न देने के लिये हम लोग आपस मे उसका नाम न लेकर उपनाम साइन्टिस्ट ही पुकारते थे।

धन्वन्तरी और सुखदेव को विश्वास दिलाने का यत्न किया कि साइन्टिस्ट

को कोकीन दल के काम के लिये ही चाहिये। खाता भी हो तो हमारी बला से। हम उस से काम लेना है। वह यदि हमारा काम कर दे तो उस के कोकीन खान के 'अपराध' की चिन्ता नहीं, चाहे जितनी खाय। धन्वन्तरी ने कोकीनखोरों से परिचय की बदनामी की चिन्ता न करके जैसे-तैसे दो ही दिन में कोकीन की एक मोटी पुडिया मुझे सौंप दी।

इन्द्रपाल यह पुडिया लेकर लायलपुर गया और आकर हंसराज की ओर से आश्वासन दिया कि सात दिन में सब कुछ तैयार मिलेगा। सात दिन बाद इन्द्रपाल फिर लायलपुर गया तो खबर लाया कि वह कोकीन ठीक न थी। जैसी कोकीन चोरी से बिकती है, उस से काम नहीं चलेगा। प्रयोगशालाओं में वैज्ञानिक परीक्षणों के लिये जो कोकीन उपयोग की जाती है, वैसी 'प्योर' (शुद्ध) वस्तु चाहिये। इस कोकीन से तो बेचारे साइन्टिस्ट की दूसरी चीजों, जो गैस बनाने के लिये साथ मिलानी पड़ी, की ही हानि हुयी।

हंसराज ने इन्द्रपाल को यह भी बताया था कि वैसी कोकीन लायलपुर के एग्रीकल्चर कालेज की लेबारेटरी में है। वह वहां से कोकीन चुरा लेने की कोशिश कर रहा है, हम लोग भरोसा रखें। बड़ी व्याकुलता से हम लोग गैस तैयार होने की प्रतीक्षा कर रहे थे।

लाहौर में हमारा खर्च दुर्गा भाभी और धन्वन्तरी के इकट्ठे किये पैसे से ही चल रहा था। बहिन प्रेमवती पिछले अक्टूबर-नवम्बर में ही बहुत बीमार हो जाने के कारण कांगड़ा चली गयी थी। बुखार उन्हें पहले ही रहता था। उस की चिन्ता न करने के कारण विकट क्षय रोग हो गया था। परिवार के लोग उन्हें कांगड़ा ले गये कि पहाड़ में चीड़ों के वृक्षों की हवा में रोग के इलाज में सहायता मिलेगी। वे बड़ी अनिच्छा से गयी और रोग शैया पर पड़े-पड़े, मन सदा लाहौर पहुंचने की बेचैनी में छटपटाता रहने के कारण शीघ्र ही उन का शरीर प्राणों को सम्भाल सकने में असमर्थ हो गया।

धर्मपाल उन की रोगी अवस्था में एक बार उन्हें देख आया था। उस के शायद सप्ताह भर बाद ही उन की मृत्यु हो गयी थी। उस समय भी बहिन प्रेमवती ने धर्मपाल से लाहौर में रहने वाले सगे सम्बन्धियों के बारे में जिज्ञासा न कर हम लोगों और दल के सम्बन्ध में ही अधिक बातचीत की थी। कांगड़ा जाने से पूर्व वे अपनी तीन विशेष शिष्यों प्रकाशवती कपूर, प्रेमनाथ और विमला का परिचय दुर्गा भाभी से करा गयी थीं। प्रेम और विमला भाई-बहिन थे। प्रकाशवती कपूर दल के लिये प्रेमवती को निरन्तर कुछ आर्थिक सहायता देती रहती थी। प्रकाशवती की सहायता का स्रोत घर से चोरी करना था। घर की बड़ी लड़की होने के कारण मां प्रायः ही चाबियां उन्हें सौंप देती थीं। प्रकाशवती कभी मां की सन्दूकची में से नोट खिसका लेती, कभी कोई छोटा-

मोटा जेवर निकाल लेती। प्रकाशवती की यह सहायता पहले प्रेमवती द्वारा ही हम लोगों तक पहुंचती थी अब वह विमला के भाई प्रेम द्वारा सीधे मेरे पास भेजने लगी थीं। प्रकाशवती और विमला कौन हैं, यह मैं जानता था परन्तु उन से कभी साक्षात्कार न हुआ था।

आर्थिक कठिनाई तो थी ही। माल-ताल कर अब पहले से कुछ अधिक ही मिल सकता था परन्तु अब खर्च भी बढ़ गया था। मैं डकैती की मजबूरी से बचना चाहता था। इन्द्रपाल से प्रायः इन कठिनाइयों की चर्चा होती रहती थी। इन्द्रपाल ने सुझाव दिया, जाली रुपया क्यों न बनाया जाय। उस का एक परिचित यह काम जानता था। सोचा, यदि यह काम हो सके तो बड़ी भारी समस्या सुलझ जाय अर्थात डकैती न करनी पड़े। डकैती से मुझे और भगवती भाई दोनों को बहुत विरक्ति थी। विरक्ति का मुख्य कारण था कि हम जनता की दृष्टि में क्रान्तिकारियों का डकैती से सम्बन्ध होना पसन्द नहीं करते थे।

इन्द्रपाल गुलाबसिंह को मुझ से मिलाने के लिये लाया। गुलाबसिंह ने समझाया कि सिक्का बनाने का सांचा बना लिया जायगा और उस में तीन धातुओं के मेल को डाल कर रुपया बना जायेगा। उस ने अपना ढाला हुआ एक सिक्का दिखाया, जिस की खनक उस समय के अच्छे रुपये जैसी थी। किनारे जरूर साफ न थे और देखने से ही सन्देह हो जाता था। ख्याल किया कि किनारे ठीक कर सकना बहुत कठिन न होगा। मुझे भागराम की दस्तकारी पर बहुत भरोसा था। मैंने उस की सहायता के लिये गुलाबसिंह के साथ कर दिया। इस काम में काफी समय, परिश्रम और पैसा भी नष्ट हुआ परन्तु बन कुछ न सका।

इन्द्रपाल ने मुखबिर बनने का जो नाटक किया था उस में जाली सिक्के बनाने की बात भी पुलिस को बता दी थी। परिणाम स्वरूप मेरी फरारी के समय अपराधों की जो धारायें मेरे विरुद्ध लगायी गयी थीं उनमें जाली सिक्का बनाने की भी धारा थी। जाली सिक्के बनाने का अपराध सजा की दृष्टि से हत्यापूर्ण डकैती के समान ही संगीन है। सरकार की सुरक्षा के विचार से उसका यह दृष्टिकोण ठीक है। क्योंकि जाली सिक्का बनाना सरकार के सिक्का बनाने के एकाधिकार पर चोट है और उस की आर्थिक सत्ता की जड़ काटना है। हम लोगों की दृष्टि में वह हत्यापूर्ण डकैती से अच्छा ही था। रहा सरकारी सजा का डर, पकड़े जाने पर हम सरकार से किसी प्रकार की दया या लिहाज की आशा या इच्छा न थी।

हंसराज की मूर्च्छा गैस की प्रतीक्षा में लगभग दो मास बीत चुके थे। इन्द्रपाल और सुखदेव को फिर लायलपुर भेजा। उन्हें कहा गया था कि हंसराज

के साथ जाकर देख लें कि कालिज की प्रयोगशाला मे कोकीन कहाँ रखी है। यदि दिन के समय किसी तरह वह कोकीन न ला सकें तो रात मे खिड़कियों और आलमारियों के शीशे काट कर कोकीन निकाल लायें। इन्द्रपाल और सुखदेवराज हंसराज के साथ दिन म कालिज जाकर जगह देख आये और रात मे कोकीन चुराने गये। यह कोकीन हमारे लिये उस समय वैसी ही बहुमूल्य थी जैसी कि मेघनाथ का बाण लगने से लक्ष्मण के मूर्छित हो जाने पर रामचन्द्र जी के लिये द्रोणागिरि पर्वत की अमोघ बूटी आवश्यक हो गयी होगी। यह कोकीन रूपी बूटी पाकर हम लोग अपने साथियों को जेल से निकाल लाने और ब्रिटिश सरकार की शक्ति पर बहुत बड़ी चोट करने की आशा कर रहे थे। उस समय तक हंसराज की मूर्छा गैस पर हम अन्धविश्वास था।

इन्द्रपाल और सुखदेवराज अपने साथ शीशा काटने की कलम लेते गये थे। कालिज प्रयोगशाला के बराम्दे म खिड़की का शीशा काटकर, चिटखनी खोल कर व भीतर चले गये। भीतर पहुंच कर अपने आपको निर्भय समझ कर सुखदेवराज न आवश्यकता से अधिक बहादुरी दिखायी। आलमारी का शीशा काटने की घिसघिस करने की अपेक्षा कोई चीज उठाकर शीशा तोड़ दिया और हंसराज द्वारा दिखायी हुई बोतल जेब म रखकर चल दिये। वे लोग खिड़की से बाहर ही निकले थे कि खतरे की घंटी बज उठी। शीशा गिरने की आहट से चौकीदार चौंक उठा था। इन्द्रपाल और सुखदेवराज कालिज के बाग से अंधेरे म काँटों और काँटेदार तारों को लांघते हुए किसी तरह पकड़े जाने से बच कर वापिस लौटे। सुखदेवराज का यह व्यवहार दल म उसके भावी व्यवहार की बहुत अच्छी भूमिका थी और इसके लिये हम लोगों को या सुखदेवराज के सम्पर्क मे आने वाले लोगों को खूब भुगतना पड़ा था।

संकट सिर पर लेकर चुराई हुई कोकीन की शीशी हंसराज को दी गयी तो उसने होंठ सिकोड़ कह दिया कि यह गलत शीशी है। हंसराज ने अपने मतलब की शीशी आलमारी म जिस जगह दिखायी थी वहां एक सी कई शीशियां श्वेत पदार्थ की पड़ी हुई थीं। इन पर पदार्थों के नाम के चिट नहीं, केवल नम्बर थे। अब क्या किया जा सकता था? हंसराज की खुशामद की गई कि तुम अपने रासायनिक पदार्थ का नाम बता दो या कोकीन की वह खास किस्म बता दो। लाहौर म न मिलेगी तो कलकत्ता, बम्बई से मगाने की कोशिश करेंगे। आखिर हंसराज ने आवश्यक दवाई का नाम बताया—'लिकोरिस पाउडर।"

बड़े उत्साह से मैंने धन्वन्तरी से कुछ लिकोरिस पाउडर ला देने के लिये अनुरोध किया और बताया कि इस वस्तु से मूर्छा गैस बन जायगी। धन्वन्तरी लाहौर के आयुर्वेदिक कालेज मे आयुर्वेदाचार्य की परीक्षा पास कर चुका था। उसे एलोपैथिक चिकित्सा की दवाइयों का भी कुछ ज्ञान था। वह बहुत हंसा—

"वाह भाई, वाह ! इससे मुर्छा गैंस वनेगी ! यह तो बहुत मामूली चीज है। कितना चाहिये ? कहो तो एक पसेरी इकट्ठा कर दें !" अस्तु, हंसराज को निकोरिस पाउडर भी पहुंचाया गया। इन्द्रपाल फिर लायलपुर गया। उसने लौट कर निश्चित वात कह दी कि हंसराज कुछ नही बनायेगा।

इन्द्रपाल हंसराज के व्यवहार से बहुत खीझ गया था। उस ने मुझ से कई वार कहा—"इस आदमी से जैसे हो काम निकालो। यदि हजार दो हजार मूल्य मागता है, तो वह भी दो। मेरे पास बीवी के जो कुछ जेवर है, वेच दूगा। कुछ तुम लोग जमा करो। यदि ऐसे नही मानता तो इसे मैं फुसला कर बुला लाऊं और किसी कमरे मे कैद कर पिस्तौल का पहरा बैठा दिया जाये। कह दिया जाये कि ठीक चीज जब तक न बना दोगे वाहर नही जा सकोगे। यहां ही समाप्त कर दिया जायेगा।"

इन्द्रपाल के प्रस्ताव मे मैं सहमत न हुआ। किसी आदमी से ऐसा व्यवहार कर उसे शत्रु बना कर दल को हानि पहुचा सकने के लिये छोड देना उचित न था। अब मुझे सन्देह हो गया कि हंसराज वास्तव मे कुछ कर सकता है या केवल हम लोगों से प्रतिष्ठा पाने और खुशामद कराने के लिये हमें वहलाता है।

इन्द्रपाल ने हंसराज से वहुत भक्ति और प्रेम से बातें कर उसका वास्तविक विचार जानना चाहा। हंसराज ने उसे दूसरा ही मंत्र पढाया—"यह लोग ऐसी छोटी-छोटी बातो के लिये मुझे खतरे मे डाल रहे है। मै दुनिया को हैरान कर देने वाली चीजें बना रहा हूं। अपनी जिन्दगी ऐसे कामो मे क्यो बरबाद करूं ? मैं अगर इनकी सहायता करूंगा तो किसी दिन बात अवश्य प्रकट हो जायगी।"

इन्द्रपाल को हंसराज की इस दगाबाजी पर तो क्रोध आया लेकिन हंसराज की चमत्कारिक वैज्ञानिक शक्ति पर और भी अधिक विश्वास हो गया। इन्द्रपाल ने अपने विश्वास और समझ के अनुसार इस दगाबाजी का हंसराज से बहुत गहरा बदला लेने की चेष्टा भी की।

इन्ही दिनो बगाल मे क्रान्तिकारियों द्वारा चटगाव के शस्त्रागार पर आक्रमण करके शस्त्र लूट लेने का समाचार आया। क्रान्ति के सशस्त्र प्रयत्नो मे यह घटना वाइसराय की ट्रेन के नीचे विस्फोट की भांति अपूर्व थी। लाहौर मे भी बहुत सनसनी थी। लाहौर मे माल रोड पर लार्ड लारेंस की एक बडी भारी मूर्ति थी। इस मूर्ति के एक हाथ मे तलवार और दूसरे हाथ मे कलम थमी थी। मूर्ति के नीचे लिखा था—"Will you be Governed by Pen or Sword ? (तुम कलम का राज चाहते हो या तलवार का ?) यह मूर्ति सन् १८५७ के गदर की स्मृति रूप थी और पंजाब के लिये बहुत कलंक की बात थी। स्कूल-कालिज में पढते समय भी इस मूर्ति के समीप गुजरते समय हम लोगो का खून खौल उठता था। १९१९ के रौलेट बिल विरोधी आन्दोलन मे जब अभी गांधी

जी की अहिंसात्मक नीति कांग्रेस पर अपनी समझौतावादी नीति की लगाम पूरी तरह नहीं कस पायी थी, जनता ने इस मूर्ति पर आक्रमण कर इसकी तलवार और कलम तोड़ दी थी। मूर्ति ही गिरा दी जाती परन्तु पुलिस ने पहुंच कर, गोली चला कर देश के कलंक के इस चिन्ह को बचा लिया था।

जनता के उग्र विरोध के कारण सरकार का कुछ 'हृदय परिवर्तन' हो गया था। पंजाब के अपमान के प्रतीक इस मूर्ति के नीचे लिखे शब्द सरकार ने बदल दिये थे—"I Served You with Sword and Pen" (मैंने कलम और तलवार से तुम्हारी सेवा की है) लाहौर में नौजवान-भारतसभा ने इस मूर्ति के विरुद्ध आन्दोलन आरम्भ किया था और अब जनता फिर इसे तोड़ने के लिये सत्याग्रह कर रही थी। इस आन्दोलन का नेतृत्व कांग्रेस के सम्मानित नेता नहीं नौजवान ही कर रहे थे। मालरोड पर 'शेरदिल' सिपाही (सशस्त्र राजनैतिक पुलिस) हर समय घूमते रहते थे। सत्याग्रह करने वाली टुकड़ियों को मालरोड पर आता देख कर मारपीट कर उन्हें तितर-बितर कर दिया जाता था। पुलिस की मार से जनता का सत्याग्रह आन्दोलन दबने लगा था।

इन दिनों सुखदेवराज लाहौर की गली 'चिड़िमारां' में अपना मकान छोड़ कर हमारे साथ इन्द्रपाल के मकान में आ गया था। उसकी गिरफ्तारी के वारन्ट न थे इसलिये उसे घर छोड़ने की जरूरत न होनी चाहिये थी लेकिन वह आ गया था। उसने अपनी इच्छा से जोखिम सिर ली थी तो उसे क्या कहा जाता। धन्वन्तरी के साथ आकर वह हमारी जगह देख गया था। असलियत यह थी कि उसका मन पढ़ाई में और अपने घर के क्लिष्ट, अनाकर्षक वातावरण में न लगता था। कुछ बिगड़ैल लड़के होते हैं जो स्कूल से भाग कर केवल माली की चिड़चिड़ाहट और परेशानी देखने के लिये ही बागों में अनुपयोगी कच्चे फल झाड़ कर फेंक देते हैं। वैसे ही प्रकृति सुखदेवराज की भी थी। जब देखो वह टोकता रहता—कुछ हो ही नहीं रहा। यह किया जा सकता है, वह किया जा सकता है।

उस समय मैं सुखदेवराज को उत्साह में उतावला साथी समझ रहा था। वह अच्छा पढ़ा लिखा भी था, एम० ए० का विद्यार्थी। उसे सन्तुष्ट करने के लिये मैंने 'शेरदिल' सिपाहियों से हथियार छीन कर दल को फायदा पहुंचाने के साथ-साथ सरकार की प्रतिष्ठा पर चोट करने की योजना बना ली। सुखदेव से इस योजना के लिये आवश्यक तैयारी में सहयोग देने के लिये कहा। पंजाब सरकार ने राजनैतिक आन्दोलन, विशेषकर क्रांतिकारी आन्दोलन के दमन के लिये पुलिस का एक विभाग 'शेरदिल' बनाया था। इस विभाग में अच्छे कद्दा-वर, अपढ़ और क्रूर आदमी भरती किये जाते थे। उन्हें राजभक्त बनाये रखने के लिये अच्छा खाना और वर्दी दी जाती थी। वे सदा रिवाल्वर बांधे

रहते थे। मेरा विचार था कि एक-एक 'शेरदिल' पर दो दो साथी आक्रमण करें। एक साथी अपनी साइकिल शेरदिल' की साइकिल से भिडाकर उसे गिरा दे। उसी समय दूसरा साथी गिरे हुये शेरदिल के माथे पर पिस्तौल रख गोली मार दे। शेरदिलो पर ऐसा आक्रमण एक ही समय लाहौर की भिन्न भिन्न एकान्त जगहो म एक साथ करने का विचार था। पुलिस के पाच आदमी मारने का प्रयोजन पुलिस को जनता के राजनैतिक दमन से रोकना भी था।

सुखदेवराज प्रतिदिन दो या तीन बार कहता—'तैयारी म समय बरबाद करने से क्या फायदा ? मुझे एक पिस्तौल दे दो। मै अकेला ही एक 'शेरदिल' को मार कर उस का पिस्तौल छीन लाता हू।"

मैं उसे समझाता—'तुम एक से छीन लाओगे तो पुलिस अफसर तुरन्त शेरदिलो को दो-दो या तीन तीन साथ रहने का हुक्म दे देंगे। हमारी असली योजना विफल हो जायगी। पूरी तैयारी हो लेने दो।' मैंने सुझाया, "तुम्हारे हाथ बहुत खुजाते है, तो पहले साइकिलें ही इकट्ठी करो।" मैं केन्द्र से कुछ और पिस्तौलो के आने की प्रतीक्षा कर रहा था। साइकिलें लाहौर म ही इकट्ठी की जा सकती थी। इन्द्रपाल के मकान म इस समय दल के काम के लिये तीन साइकिलें माग-ताग कर और पुर्जे, नम्बर बदल कर इकट्ठी कर ली गयी थी।

दोपहर का समय था। सुखदेवराज ने चुनौती दी—"आओ मेरे साथ गवर्नमेंट कालिज तक चलो।" मैं उसके साथ चल दिया। उस ने मुझे कालिज के सामने जिला कचहरी के कोने पर खडा रहने के लिये कहा। वह स्वय कालिज के भीतर पैदल गया और एक नयी साइकिल पर चढ कर चला आया। साइकिल उस ने मुझे दे दी और पैदल कालिज लौट गया। मुझे साइकिल सौंप कर उस ने मुझे फिर लौट कर कालिज के दूसरे दरवाजे—यूनिवर्सिटी की ओर जाने वाले दरवाजे पर आ जाने को कहा। मैं चोरी की साइकिल मकान पर छोड कर एक पुरानी साइकिल पर निश्चित जगह पर पहुचा।

मैं कालिज के दरवाजे के सामने से कुछ दूर आगे जाकर लौट रहा था कि सुखदेवराज दूसरी नयी साइकिल लिये आता दिखायी दिया। फाटक से कुछ दूर जाकर वह साइकिल उस ने मुझे थमा दी। मैं दोनो साइकिलें लिये लौट गया। मैं दूसरी बार लौटा तो इन्द्रपाल को अपनी साइकिल के पीछे बैठा लाया था। सुखदेव इन्द्रपाल को लेकर फिर कालिज के भीतर चला गया और कुछ देर बाद दोनो साइकिलो पर लौट आये। सुखदेवराज के ऐसे साहस को तो स्वीकार करना पडा लेकिन फिर भी उस की जल्दबाजी मुझे जरूर अखर रही थी। हा, भगवती भाई ने लाहौर आकर जब राज की यह बहादुरी मुख से सुनी तो उन्होने भी गद्गद् स्वर म कहा—"He is a jewel" (रत्न आदमी

है)। किस काम में वास्तव में खतरा है और कौन काम चुस्ती और चातुर्य के साहस से बन सकता है, इस विषय में राज की सूझ पैनी थी।

एक दिन प्रेम बहुत घबराया हुआ आया। उसकी आंखों में आंसू थे। उस ने बताया—'प्रकाशवती ने आप को देने के लिये एक लिफाफा दिया था। वह मुझ से कहीं गिर गया है। वह कहती है, लिफाफे में एक हजार रुपया का नोट था।"

मुझे सुन कर बहुत विस्मय और दुख हुआ। प्रेम को भय था कि दल उसे इस वेपरवाही के लिये कठोर दण्ड देगा। मैंने उसे आश्वासन दिया—"तुम उसे ढूंढने का यत्न करो। सज़ा बेइमानी की होती है। गलती के लिये तो दुख ही होता है। क्या किया जा सकता है परन्तु बेइमानी होगी तो छिप न सकेगी।"

इस घटना के दो-तीन दिन के भीतर ही प्रेम ने सन्देश दिया कि प्रकाशवती मुझ से मिलना चाहती है। मेरे अनुमति देने पर प्रेम उन्हें बुला लाया। यह मेरा प्रकाशवती जी को देखने का पहला अवसर था। बहुत दुबली-पतली और छोटे कद की लड़की थी। प्रकाशवती ने प्रेम के एक हजार रुपया खो देने की शिकायत कर खेद प्रकट किया—' इतना रुपया मुझे भाग्यवश घर में रखा हुआ मिल गया था। ऐसा अवसर तो रोज़ नहीं होगा।"

प्रकाशवती ने दूसरी बात कही—"केके (बहिन प्रेमवती) ने कहा था, यदि मुझे घर में रह कर काम करने में कठिनाई होगी तो मेरे घर छोड़ कर दल में आ मिलने का इन्तज़ाम कर दिया जायगा। अब मेरे लिये घर में रह कर काम करना कठिन हो गया है। घर के लोग मेरा विवाह कर देने पर उतारू हैं। सगाई कर ही दी है।"

प्रकाशवती से पहली बार बात करते समय मैंने प्रेम को समीप बुला लिया था। कारण वही मध्यवर्गी पारिवारिक संस्कार था कि लड़की से अकेले में बात न करनी चाहिये। उन के घर छोड़ सकने के बारे में मैंने सोच कर प्रेम द्वारा सन्देश भिजवाने का आश्वासन दिया। प्रकाशवती के मिलने आने और हजार रुपया खोये जाने की बात मैंने दुर्गा भाभी और धन्वन्तरी आदि को भी बता दी ताकि इस बात की जिम्मेवारी मुझ अकेले पर न रहे। फिर भी इस बात ने बाद में बड़ा विकृत रूप धारण किया। यहां यह बात विशेष महत्वपूर्ण न जान पड़ने पर भी उस का उल्लेख कर रहा हूं ताकि यथा-प्रसंग इस का महत्व समझ में आ सके।

× × ×

लगभग उन्हीं दिनों की बात है, मैं दोपहर के समय मकान के पिछले कमरे में बिलकुल अकेला बैठा कुछ पढ़ रहा था। इन्द्रपाल की प्रतीक्षा में सामने बरोठे

आऊं तो पुलिस घर के सामने बैठने लगेगी और तुम्हारे दरवाजे पर भी उनकी नजर पड़ेगी। मैं क्या समझती नहीं? लेकिन एक दिन मैं उसे ले आऊंगी। लड़के को देख तो जाये।'

इन्द्रपाल ने आगे बात बनाया व्यर्थ समझा और मुझ से पूछ कर जवाब देने का आश्वासन दे आया। मुझे विश्वास था कि बड़ी चतुरता का व्यवहार कर रहा हूं, धनदेवी मुझे पहचान ही नहीं सकीं। यह जान कर कि चतुरता उन्हीं ने अधिक दिखायी, झेंप अनुभव हुई। वह मुर्गा तो हमें मिल ही गया, साथ में उसे पकाने के लिये घी, मसाला वगैरा भी उन्होंने ही दिया।

हम लोग दिन में प्रायः रोज खिचड़ी ही पका लेते थे। संध्या समय बाहर जाकर किसी तन्दूर पर रोटी खा आते थे। मैंने इन्द्रपाल को अनुमति दे दी कि मां आकर मिल जाये लेकिन तुम स्वयं जाकर देखते रहना कि कोई सी० आई० डी० उन के पीछे-पीछे न आ रहा हो।

मां मिलने आयीं। एक बरस में वे बहुत दुबली हो गयी थीं। उन्होंने बताया कि धर्मपाल घर में बहुत कम आता है। बिजली का काम छोड़ कर लाहौर षड्यन्त्र के बन्दियों की डिफेंस कमेटी का काम करता है। कभी कोई अच्छी मजदूरी मिल जाती है तो दो-तीन दिन काम करके पांच-सात रुपये दे जाता है। लाहौर में अपने जिन सम्बन्धियों के साथ साझा मकान लेकर हम रहते थे, वे दरवाजे पर खुफिया पुलिस वालों के हरदम बैठे रहने के कारण घबरा कर मकान छोड़ गये थे। पूरे मकान का किराया मां कैसे देतीं! वे वहां से स्त्रियों की 'बुद्धसभा'* के मकान में चली गयी हैं। वहां भी जाने कितने दिन टिकना मिलेगा। वहीं मुफ्त रहने में बुरा भी लगता है। वे आंखों में आते आंसुओं को रोके मुस्कराने का यत्न करती रहीं।

मैंने भी कोई उदासी न दिखायी। हंस कर कहा—"मैं कोई बुरा काम तो कर नहीं रहा हूं। अपने देश से विदेशी गुलामी दूर करना तो कर्त्तव्य है। आप तो मुझे बचपन से ही सचाई और वीरता का उपदेश दिया करती थीं, वही काम मैं कर रहा हूं। आप जो चाहती थीं, वही हो रहा है। अपनी मां की तो सभी चिन्ता करते हैं, भारतमाता की भी तो चिन्ता किसी को करनी चाहिये। भगतसिंह, सुखदेव भी तो जेल में बैठे हैं।"

मां ने साहस प्रकट किया—"मुझे कोई चिन्ता नहीं है। कोई नौकरी ढूंढ रही हूं। सारी उम्र परिश्रम किया है, अब भी कर लूंगी। बस कलक की कोई

---

*कुरीतियों के निवारण के लिये आर्यसमाज की ही तरह बनायी गयी स्त्रियों की एक सभा। इस सभा का सम्मेलन प्रति बुद्धवार होने के कारण इसे बुद्ध सभा कहा जाता था। ऐसे ही एक मंगल सभा थी।

भी बात न करना। मैं समझूंगी, मेरी कोख सफल हो गयी।" इस के बाद फरारी की अवस्था में मां से मुलाकात नहीं हुयी। जब धर्मपाल भी गिरफ्तार हो गया तो उन्हें नौकरी मिलने में भी बहुत कठिनाई होने लगी।

बुर्के के हत्याकांड के बाद से धनदेवी जी प्रायः नित्य ही छाछ या मट्ठे का एक लोटा इन्द्रपाल को दे देती थीं। कभी पूछती, चाहो तो दूध ले जाओ। इन्द्रपाल की गिरफ्तारी के अवसर पर पुलिस ने धनदेवी जी से, इन्द्रपाल की मकान मालिक और पड़ोसी होने के कारण, इन्द्रपाल के घर आने-जाने वालों के बारे में पूछताछ करनी चाही। धनदेवी जी बहुत ऊंचे स्वर में बिगड़ उठीं— "मैं क्या पड़ोसियों के घरों में झांकती फिरती हूं?" पुलिस ने उनके घर की तलाशी पर्याप्त तोड़-फोड़ कर ली। धनदेवी जी ने किसी प्रकार की कातरता प्रकट न की।

× × ×

मूर्छा गैस पाने की आशा न रही थी। साथियों को छुड़ाने के लिये पांच-सात आदमियों को लेकर जेल पर धावा बोल देना मुझे कुछ जंच न रहा था। जेल के दरवाजे पर सशस्त्र गारद रहती। उन दिनों लाहौर सेन्ट्रल जेल में क्रान्तिकारियों का मुकदमा चालू होने के कारण जेल के फाटक के सामने छोलदारी गाड़ कर मेरठिन-पुलिस की एक गारद भी तैनात कर दी गयी थी। मैं स्वयं जेल के फाटक के सामने से कई बार गुज़र कर स्थिति देख आया था। मैं चाहता था पहले शेरदिलों से हथियार छीनने का काम किया जाये और फिर हथियारों की संख्या बढ़ा कर जेल पर अधिक साथियों को लेकर आक्रमण किया जाये। कार्यक्रम में परिवर्तन कर सकने के लिये मैं भगवती भाई का समर्थन चाहता था इसलिये उन्हें लाहौर बुला लिया था। कार्यक्रम में परिवर्तन उन्हें मंजूर न हुआ। उनके विचार में यह भगतसिंह के प्रति उपेक्षा का व्यवहार था।

वाइसराय की गाड़ी के नीचे विस्फोट स्थगित करने के सम्बन्ध में बहस की चर्चा करते समय एक बात याद न रही थी। आज़ाद ने विस्फोट स्थगित करने के पक्ष में एक तर्क भगतसिंह की राय के रूप में भी दिया था। विद्यार्थी जी कांग्रेसी दृष्टिकोण के कारण तुरन्त विस्फोट के विरुद्ध थे। भैया स्वयं विस्फोट स्थगित करना न चाहते थे। उन्होंने बच्चन को लाहौर भेज कर इस सम्बन्ध में भगतसिंह की भी राय ली थी। जेल में बन्द भगतसिंह से हम लोग गुप्त रूप से पत्र-व्यवहार भी करते रहते थे।

भगतसिंह ने राय दी थी—"इस घटना से कांग्रेसी नेताओं की नाराजगी का भय है तो उसे स्थगित कर पहले हम लोगों को ही छुड़ाने का यत्न किया जाये। इससे कांग्रेसी नेता भी नाराज न होंगे और दल की प्रतिष्ठा और शक्ति

भी बढ़ेगी।" उस समय भगवती भाई यह बात न माने थे परन्तु बाद में भगतसिंह को सन्देश भेजा गया था कि अब सब काम छोड़ कर तुम्हें छुड़ाने का ही यत्न किया जायगा। उसे यह भी बता दिया था कि यशपाल इसी प्रयोजन से लाहौर में व्यवस्था कर रहा है।

भगतसिंह इस आश्वासन से प्रतीक्षा कर रहा था और अपनी ओर से इस काम की एक योजना भी इस सम्बन्ध में हमें भेज चुका था। भगवती भाई उस वचन पर दृढ़ रहना चाहते थे। मैंने अपनी बात पर बहुत जिद्द की और कुछ कड़वी बातें भी कह गया, उदाहरणत—" तुम मोह में फंसे हो। भगतसिंह चल चुका कारतूस (स्पेंट कार्टरिज) है। यह लड़ाई का समय है मोह का नहीं। चल चुके कारतूस की गोली ढूंढने के लिये अपने दूसरे कारतूसों (अर्थात साथियों) को नष्ट करने से क्या लाभ? किसी एक आदमी के लिये दल की शक्ति न्योछावर करना मूर्खता है। बीसियों भगतसिंह दल में निकल आयेंगे। पहले शेरदिल काड करके अपनी शक्ति बढ़ानी चाहिये। उस के बाद यदि युक्ति-संगत जचे तो इस काम में हाथ डालना चाहिये।"

भगवती भाई को मेरी बात बहुत खल गयी। उदास होकर गम्भीरता से बोले—"तुम से ऐसी बात की आशा नहीं थी। मैं अब कुछ नहीं कहूंगा। आज़ाद को फैसला करने दो।"

मैं और भी चिढ़ गया—"आज़ाद क्या करेगा? जो तुम समझा दोगे, वह कह देगा। पूरी स्थिति भगतसिंह को ही लिख कर भेजी जाय। वह जो कहेगा मैं मान लूगा।"

भगतसिंह को बहन के हाथ गुप्त पत्र जेल में भेजा गया। तुरन्त उत्तर भी आ गया। भगतसिंह को क्या मालूम था कि बाहर झगड़ा हो रहा है। उस ने मजाक में मेरे प्रति संकेत कर उत्तर दिया—"उस उस कलाकार से कहो नित्य नयी कल्पना (अर्थात शेरदिल काड) न गढ़ा करे। जो पहले सोचा है, वह पहले होना चाहिये। उसे समझाओ कि परिस्थिति और नीति निश्चित करने में 'मोटा' (भगवतीचरण) ज्यादा योग्य है। एक्शन (सशस्त्र संघर्ष) में 'मोटे' को बचाकर 'पण्डित' (आज़ाद) को आगे रखो। कलाकार से कहो वह मेनी-फेस्टो (घोषणा-पत्र) लिखे।"

भगतसिंह के पास 'फिलासफी आफ दी बम' की प्रति पहुंच गयी थी। उसे पसन्द भी बहुत आयी थी। उस का अनुमान था कि वह मेरी लिखी चीज थी परन्तु वास्तव में वह घोषणा रुपये में बारह आने भगवती भाई की ही लिखी थी। भगतसिंह ने मेरे विषय में कहा—"जब तक उस की (अर्थात मेरी) भावुकता पूरी नहीं होगी, वह हर बात में आगे सिर निकालेगा। वह एक काम (अर्थात गाडी के नीचे विस्फोट) तो कर चुका है, कुछ दिन संतोष करे।

फिलहाल एक्शन (घटना) से अधिक उपयोग लगातार घोषणायें निकालने का है।" उत्तर आ जाने पर मैं दांत किटकिटा कर चुप रह गया।

हसराज की मूर्छा गैस से निराश होकर गैस बनाने का एक और प्रयत्न हम लोगो ने कर डाला। गैस की समस्या पर धन्वन्तरी से विचार करने पर उस ने सुझाया—"विज्ञान के नियम और प्रक्रिया किसी आदमी की बपौती नही है। हसराज न सही दूसरा भी कोई आदमी जो विषैली गैस का सिद्धान्त समझता है, यह काम कर सकेगा। आदमी ही तो गैस बनाते है। हसराज क्या खुदा है।"

भगवती भाई और मुझे दोनो को ही यह बात नही जची। धन्वन्तरी का एक मित्र 'केवल' उन्ही दिनो जर्मनी से रसायन म इजीनियरिंग (कैमिकल इजीनियरिंग) सीख कर आया था।

केवल साधारणत यूरोपियन पोशाक मे रहता था। हमारे अड्डे पर वह भेष बदल कर पठान की पोशाक मे आया था। केवल ने पुस्तको की सहायता और अनुमान से विषैली गैस उत्पन्न कर सकने वाले पदार्थों का अनुमान कर लिया। गैस बनाने का यत्न करने से पहले उसने चेतावनी दी, गैस बनेगी तो पहले हमी लोगो की नाक मे जायेगी। उसकी अवरोधक चीज पहले होनी चाहिये। हसराज की तरह केवल चमत्कारिक चीज नही, प्रथम युद्ध मे उपयोग की गयी गैस बनाने का यत्न कर रहा था। इसलिये उस का अवरोधक भी वैसा ही बनाना आवश्यक था अर्थात पहले गैस का प्रभाव रोकने वाला तोबडा, (गैसमास्क) लकडी का कोयला और कुछ दूसरी चीजें भर कर बना लिया गया।

गैस बनाने के लिये केवल के साथ मैं और भगवती भाई भी बैठे। जहा तक मुझे याद है, केवल ने 'पोटाशियम परमेगनीज' को गन्धक के तेजाब म मिलाने का प्रस्ताव किया। यदि मैं यह काम करता तो देवदत्त शर्मा से पायी शिक्षा के अनुसार पहले तोला भर तेजाब मे पोटाशियम के दो-चार कतरे डाल कर देख लेता। पिक्रिक एसिड बनाने के प्रयोग मे मैंने यही ढग अपनाया था। केवल ने दोनो चीजो को अच्छी खासी मात्रा म लिया। तेजाब म पोटाशियम पडते ही भयकर परिमाण मे जामनी रग का धुआ उठा जैसे रेलवे इन्जन ने खूब तेजी से धुआ छोड दिया हो। गैस से रक्षा के लिये बनाये हमारे तोबडे कुछ न कर सके। एक दम कमरे से बाहर भागना पडा। भगवती भाई झुझला उठे—"No more this nonsense (यह वाहियात बन्द करो।"

× × ×

एक दिन सुबह घर पर मैं और भगवती भाई ही थे। प्रेम दत्त, साढे दस बजे प्रकाशवती जी को साथ लिये आया और बोला—"भाभी जी (दुर्गा) ने इन्द्र

भी बढेगी।" उस समय भगवती भाई यह बात न मानते थे परन्तु बाद में भगतसिंह को सन्देश भेजा गया था कि अब सब काम छोड कर तुम्हें छुडाने का ही यत्न किया जायगा। उसे यह भी बता दिया था कि यशपाल इसी प्रयोजन से लाहौर में व्यवस्था कर रहा है।

भगतसिंह इस आश्वासन से प्रतीक्षा कर रहा था और अपनी ओर से इस काम की एक योजना भी इस सम्बन्ध में हमें भेज चुका था। भगवती भाई उस वचन पर दृढ रहना चाहते थे। मैंने अपनी बात पर बहुत जिद्द की और कुछ कडवी बातें भी कह गया, उदाहरणत—" तुम मोह में फंसे हो। भगतसिंह चल चुका कारतूस (स्पेंट कार्टरिज) है। यह लडाई का समय है मोह का नहीं। चल चुके कारतूस की गोली ढूढने के लिये अपने दूसरे कारतूसों (अर्थात साथियों) को नष्ट करने से क्या लाभ? किसी एक आदमी के लिये दल की शक्ति न्योछावर करना मूर्खता है। बीसियों भगतसिंह दल में निकल आयेंगे। पहले शेरदिल काड करके अपनी शक्ति बढानी चाहिये। उस के बाद यदि युक्ति-सगत जचे तो इस काम में हाथ डालना चाहिये।

भगवती भाई को मेरी बात बहुत खल गयी। उदास हाकर गम्भीरता से बोले—"तुम से ऐसी बात की आशा नहीं थी। मैं अब कुछ नहीं कहूगा। आजाद को फैसला करने दो।"

मैं और भी चिढ गया—"आजाद क्या करेगा? जो तुम समझा दोगे वह कह देगा। पूरी स्थिति भगतसिंह को ही लिख कर भेजी जाय। वह जो कहेगा मैं मान लूगा।"

भगतसिंह की बहन के हाथ गुप्त पत्र जेल में भेजा गया। तुरन्त उत्तर भी आ गया। भगतसिंह को क्या मालूम था कि बाहर झगडा हो रहा है। उस ने मजाक में मेरे प्रति सकेत कर उत्तर दिया—"उस उम कलाकार से कहो नित्य नयी कल्पना (अर्थात शेरदिल काड) न गडा करे। जो पहले सोचा है, वह पहले होना चाहिये। उसे समझाओ कि परिस्थिति और नीति निश्चित करने में 'मोटा' (भगवतीचरण) ज्यादा योग्य है। एक्शन (सशस्त्र सघर्ष) में 'मोटे' को बचाकर 'पण्डित' (आजाद) को आगे रखो। कलाकार से कहो वह मेनी-फेस्टो (घोषणा-पत्र) लिखे।"

भगतसिंह के पास 'फिलासफी आफ दी बम' की प्रति पहुच गयी थी। उसे पसन्द भी बहुत आयी थी। उस का अनुमान था कि वह मेरी लिखी चीज थी परन्तु वास्तव में वह घोषणा रुपये में बारह आने भगवती भाई की ही लिखी थी। भगतसिंह ने मेरे विषय में कहा—"जब तक उस की (अर्थात मेरी) भावुकता पूरी नहीं होगी, वह हर बात में आगे सिर निकालेगा। वह एक काम (अर्थात गाडी के नीचे विस्फोट) तो कर चुका है, कुछ दिन सतोष करे।

फ़िलहाल एक्शन (घटना) से अधिक उपयोग लगातार घोषणायें निकालने का है।" उत्तर आ जाने पर मैं दांत किटकिटा कर चुप रह गया।

हंसराज की मूर्छा गैस से निराश होकर गैस बनाने का एक और प्रयत्न हम लोगों ने कर डाला। गैस की समस्या पर धन्वन्तरी से विचार करने पर उस ने सुझाया—"विज्ञान के नियम और प्रक्रिया किसी आदमी की बपौती नहीं है। हंसराज न सही दूसरा भी कोई आदमी जो विषैली गैस का सिद्धान्त समझता है, यह काम कर सकेगा। आदमी ही तो गैस बनाते है। हंसराज क्या खुदा है।"

भगवती भाई और मुझे दोनों को ही यह बात सही जची। धन्वन्तरी का एक मित्र 'केवल' उन्हीं दिनों जर्मनी से रसायन मे इंजीनियरिंग (कैमिकल इंजीनियरिंग) सीख कर आया था।

केवल साधारणत यूरोपियन पोशाक मे रहता था। हमारे अड्डे पर वह भेष बदल कर पठान की पोशाक मे आया था। केवल ने पुस्तकों की सहायता और अनुमान से विषैली गैस उत्पन्न कर सकने वाले पदार्थों का अनुमान कर लिया। गैस बनाने का यत्न करने से पहले उसने चेतावनी दी, गैस बनेगी तो पहले हमी लोगों की सांस मे जायेगी। उसकी अवरोधक चीज पहले होनी चाहिये। हंसराज की तरह केवल चमत्कारिक चीज नहीं, प्रथम युद्ध मे उपयोग की गयी गैस बनाने का यत्न कर रहा था। इसलिये उस का अवरोधक भी वैसा ही बनाना आवश्यक था अर्थात पहले गैस का प्रभाव रोकने वाला तोबड़ा, (गैसमास्क) लकड़ी का कोयला और कुछ दूसरी चीजें भर कर बना लिया गया।

गैस बनाने के लिये केवल के साथ मैं और भगवती भाई भी बैठे। जहां तक मुझे याद है, केवल ने 'पोटाशियम परमगनीज' को गन्धक के तेजाब मे मिलाने का प्रस्ताव किया। यदि मैं यह काम करता तो देवदत्त शर्मा से पायी शिक्षा के अनुसार पहले तोला भर तेजाब मे पोटाशियम के दो चार कतरे डाल कर देख लेता। पिक्रिक एसिड बनाने के प्रयोग मे मैंने यही ढंग अपनाया था। केवल ने दोनों चीजों को अच्छी खासी मात्रा मे लिया। तेजाब मे पोटाशियम पड़ते ही भयंकर परिमाण मे जामनी रंग का धुआं उठा जैसे रेलवे इन्जन ने खूब तेजी से धुआं छोड़ दिया हो। गैस से रक्षा के लिये बनाये हमारे तोबड़े कुछ न कर सके। एक दम कमरे से बाहर भागना पड़ा। भगवती भाई झुंझला उठे—"No more this nonsense (यह वाहियाती बन्द करो!"

× × ×

एक दिन सुबह घर पर मैं और भगवती भाई ही थे। प्रेम दत्त, साढ़े दस बजे प्रकाशवती जी को साथ लिये आया और बोला—"भाभी जी (दुर्गा) ने इन्हें

भी बढ़ेगी।" उस समय भगवती भाई यह बात न मानते थे परन्तु बाद में भगतसिंह को सन्देश भेजा गया था कि अब सब काम छोड़ कर तुम्हें छुड़ाने का ही यत्न किया जायगा। उसे यह भी बता दिया था कि यशपाल इसी प्रयोजन से लाहौर में व्यवस्था कर रहा है।

भगतसिंह इस आश्वासन से प्रतीक्षा कर रहा था और अपनी ओर से इस काम की एक योजना भी इस सम्बन्ध में हमें भेज चुका था। भगवती भाई उस वचन पर दृढ़ रहना चाहते थे। मैंने अपनी बात पर बहुत जिद की और कुछ कड़वी बातें भी कह गया, उदाहरणतः—"तुम मोह में फंसे हो। भगतसिंह चल चुका कारतूस (स्पेंट कार्टरिज) है। यह लड़ाई का समय है मोह का नहीं। चल चुके कारतूस की गोली ढूंढने के लिये अपने दूसरे कारतूसों (अर्थात साथियों) को नष्ट करने से क्या लाभ ? किसी एक आदमी के लिये दल की शक्ति न्योछावर करना मूर्खता है। बीसियों भगतसिंह दल से निकल आयेंगे। पहले शेरदिल काड करके अपनी शक्ति बढ़ानी चाहिये। उस के बाद यदि युक्तिसंगत जंचे तो इस काम में हाथ डालना चाहिये।"

भगवती भाई को मेरी बात बहुत खल गयी। उदास होकर गम्भीरता से बोले—"तुम से ऐसी बात की आशा नहीं थी। मैं अब कुछ नहीं कहूंगा। आजाद को फैसला करने दो।"

मैं और भी चिढ़ गया—"आजाद क्या करेगा ? जो तुम समझा दोगे, वह कह देगा। पूरी स्थिति भगतसिंह को ही लिख कर भेजी जाय। वह जो कहेगा मैं मान लूंगा।"

भगतसिंह की बहन के हाथ गुप्त पत्र जेल में भेजा गया। तुरन्त उत्तर भी आ गया। भगतसिंह को क्या मालूम था कि बाहर झगड़ा हो रहा है। उस ने मजाक में मेरे प्रति संकेत कर उत्तर दिया—"उस उस कलाकार से कहो नित्य नयी कल्पना (अर्थात शेरदिल काड) न गढ़ा करे। जो पहले सोचा है, वह पहले होना चाहिये। उसे समझाओ कि परिस्थिति और नीति निश्चित करने में 'मोटा' (भगवतीचरण) ज्यादा योग्य है। एक्शन (सशस्त्र संघर्ष) में 'मोटे' को बचाकर 'पण्डित' (आजाद) को आगे रखो। कलाकार से कहो वह मेनीफेस्टो (घोषणा-पत्र) लिखे।"

भगतसिंह के पास 'फिलासफी आफ दी बम' की प्रति पहुंच गयी थी। उसे पसन्द भी बहुत आयी थी। उस का अनुमान था कि वह मेरी लिखी चीज थी परन्तु वास्तव में वह घोषणा रुपये में बारह आने भगवती भाई की ही लिखी थी। भगतसिंह ने मेरे विषय में कहा—"जब तक उस की (अर्थात मेरी) भावुकता पूरी नहीं होगी, वह हर बात में आगे सिर निकालेगा। वह एक काम (अर्थात गाड़ी के नीचे विस्फोट) तो कर चुका है, कुछ दिन संतोष करे।

फिलहाल एक्शन (घटना) से अधिक उपयोग लगातार घोषणायें निकालने का है।" उत्तर आ जाने पर मैं दांत किटकिटा कर चुप रह गया।

हसराज की मूर्छा गैस से निराश होकर गैस बनाने का एक और प्रयत्न हम लोगो ने कर डाला। गैस की समस्या पर धन्वन्तरी से विचार करने पर उस ने सुझाया—"विज्ञान के नियम और प्रक्रिया किसी आदमी की बपौती नही है। हसराज न सही दूसरा भी कोई आदमी जो विषैली गैस का सिद्धात समझता है यह काम कर सकेगा। आदमी ही तो गैस बनाते है। हसराज क्या खुदा है!"

भगवती भाई और मुझे दोनो को ही यह बात सही जची। धन्वन्तरी का एक मित्र 'केवल' उन्ही दिना जर्मनी से रसायन मे इजीनियरिंग (कैमिकल इजीनियरिंग) सीख कर आया था।

केवल साधारणत यूरोपियन पोशाक मे रहता था। हमारे अड्डे पर वह भेष बदल कर पठान की पोशाक मे आया था। केवल ने पुस्तको की सहायता और अनुमान से विषैली गैस उत्पन्न कर सकने वाले पदार्थों का अनुमान कर लिया। गैस बनाने का यत्न करने से पहले उसने चेतावनी दी, गैस बनेगी तो पहले हमी लोगो की सास मे जायेगी। उसकी अवरोधक चीज पहले होनी चाहिये। हसराज की तरह केवल चमत्कारिक चीज नहीं, प्रथम युद्ध मे उपयोग की गयी गैस बनाने का यत्न कर रहा था। इसलिये उस का अवरोधक भी वैसा ही बनाना आवश्यक था अर्थात पहले गैस का प्रभाव रोकने वाला तोबड़ा, (गैसमास्क) लकड़ी का कोयला और कुछ दूसरी चीजें भर कर बना लिया गया।

गैस बनाने के लिये केवल के साथ मैं और भगवती भाई भी बैठे। जहा तक मुझे याद है, केवल ने 'पोटाशियम परमेंगनीज' को गन्धक के तेजाब मे मिलाने का प्रस्ताव किया। यदि मैं यह काम करता तो देवदत्त शर्मा से पायी शिक्षा के अनुसार पहले तोला भर तेजाब मे पोटाशियम के दो-चार कतरे डाल कर देख लेता। पिक्रिक एसिड बनाने के प्रयोग मे मैंने यही ढग अपनाया था। केवल ने दोनो चीजों को अच्छी खासी मात्रा मे लिया। तेजाब मे पोटाशियम पड़ते ही भयकर परिमाण मे जामनी रग का धुआ उठा जैसे रेलवे इन्जन ने खूब तेजी से धुआ छोड दिया हो। गैस से रक्षा के लिये बनाये हमारे तोबड़े कुछ न कर सके। एक दम कमरे से बाहर भागना पड़ा। भगवती भाई झुझला उठे— *No more this nonsense* (यह वाहियाती बन्द करो!"

× × ×

एक दिन सुबह घर पर मैं और भगवती भाई ही थे। प्रेम दस, साढे दस बजे प्रकाशवती जो को साथ लिये आया और बोला—'भाभी जी (दुर्गा) ने इन्हे

हा भेजा है। घर से आ गयी हैं। भाभी जी कहती हैं, हमारे यहां तो सब से
हले सन्देह होगा। जब तक कोई दूसरा प्रबन्ध न हो, इन्हें अपने यहां ही रखो।"

उस मकान में तब तक कोई भी लड़की या स्त्री न थी। दुर्गा भाभी कभी-
भी आती थीं पर उनकी बात दूसरी थी। उनका आत्मविश्वास और व्यवहार
सा था कि उनकी चिन्ता करने का सवाल क्या, वे ही दूसरों की चिन्ता करती
ीं। प्रकाशवती को मैंने स्वयं लिखा था कि क्रान्तिकारी काम में सहयोग देने
लिये वे घर छोड़ देंगी तो उन के लिये दल की ओर से प्रबन्ध हो जायगा।
ह आशा न थी कि वे इतनी जल्दी आ जायगी और बिना एक दो दिन पहले
बर दिये। उनके सहसा सामने आ जाने पर कुछ परेशानी हुई। दल में
काशवती को मेरे और प्रेमनाथ के सिवा कोई साथी जानता भी न था।

भगवती भाई ने मुझे ही उनसे बात कर स्थिति समझने के लिये कहा।
प्रकाशवती को एक ओर ले जाकर मैंने पूछा—"बिना पहले कोई सूचना दिये
आप कैसे आ गयी? हमने तो कोई प्रबन्ध अभी नहीं किया है।"

प्रकाशवती ने उत्तर दिया कि उस सुबह उनके नाम लिखा मेरा पत्र उनके
भाई के हाथ पड़ गया था। उस पत्र में उनके घर छोड़ आने की बात थी।
स्थिति पिता को भी मालूम हुई। उन्होंने अपमान और क्रोध से बावले होकर
धमकाया—"जो जेवर तुम्हारे शरीर पर हैं, सब उतार दो, और अभी निकल
जाओ!"

पिता यह कह कर नीचे के कमरे में जा बैठे थे। प्रकाशवती ने सब जेवर
उतार कर वहीं डाल दिया और मकान की छत पर जाकर साथ के मकान में
चली गयी। लाहौर में प्रायः ही पड़ोसी मकानों की दीवारें साझी होती थीं
और छतों की मुंडेरें छोटी-छोटी। साथ के मकान से वे नीचे गली में उतर
गयी और दुर्गा भाभी के यहां पहुंच गयी।

"घर में रहने में अड़चन क्या है। मैंने पूछा।

"पिताजी विवाह कर देना चाहते हैं। मैं विवाह नहीं करूंगी। उन्होंने
आपका पत्र देख लिया है इसलिये भी वे बहुत नाराज़ हैं।"

"विवाह न करने के लिये ही आप को घर छोड़ना पड़ा है?"

उन्होंने सिर झुका कर स्वीकार किया।

चुपचाप सोच कर मैंने पूछा—"आप कितना पढ़ी-लिखी हैं?'

"मिडिल पास करने के बाद हिन्दीरत्न की परीक्षा पास की है। घर वालों
ने ज्यादा पढ़ाना स्वीकार नहीं किया।"

"कुछ भूगोल, इतिहास पढ़ा है?"

"हां।"

"कहां का भूगोल पढ़ा है?"

"सारी दुनिया का।"

इस भोले उत्तर से मुझे हसी आ गयी, वोला—'सारी दुनिया से क्या मतलब, अपने देश का ही ठीक से आ जाये तो बहुत है।"

मेरी हसी उन्ह बुरी लगी।

"और क्या पढा है ?" मैंने पूछा

"बेबे (प्रेमवती जी) ने जो पुस्तकें दी थी सब पडी हैं।"

मैं यह जाचने की चेष्टा कर रहा था कि वे दल के लिये कितनी उपयोगी हो सकेंगी। उत्साह और लगन के सम्बन्ध मे सन्देह न था परन्तु उत्साह के साथ ज्ञान भी तो चाहिये।

"देखिये," मैंने बेलाग और कुछ कडे स्वर मे कहा, "आप यदि अपनी इच्छा के विरुद्ध विवाह का विरोध कर रही है तो हम आप स सहानुभूति जरूर है परन्तु इस काम म हम आपकी सहायता नही कर सकते। हमारा काम केवल राजनैतिक सघर्ष है।"

"आप का क्या मतलब है ?" प्रकाशवती ने घबराहट से पूछा।

'मतलब है कि विवाह के विरोध म आप घर छोड कर आयी है तो हम आप के लिये कोई इनजाम नही कर सकेंगे। हमारा यह काम नही है।"

प्रकाशवती की गर्दन झुक गयी। निराशा से बोली—"अच्छा, मैं चली जाऊगी।"

"कहा जायेंगी ? घर लौट जाइये और पिता के अन्याय का विरोध कीजिये।" मैंने सलाह दी।

"नही, घर नही जाऊगी। एक बार आ गयी हू तो घर नही लौटूगी और चाहे कही चली जाऊ।"

"कहा जायेंगी ?'

"कही चली जाऊ, चाहे रावी (नदी) म।"

मेरा हृदय दहल गया। मैंने समझाना चाहा यह बुद्धिमानी नही है।

"बेबे (प्रेमवती जी) न तो कहा था कि जब तक स्वय इच्छा न हो, विवाह न करना। घर के लोग दल का काम न करने दें तो घर छोड देना। आप ने भी तो ऐसा ही लिखा था।" प्रकाशवती ने आखो मे आते आसू रोकने के लिये दात दबाकर याद दिलाया।

"आप तो कहती है घर विवाह के विरोध मे छोड रही है। दल के काम के लिय तो आपने घर नही छोडा ?"

'विवाह कर लू तो दल का काम कौन करने देगा ?"

"तो फिर कहिये कि दल के लिये ही घर छोडा है। ऐसी हालत मे आप हम लोगो के सिर-आखो पर है। मेरी बात का बुरा न मानिये। मैं असलियत

जान लेना चाहता था । मेरी बातें जरा कड़ी थीं इसके लिये क्षमा कीजिये ।"

जब तक मैं कड़ाई से बात कर रहा था प्रकाशवती भी गम्भीरता से जवाब दे रही थी । मैं झेंप कर क्षमा मांगने लगा तो वे आंचल में मुख छिपा कर आंसू पोंछने लगीं। सहसा ख्याल आया, इस वेश में दूसरे साथी इन्हें रोते देखेंगे तो क्या प्रभाव पड़ेगा इसलिये चुप कराने के लिये समझाने का यत्न किया परन्तु बात करते न बनती थी । अपनी आरम्भिक ढिठाई और कड़ाई के कारण एक झेंप-सी अनुभव होने लगी थी और वह कुछ दिन बाद मेरी 'कमजोरी' बन गयी।

प्रकाशजी को उसी दिन सन्ध्या मैंने एक पत्र उनके पिता के नाम लिख देने के लिये कहा । पत्र का अभिप्राय पिता को यह बता देना था कि उनकी लड़की किसी लज्जाजनक कारण से घर छोड़ कर नहीं गयी है । घर छोड़ने का प्रयोजन विवाह न कर देश का काम करना है । वे इस विषय में शिकायत और शोर न करें । उससे लाभ के बजाय हानि ही होगी ।

शेरदिलों पर आक्रमण और साथी बन्दियों को छुड़ाने की तैयारी के समय सुखदेवराज ने एक और बहादुरी कर दिखायी थी। लारेंस की मूर्ति का तोड़ने के सत्याग्रह के प्रसंग में माल रोड पर जलना और पुलिस में रोज कुछ धक्कम-धक्का होता ही रहता था । सुखदेवराज उस ओर से घूमता हुआ आया और बोला—"नील (लाहौर का सुपरिण्टेण्डेंट पुलिस) सत्याग्रहियों को रोकने के लिये डाकखाने के सामने खड़ा है । बड़ा अच्छा अवसर है । एक रिवाल्वर दे दो। अभी साइकिल पर जाकर उसे मार आता हूं । खूब भीड़ जमा है । मैं पीछे से जाऊंगा और उसे गोली मार कर साफ निकल आऊंगा ।

उस के ऐसे अनुरोधों को पूरा न कर सकने से मैं कुछ झेंप अनुभव करने लगा था। उस समय मकान पर मेरे और प्रकाशवती के अतिरिक्त दूसरा कोई न था । पूछा—यदि तुम्हारा पीछा किया गया ? कोई तुम्हें बचाने वाला भी तो चाहिये । इस समय यहां कोई भी आदमी नहीं । मुझे तो वहां कई आदमी पहचानने वाले मिल जायेंगे । मैं फरार हूं । मुझे देख कर, तुम्हारे नील को गोली मार सकने से पहले ही कोई पुकार बैठा तो बात बिगड़ जायगी ।"

"मुझे बचाने वाले रक्षक (कवर) की कोई जरूरत नहीं।" उस ने आग्रह किया। हार माननी पड़ी । उसे एक रिवाल्वर दे दिया परन्तु उस के मकान से निकलते ही मैंने झटपट एक पगड़ी सिर पर लपेटी और पगड़ी का पीठ पर लटकता छोर सामने दांत से ऐसे थाम लिया कि नाक और ठोढ़ी दिखायी न दे और जेब में पिस्तौल डाल कर खूब तेजी से साइकिल पर सुखदेव के बताये स्थान की ओर उस के पीछे गया । किसी साथी को अरक्षित अवस्था में खतरे का सामना करने के लिये अकेले भेज देना मुझे सह्य न हुआ । सुखदेव साइकिल को धीमे-धीमे चला रहा था इसलिये वह डाकखाने तक पहुंचने से पहले ही मुझे

दिखायी दे गया। वह भीड़ और पुलिस के मोर्चे की ओर न जाकर भीड़ के पीछे से ग्वालमण्डी की ओर चला गया।

अनुमान किया कि वह 'लोअर मालरोड' से घूम कर दूसरी तरफ से पुलिस के पीछे आयगा। मैं उस की प्रतीक्षा मे पुलिस के पिछवाड़े जाकर टहलता रहा। नील भीड को रोकने वाली पुलिस से काफी दूर पीछे खडा सिगरेट सुलगाये स्थिति देख रहा था। फुटपाथ के समीप उस की मोटर साइकिल खडी थी। उस के समीप ही दूसरा सशस्त्र सार्जेण्ट मोटर साइकिल सहित खडा था। मैं सोच रहा था, ऐसे समय सुखदेव करना क्या चाहता है? प्रतीक्षा म मालरोड पर कुछ दूर आगे जाकर पीछे लौटा। एक छोटी दुकान से एक बोतल लैमन पीकर समय काटा। मरे देखते देखते नील और गोरा सार्जेण्ट अपनी मोटर-साइकिलो पर बैठ कर पीछे की ओर लौट गये। मैं भी मकान पर लौट आया।

एक घण्टे बाद सुखदेव राज आया। मुझे रिवाल्वर लौटाते हुये बोला—'स्थिति ठीक नही थी। मैं बहुत देर तक उस के चारो ओर घूमता रहा। नील के चारो ओर आदमी खडे थे। गोली किसी दूसरे को लग जाती। इस समय इन्द्रपाल भी लौट आया था। उस के सामने वास्तविकता पर जिरह कर उसे झूठा प्रमाणित करना ठीक न लगा। इन्द्रपाल पहले ही उस से खिन्न हो चुका था।

× × ×

यही उचित समझा गया कि प्रकाशवती अभी कुछ दिन केवल अध्ययन करें। फरारी की अवस्था मे असदिग्ध ढंग से रहने और दल के साथियो के साथ नि सकोच व्यवहार का अभ्यास कर ले। दल मे उन का नाम कमला रख दिया गया। उन्होने आते ही दूसरे दिन से इन्द्रपाल के मकान को साफ रखना और अंग्रेजी पढना शुरु कर दिया। इस मकान म दिल्ली से बच्चन भी आ गया था। कभी-कभी सम्पूर्णसिंह भी आ टिकता था। भीड अधिक हो गयी थी। 'किला गुज्जरसिंह' मे भी दल ने एक छोटा-सा मकान लिया हुआ था। सुखदेवराज, विशेश्वर और लाहौर आने पर भगवती भाई भी वहा रहते थे। सुखदेवराज ने राय दी—"यहा बहुत भीड हो गयी है। कमला यहा लिख-पढ नही पायगी। उसे हमारे मकान किला गुज्जरसिंह मे भेज दो। वहा जगह है। मैं नियम से पढा भी दिया करूगा।"

दुर्गा भाभी ने राय दी—"अच्छा हो कमला इनके (भगवतीचरण) या तुम्हारे साथ ही रहे या इसे दिल्ली मे महाशय (कृष्ण) के यहा भेज दो।"

सुखदेवराज का प्रस्ताव अच्छा न लगने पर भी मैंने भाभी की बात का ही विरोध किया—"इन बातो मे क्या रखा है, वही (किला गुज्जरसिंह)

जाने दो।" इस मे अपनी इच्छा और रूढिगत सस्कार दोनो से लडने का प्रयत्न था।

जाने क्या सोच कर भाभी बोली—"हटाओ सब झगडा। तुम उस से शादी कर लो।"

उस समय मुझे यह बात अभद्र लगी क्योकि शायद यह मेरी उस अचेतन इच्छा की ओर सकेत था जिसे मैं स्वीकार करना नही चाहता था। मैंने उत्तर दिया, "बडी बत्तमीज हो तुम।"

भाभी मेरी इस धृष्टता को पी गयी और चुप रही।

नये सूत्रो से सम्बन्ध बनाये रखने के लिये मैं रावलपिण्डी और लायलपुर आता-जाता रहता था। भगवती भाई भी दिल्ली चले गये थे। शायद सप्ताह भर बाद मैं किला गुज्जरसिंह के मकान मे प्रकाशवती से मिला तो उन्होंने पूछा, "क्या उस मकान मे जगह नही है?"

"क्यो यहा कुछ तकलीफ है?" मैंने पूछा।

"नही।'

"तो फिर?"

"वहा ही बुला लीजिये।" सकोच से उन्होने कहा।

"वहा भीड है, तुम्हे तकलीफ होगी।"

"आप भी तो रहते हैं, वैसे ही मैं भी रह लूगी।"

"क्यो बात क्या है?"

"वहा आप के पास रहूगी तो जल्दी कुछ सीख जाऊगी।"

"पढती तो यहा भी हो। तुम्हे तकलीफ न हो इसलिये यहा रखा गया है।"

"आप को क्या मेरी वजह से तकलीफ होगी?"

"वाह, मुझे तो अच्छा ही लगेगा।"

"तो मुझे भी अच्छा ही लगेगा।" उत्तर मिला

मैंने कई बार पूछा और कहा—"तुम्हे तकलीफ देकर अपने पास रखना क्या उचित है?"

"तकलीफ नही होगी।"

शब्द तो शायद इतने ही थे परन्तु जब भाव प्रबल होते हैं अधिक शब्दो का जरूरत नही होती। मैंने चेतावनी दी—"इस तरह सोचने से क्या फायदा? इस मार्ग मे कितने दिन की जिन्दगी है!"

"वाह, जैसे आप के लिये वैसे मेरे लिये।" उत्तर मिला। उन्होंने यह भी शिकायत की कि हरी भाई (भगवतीचरण) भी यहा से चले गये है। वहा उन लोगो की छिछोरी बातें अच्छी नही लगती।

दो एक दिन बाद दुर्गा भाभी से मिलने पर मैंने बहुत झिझकते हुये कह

डाला—"भाभी तुम ने जो कहा था वही ठीक है।"

"कमला से शादी की बाबत समझो, हो गयी।"

"अच्छा बच्चू, तब कैसे बने थे! बहुत अच्छा हुआ।" उन्होंने मेरी पीठ थपथपा दी। भाभी को इतना कह देने से मुझे सन्तोष हो गया कि कोई बात छिपा कर अनुचित ढंग से नहीं कर रहा हूं।

मुझे आजाद भैया ने दिल्ली बुलाया था। मतलब था कि मैं जेल पर बिना गैस के आक्रमण की योजना उन्हें ठीक से समझा सकूं और आक्रमण के समय मेरे अधिक उपयोगी हो सकने के लिये मुझे पिस्तौल के इलावा राइफल का भी अभ्यास करा दिया जावे। भैया ने एक राइफल भी खरीद ली थी। मैं प्रकाशवती को दिल्ली साथ ले गया था। हम सब लोग तो जेल पर आक्रमण में जूझने वाले थे। विचार था, ऐसे समय उन का दिल्ली में रहना ही अधिक अच्छा होगा। उन का परिचय दल से सहानुभूति रखने वाले कुछ लोगों से करा देने का विचार था ताकि हम लोगों के बिना वे बिलकुल निस्सहाय न हो जायें। दिल्ली में उन्हें खयालीराम गुप्त, महाशय कृष्ण और ध्रुवदेव आदि से परिचित करा दिया। वैयक्तिक रूप से उन पर भरोसे की कमी का प्रश्न नहीं था लेकिन तब तक भी मैंने उन्हें जेल पर आक्रमण की योजना के सम्बन्ध में कुछ न बताया था।

दिल्ली आने पर राइफल के व्यवहार की शिक्षा के लिये भैया ने मुझे एक दिन के लिये मेरठ जिले में 'नलगडा' चलने के लिये कहा। कैलाशपति, लेखराम और शायद भवानीसिंह भी साथ थे। मुझे निशानाबाजी सीखने में विशेष उत्साह नहीं रहता था परन्तु भैया इस विषय में बहुत ध्यान देते थे। दृष्टिकोण के इस भेद का कारण यह था कि मैं तत्कालीन आतंकवादी कामों की आवश्यकता के विचार से ही सोचता था और वे हमारी व्यापक योजना के अनुसार 'गोरिल्ला युद्ध' के लिये लोगों को तैयार करना चाहते थे। अस्तु, शस्त्र शिक्षा के लिये नलगडा जाते समय दो छोटे सूटकेसों में हथियार रख लिये गये और एक बड़े से होल्डाल में पांचों आदमियों के कपड़े तथा रात को सोने के लिये कम्बल आदि का बिस्तर बांध लिया गया। चलते समय एक सूटकेस भैया ने अपने हाथ में लिया और शेष सामान मेरे हवाले कर दिया—"सोहन, ख्याल रखना।"

मैं निकर, कोट और हैट पहने था। भैया निकर, कोट और बाबू लोगों जैसी गोल (किश्टी) टोपी। लेखराम, कैलाशपति और भवानीसिंह धोती, पायजामा, कोट आदि। मेरी पोशाक और व्यवहार के कारण बस के ड्राइवर ने मुझे अपने साथ आगे की जगह दे दी। आजाद और सब लोग पीछे की सीट पर बैठ गये। बैठते समय मैंने कैलाशपति को बिस्तर का ख्याल रखने के लिये कह दिया। नलगडा जाने के लिये दिल्ली और मेरठ के बीच सड़क पर एक थाने के सामने उतरे। थाने के दरवाजे के दोनों खम्भों पर हम लोगों

की गिरफ्तारी के लिए इनाम के इश्तहार लगे हुए थे। एक ओर लाहौर षडयन्त्र केस के फरारों के इनाम का इश्तहार था जिसमें आज़ाद और मेरा नाम था, दूसरी ओर वाइसराय की गाड़ी के नीचे विस्फोट के सुराग के लिए इनाम का इश्तहार था।

मैं अपने हाथ की अटैची को लिए उतर गया था। बिस्तर वग में ही चला गया था। भैया ने मुझे डाटा— 'बिस्तर क्या नहीं उतारा गया ?'

मैंने सफाई दी—"मैं आगे था, कैलाशपति को कह दिया था। वह पीछे बैठा था।"

आजाद बिगडे—'जिम्मेवारी तुम्हारी थी। बिस्तर में नोगो में मागी हुई चीजें हैं। बिस्तर जब पकड़ा जायगा कपड़ो पर के निशान से जरूर तहकीकात होगी। वह सब लोग फसेंगे या नहीं ? लाहौर में पकडे गए कपड़ो से क्या हुआ था ?"

'अब बिगड़ने से क्या फायदा ? मैंने कहा, 'मेरे पीछे आओ !' मैं थाने के भीतर चल दिया। भैया मेरे पीछे-पीछे चले। थाने का स्टेशन इचार्ज और शायद हेडकास्टेबिल बरामदे में कुर्सी और स्टूल पर बैठे काम कर रहे थे। मैंने जाकर रोब से पूछा—'थाने का इचार्ज कौन है ?

थाने के लोग घबराहट में सलाम करते खड़े हो गए। मैंने कुर्सी खींच ली और बैठकर आधी अंग्रेजी और टूटी हिन्दुस्तानी में भैया को सम्बोधन किया— "मुशी, बिस्टर गुम का रिपोर्ट दो !" और स्वयं सिगरेट जलाते हुए इचार्ज को सम्बोधन किया, 'आप स्टेशन पर अबी फोन करो, बिस्टर पीछे बजेगा। हम कल शिकार में आयगा।' और फिर भैया को सम्बोधन किया, 'मुशी तुम समझाओ। तुम कल इदर पूछेगा।"

'हुजूर, भैया ने हुक्म स्वीकार किया और थानेदार और मुशी को बस में भूल से बिस्तर आगे चले जाने की बात समझाने लगे। मैंने फिर स्टेशन इचार्ज की ओर देखा, "बिस्टर अबी नईं आता है तो उसे डेलो स्टेशन पर बजेगा। समजा ! ऐड्रेस देता है।" एक कागज़ पर मैंने पता लिख दिया— आर०के० मुडालियर, इजीनियर, सन्ट्रल पी० डब्ल्यू० डी०, केयर आफ स्टेशन मास्टर, दिल्ली।"

थाने से लौटने पर भैया का क्रोध बुझ चुका था, मुस्कराकर बोले—'साले, बनता तो ऐसा है पर बिस्तर न मिला तो सिर तोड़ दूगा।"

मैंने आश्वासन दिया—"मिलेगा। न मिला तो उस पर क्रान्तिकारियों की मोहर नहीं लगी है। सन्देह की आशका न होने पर भी क्यो घबराया जाय।" दिल्ली लौटने पर बिस्तर मौजूद था।

× × ×

गैस के अभाव मे अदालत पर आक्रमण नही हो सकता था। हमने अपने साधनो के विचार मे केवल भगतसिंह और दत्त को ही छुडाना तय किया। जेल पर या जेल फाटक पर आक्रमण उस समय करना था जब भगतसिंह और दत्त सेन्ट्रल जेल मे अदालत से लौट रहे हो। इस काम के लिये बुलाये गये साथियो के लिये स्थान और फिर भगत और दत्त को यदि उन्हे सफलतापूर्वक छुडा कर लाया जा सकता तो उन्हे छिपा लेने के लिये इन्द्रपाल का छोटी जगह और किला गुज्जरसिंह का मकान काफी न थे। इस काम के लिये एक बगला ले लेने का निश्चय किया गया था। बगले का वाह्य रग-ढग ऐसा होना आवश्यक था कि किसी प्रकार के सन्देह के लिये गुजाइश न हो। बगले को सन्देह से परे रखने और बहुत सम्मानित गृहस्थ के निवास का रूप दे सकने के लिये इस बगले मे 'मेमसाहब लोग' का दिखायी देना भी आवश्यक था। वे मेमसाहब लोग कौन हो, इस विषय पर भी विचार हुआ।

इस समय दुर्गा भाभी बहुत उलझन की परिस्थिति मे थी। खुफिया पुलिस छाया की तरह उनका पीछा करती रहती। हम लोगो से मिलना-जुलना तक कठिन हो रहा था। दूसरी ओर लाहौर मे जयचन्द्र जी के दुष्प्रचार के कारण भी वे सकट म थी। दुर्गा भाभी को खुफिया पुलिस के आदमी की पत्नी समझने वाले लोग और उन से प्रभावित पडोसी भी इनके इधर-उधर जाने पर नजर रखना चाहते थे। कुछ लोगो ने खुफिया पुलिस के आदमी की बीवी को परेशान करना और चिढाना भी देशभक्ति का कर्त्तव्य समझ लिया था। भाभी हम लोगो से मिलने या हमारे सन्देश आवश्यक स्थानो पर पहुचाने के लिये प्राय घर से गायब रहती थी। समय-असमय, बल्कि अधिकाश मे रात के समय पडोसियो के लिये अपरिचित लोग भी उन के यहा आते थे। यह बात भाभी को खुफिया पुलिस वाले की बीवी विश्वास करने वाले लोगो की दृष्टि मे भाभी के उच्छृखल और आवारागर्द होने के लक्षण थे। इन लक्षणो का जबरदस्त प्रमाण यह था कि पति के घर मे लापता होने पर भी वे कभी दुखी और रोती-कल्पती नही दिखायी देती थी। ऐसी धारणाओ के कारण लोग उनकी सहायता करने के बजाय उन्हे परेशान करने म ही सतोष पाते थे। ऐसे व्यवहार की शिकायत भी किसमे की जाती? पास-पडोस के लोगो की दृष्टि मे वे देशभक्तो की शत्रु थी और पुलिस की दृष्टि मे सरकार की शत्रु थी।

इस विचित्र परिस्थिति के कारण दुर्गा भाभी बहुत परेशानी म थी। जो लोग भगवती भाई को खुफिया का आदमी नही समझते थे, उन्हे भी आने-जाने के स्थान, प्रयोजन या मिलने वालो के नाम और दूसरे रहस्य नही बताये जा सकते थे इसलिये ऐसे लोग भी उन्हे उच्छृखल समझ बैठते थे। उन्हे भाभी पर दूसरे ढग से क्रोध आता था अर्थात भगवती बेचारा तो देश के लिये घरबार

छोड कर मारा-मारा फिर रहा है। उस औरत का पति का जरा गम नहीं, मजे म नये नये मित्रा के साथ रगरलिया मना रही है। इन्द्रपाल १९२९ के सितम्बर मास म जब पहली बार दिल्ली आया था, भाभी से बहुत कम परिचित था। लाहौर म उस ने उन के सम्बन्ध म इतनी अफवाहे सुनी थी कि उसका माथा गरम हो रहा था। उसने भगवती भाई से नाम्र स्पष्टवादिता से काम लिया— 'एक क्रान्तिकारी की पत्नी को ऐसा व्यवहार नहीं करना चाहिए कि सभी लोग निन्दा करने लगें।'

भगवती भाई ने उसकी भावना जान कर उसे समझाने का यत्न किया— 'तुमने सुना ही है या कुछ देखा भी है? जब सुन कर ही विश्वास करना है तो मैं दूसरे लोगों की बातों की अपेक्षा अपनी पत्नी की बात पर ही विश्वास क्या न करूँ? उसे असाधारण ढंग से रहना पडता है और लोग उसे साधारण व्यवहार की कसौटी पर जाचते है।

दुर्गा भाभी ने उस समय भी अपनी कठिन परिस्थिति के बारे म भगवती भाई को सन्देश भेज कर फरार हो जाने की अनुमति मागी थी। भगवती भाई ने उन्हें मिलने के लिये दिल्ली बुलवाया था। अजमेरी दरवाजे पर महाशय कृष्ण जी के मकान पर मेरे सामने ही बातचीत हुई थी। उनका लडका शची भी, जो अब इंजीनियर साहब है, तब साढे चार बरस का रहा होगा मा के साथ आया था। उसने पिता को छः मास से अधिक दिन बाद देखा था। शची पहले तो उन्हें देखकर अपनी मोटी मोटी, काली सी आखें फैला कर हैरान रह गया। फूल-फूले गालों म होठ विस्मय से खुल गये— 'पापा!' लेकिन शायद उस अवस्था म भी वह समझने लगा था कि चुप रहना चाहिये। वह झपट कर चुपचाप पापा के गले से लिपट गया। पापा से जुदा होते समय भी उसने रोने-धोने का कोई उत्पात नहीं किया।

उस समय भगवती भाई ने भाभी को समझाया था— 'घर छोड़ कर फरार होने की जल्दी मत करो। हम दोनों के फरार हो जाने से सरकार घर-जायदाद और बैंक के हिसाब पर कब्जा कर लेगी। अवसर आने पर तुम्हें बुला लेंगे। यह लडाई काफी लम्बी है।

जब भाभी को मालूम हुआ कि दल के काम म, विशेष कर भगतसिंह को जेल से छुड़ाने के लिये स्त्री पात्र की आवश्यकता है तो उन्होंने अवसर दिया जाने का तकाजा किया। इस बार भगवती भाई इनकार न कर सके। तय हो गया कि मैं जल्दी बंगले का प्रबन्ध कर लूं तो भाभी और प्रकाशवती उस गृहस्थ की गृहस्थिनें बनकर उस म टिक जायें।

सब काम बहुत जल्दी म किया जा रहा था। मई के दोपहर की कडकती धूप और सन्नाटे म घूम-फिर कर मैंने जेल के कुछ समीप ही, बहावलपुर रोड

की एकान्त और अमदिग्ध जगह में एक बड़े बगले का आधा भाग किराये पर ले लिया। बगले के दूसरे भाग में एक मद्रासी इंजीनियर और पड़ोस में एक अवसर प्राप्त जज मिस्टर गोगना रहते थे।

बगला किराये पर ले लिया था परन्तु फर्नीचर या चारपाई आदि कुछ न था। बगले में पहुचने से पहले दुर्गा भाभी इन्द्रपाल के मकान पर आ गयी थीं। शची साथ न था। दुर्गा भाभी सकट का सामना करने आयी थीं और शची को सम्भवत धन्वन्तरी के बड़े भाई विद्यारत्न जी को सौंप आयी थीं। विद्यारत्न जी उस समय भी एक अच्छी नौकरी पर थे। दुर्गा भाभी के साथ एक सूटकेस ही था। मैं इन्हें टांगे में बैठा कर स्वय साइकिल पर सवार होकर बगले में पहुचाने गया। बगले की मेहतरानी और मालिन नये किरायेदारों के आने की प्रतीक्षा बहुत कौतूहल और उत्सुकता से कर रही थी। नवआगतुक ससाहिबा को देखकर मेहतरानी ने मालिन को पुकारा—"आ गये, नये ससाहब लोग आ गये!"

मालिन उत्सुकता से अपनी कोठरी से बाहर निकली परन्तु निराशा के स्वर में बोल उठी—"अरे, टांगे पर आयी हैं।"

मालिन की बात मेरे कान में पड़ी। मस्तिष्क में खटका। हमें अपने उपयोग के लिये मोटर और फर्नीचर की आवश्यकता न सही परन्तु सन्देह से परे, सम्भ्रात साहब लोग समझे जाने का आडम्बर निबाहने के लिये मोटर और फर्नीचर आवश्यक है।

जेल पर आक्रमण करने और भगतसिंह और दत्त को छुड़ा कर लाने के लिये एक मोटर की व्यवस्था तो की ही गयी थी। धन्वन्तरी को सन्देश भेजा कि उस मोटर को यथा-सम्भव अधिक से अधिक समय इस बगले में खड़ा रहने दिया जाये।

मैं माल रोड पर लाहौर के सब से बड़े फर्नीचर के व्यापारी 'हयात ब्रदर्स' के यहां पहुचा। एक बड़ा सोफासेट, तीन चार कुर्सियां, चाय पीने और खाना खाने की मेजे, दो लोहे के और दो निवारी पलग किराये पर ले कर दस्तखत कर दिये। अनुरोध कर दिया कि सामान हमारे बगले पर पहुचा दिया जाये। किराया तो महीना समाप्त होने पर दिया जाता था जो बेचारे को आज तक भी न पहुचा सका। दुकानदार के बढ़िया नये ट्रक में यह सब सामान बगले पर पहुच गया। उसी सन्ध्या दरवाजों पर चिकें भी लग गयीं। एक भिश्ती सुबह-शाम छिड़काव भी कर जाने लगा। बगले के स्थायी नौकरों और पडोसियों को हमारे सम्भ्रात होने का विश्वास हो गया।

भगवती भाई दिल्ली गये कि प्रकाशवती को ले आवें और आजाद तथा दूसरे दो और साथियों के आवश्यक शस्त्रों सहित लाहौर पहुचने की व्यवस्था

घर आवें। लौट कर भगवती भाई ने असंतोष प्रकट किया—"यह तुमने क्या अक्लमंदी की है कि इस लड़की को (उनका अभिप्राय प्रकाशवती से था) सम्भालने का बोझ दल के सिर सहेड़ लिया। उस की न तो उम्र अभी उम्र है, न अध्ययन और न व्यवहारिक अनुभव। एक अजीब फूहड़पन है उसमें। घूंघट निकाल कर चलते भी नहीं बनता। यह बम के काम की व्यवस्था के लिये बिलकुल उपयोगी नहीं हो सकती बल्कि खतरी लगेगी। मैं उसे साथ लिवा तो लाया हूं लेकिन सुरक्षा के लिये फिर दिल्ली लौटा देना ही ठीक होगा।"

घर में ताजा ताजा आने पर प्रकाशवती जी के आधुनिक व्यवहारिक ज्ञान का उदाहरण यह था कि उन्होंने कभी चाय की पत्ती न देखी थी, न चाय बनाना जानती थी और न उसका स्वाद। उनके घर में केवल दूध का ही रिवाज था। उन के घर में आने के ही दिन पिता को पत्र लिखने के लिये मैंने अपना 'वाटरमैन' फाउन्टनपेन दे दिया था। यह कलम पुराने ढंग का था। कलम की टोपी खोल कर पेंदी में लगा कर पेंच की तरह घुमाने से निब बाहर निकल आता था और बन्द करते समय नीचे से टोपी उल्टी घुमाकर खाने से निब भीतर चला जाता था।

प्रकाश जी ने पत्र लिखने के बाद पत्र को पढ़ते-पढ़ते कलम के नीचे से टोपी खोल ली थी। मुंह पर टोपी लगाने के लिये नजर ऊपर की तो निब गायब देखा। उन्होंने समझा, निब कहीं गिर गया है। वे निब को फर्श पर ढूंढने लगीं तो कलम टेढ़ा हो जाने से स्याही धोती पर फैल गयी।

प्रकाश जी को परेशान देख कर पूछा—"क्या हुआ ?"

"कुछ नहीं," कह कर उन्होंने टाल दिया और निब ढूंढती रहीं। जब निब नीचे फर्श पर कहीं न मिला तो उन्होंने कलम के भीतर झांका। कलम में धंसा हुआ निब चमक रहा था। एक सींक लेकर निब को ऊपर उठाने की चेष्टा करने लगीं। आखिर मैंने कलम उन के हाथ से लेकर नीचे का सिरा घुमाकर निब को ऊपर निकाल कर दिखाया, यह है तरीका। मारे लज्जा के उनका चेहरा सुर्ख हो गया।

प्रकाशवती के सम्बन्ध में भगवती भाई की वह धारणा उस समय मुझे अनुचित न लगी। प्रकाश जी जैसे रूढ़िग्रस्त परिवार और समाज के अंग से आयी थीं, वहां उस युग में आधुनिक वस्तुओं के व्यवहार के ज्ञान की आशा की ही नहीं जा सकती थी। यह दूसरी बात थी कि उन्होंने शीघ्र ही असाधारण ग्राह्यता का परिचय दिया। केवल दो मास बाद ही वे दिल्ली की नयी बम फैक्टरी में न केवल बम का मसाला बनाने के काम में सहयोग देने लगीं, फैक्टरी का भीतरी प्रबन्ध भी उन्हीं के हाथ में था और साथी उन्हें मजाक में 'कामरेड सुपरिटेन्डेंट' पुकारते थे।

उसी सन्ध्या या अगले दिन भगवती भाई ने किसी गुज्जरसिंह के मकान से आकर बात की—"भई, दुर्गा के साथ बंगले में दीदी भी रहेगी। वह नहीं मानती। क्यों जी, एक के बजाय दो स्त्रियों के रहने से बंगला अधिक भरा पूरा भी लगेगा। बाद में साथियों को इधर-उधर करते समय वे उन के लिए परदे का काम भी दे सकेंगी।

दीदी का तकाज़ा था कि घटना के बाद भगतसिंह को बचा कर ले जाने का काम भाभी एक बार पहले कर चुकी हैं। उन्हें भी तो कुछ करने का अवसर मिलना चाहिये।

भगवती भाई ने दीदी के बंगले में आकर सहयोग देने के बारे में जो उपयोगिता बतायी, वह तो ठीक थी परन्तु दीदी की लगन और सादगी का जो वर्णन उन्होंने किया, वह मुझे अवश्य कुछ अद्भुत लगा। दीदी लाहौर में कुछ दिन रह चुकी थीं इसलिये बंगले में आते समय रास्ते में पहिचाने जाने की आशंका से उन्होंने घूंघट निकाल लिया था। अभ्यास न होने के कारण घूंघट निकाल कर चलने में जो असुविधा उन्हें हुई उसका वर्णन करते हुए भगवती भाई ने गद्-गद् स्वर में कहा—'She is so simple (कितनी भोली है) घूंघट निकाल कर उनसे चलते ही नहीं बनता।"

प्रकट में तो मैं भगवती भाई के विचार से सुशीला जी की सादगी और भोलेपन के अनुमोदन में मुस्कराया परन्तु उसमें विद्रूप था, एक ही व्यवहार को दो भिन्न-भिन्न मानसिक अवस्थाओं में, दो भिन्न व्यक्तियों द्वारा देख कर परस्पर-विरोधी परिणामों पर पहुंचना। प्रकाशवती से सुशीला जी की उम्र लगभग नौ-दस वर्ष अधिक रही होगी। उन की शिक्षा और जीवन का अनुभव भी कहीं अधिक व्यापक था। उनका घूंघट न सम्भाल सकना भगवती भाई को विश्वास और आदर उत्पन्न करने वाली सरलता और भोलापन जान पड़ा और अनुभवहीन प्रकाशवती का घूंघट ठीक से न निकाल सकना, केवल फूहड़पन। अस्तु, सुशीला जी भी बंगले में आ गयीं।

उस दिन या अगले दिन मैं फिर दिल्ली गया। इस बार प्रयोजन था भगवती भाई के निर्णय के अनुसार प्रकाशवती को दिल्ली लौटा कर शस्त्रों और साथियों सहित आजाद के लाहौर पहुंचने का समय और ढंग निश्चित करना। इस बार प्रकाशवती को दिल्ली में महाशय कृष्णजी के मकान पर पहुंचा कर लौटने से पहिले मैंने बता देना आवश्यक समझा—"तुम मुझ से आखिरी बार मिल रही हो। हम लोग जेल पर आक्रमण करने जा रहे हैं। मेरा विश्वास है, हम में से कोई भी बच कर न लौटेगा। शायद भगवती भाई को पीछे छोड़ दिया जाये। उस अवस्था में वे जैसा कहें, करना। शायद वे भी न बचें। हम लोगों के मारे जाने का समाचार तुम्हें दो या तीन जून को अखबारों से मिल जायगा। उस

हालत में तुम रयालीराम गुप्ता से दिल्ली दल के नेता कैलाशपति का पता ले लेना।"

प्रकाशवती मेरी बात सुन कर गुम रह गयी। कुछ बात न सूझी।

मैंने पूछा—'घबरा गयी?"

वह बात तो न सही परन्तु सिर हिलाकर इनकार किया।

मैंने समझाना चाहा—"इस मार्ग में तो यही होना है। सम्भव है, महीने-दो महीने में तुम्हारे मर जाने का भी दिन आ जाय। घबड़ी मत जाना।" मैंने एक बहुत छोटा पिस्तौल उन्हें आपदा का सामना करने के लिये दे दिया। यह बात दोपहर के समय हुई थी। सोचा, हम लोगों की उदासी या चुप्पी देखकर कृष्णजी या उन की पत्नी को कुछ सन्देह न हो इसलिये हम दोनों किसी बहाने से बाहर चल गये।

मैं निश्चित मृत्यु के लिये तैयार था परन्तु नये 'प्रेम' को छोड़कर लौटना अच्छा न लग रहा था। उसी भावना में मैंने विदा होते समय पूछ लिया—'क्या तुम मेरी याद रखोगी?' प्रकाश जी ने गर्दन झुका कर हामी से उत्तर दिया, 'मैं भी जल्दी ही आ मिलूंगी।"

कुछ कह न सका। उत्तर से मुझे सन्तोष तो हुआ परन्तु कुछ दूर जाकर पश्चाताप होने लगा कि स्वयं मरने जाने से पहले दूसरे के लिये दुख का कारण बन जाने से क्या लाभ! इस से मैं क्या पा लूंगा! मेरी यह भावना बहुत कुछ वैसी ही थी जैसे किसी युग में लोग मरते समय इस आश्वासन से सन्तोष पाते थे कि उन की मृत्यु के बाद उन की पत्नी भी उन की चिता पर सती हो जायेगी, या मिस्र के राजाओं की कब्र में उन की अनेक जीवित पत्नियों को भी दफ्ना दिया जाना उन के गौरव का चिन्ह माना जाता था। यह पत्नी को सम्पत्ति के रूप में प्यार करने की भावना का नियात्मक रूप है।

बंगले में दुर्गा भाभी, सुशीला जी, बच्चन, मैं और आक्रमण में भाग लेने के लिये भैया द्वारा भेजे हुए एक साथी मास्टर छैलबिहारी थे। भगवती भाई और सुखदेवराज किला गुज्जरसिंह के मकान में थे। छैलबिहारी हमारे बैरे के रूप में काम कर रहा था, अर्थात् बंगले के बावर्चीखाने से खाना उठाकर ले आना या बरामदे में घूमकर जब तब मेज कुर्सियों को झाड़-पोंछ देना। यह तो तय हो चुका था कि जेल पर बम, राइफल और पिस्तौलों से आक्रमण किया जायगा लेकिन अब भी दो महत्वपूर्ण बातें निश्चय न हो पायी थीं।

मेरी बनायी योजना के अनुसार आक्रमण भगतसिंह के बोर्स्टल जेल के लिये सेन्ट्रल जेल के फाटक से निकलते समय किया जाना चाहिये था। सेन्ट्रल जेल का फाटक मुख्य सड़क पर, सड़क से केवल अठारह बीस गज एक ओर था। दूसरी योजना भगतसिंह की थी। इस के अनुसार उन के बोर्स्टल जेल से

लौटने के लिये निश्चित समय आक्रमण होना चाहिये था। बोस्टल जेल का फाटक मुख्य सड़क से लगभग सौ कदम पर। यानी मोटर ही सौ योजना काम में लायी जाय यह बात आजाद पर छोड़ दी गया था।

दूसरा प्रश्न था आजाद द्वारा साथ लाये हुए तीन आदमियों के अतिरिक्त लाहौर में और चार व्यक्ति आक्रमण में भाग लेंगे। मुख्य प्रश्न भगवती भाई के बारे में ही था। वे उस काम में भाग लेने के लिये जिद कर रहे थे। मेरा आग्रह था कि जब आजाद और मैं दोनों भाग ले रहे हैं तो उन्हें पीछे रहना चाहिये।

सुखदेवराज के बारे में भी प्रश्न था। भगवती भाई उन्हें सब साहसी और चतुर समझ कर आक्रमण में रखना चाहते थे। मुझे इस विषय में शंका थी। मेरा आग्रह था कि इस काम में केवल उन्हीं लोगों को भेजा जाय जो किसी भी हालत में पीठ न दिखायें। मैंने उन्हें गुरुदेव के लाल को मारने के लिये जाकर यों ही लौटकर झूठ बात देने की बात कही थी। इन्द्रपाल का अनुभव भी बताया कि यदि चालाकी से भय से बच सकने की आशा हो तो सुखदेवराज खूब साहस दिखायेगा और जब खतरे से बचने का रास्ता न होगा तो पीठ दिखा देगा। उस का साहस चोर का है सैनिक का नहीं। यह शिकायत भी की कि वह दल के दूसरे लोगों से ऐसी बातें करता है जिन का परिणाम दल में फूट और खास कर मेरे प्रति अविश्वास पैदा करना होगा।

भगवती भाई को मेरी बात से बहुत दुख हुआ। कुछ सोच कर बोले—आपस में ऐसा सन्देह अनुचित है। और फिर उन्होंने बताया तुम्हें मालूम है तुम्हारे बारे में उस का क्या ख्याल है? उन्होंने सुखदेवराज की शिकायत बतायी कि उस समय नील को मार सकने का बहुत अच्छा मौका था लेकिन उस के सुझाव देने पर मैं उस की सहायता के लिये नहीं गया बल्कि प्रकाशवती के साथ पीछे बैठा रहा। मैंने केवल अपने शौक के लिये ही प्रकाश जी का घर छुड़वा दिया है। उस ने यह भी शिकायत की कि प्रकाशवती को जिला गुज्जर सिंह के मकान में रहने के लिये भेज दिया गया था और मैं बिना किसी से पूछे उसे दिल्ली ले गया।

मुझे क्रोध आ गया। मैंने कहा— उस की यह शिकायतें चुपचाप सुनकर तुम ने उस अनुशासन की अवहेलना के लिये उत्साहित किया है। यहां इलाज मैं हूं। उसे यदि मेरे व्यवहार के लिये शिकायत थी तो पहले मुझसे कहना चाहिये था। क्या तुम ने उस से पूछा है कि मेरा इन बातों के लिये क्या उत्तर है? यह बात लगभग २७ मई को हुई थी।

भगवती बोले— इस नाजुक समय में मुकद्दमबाजी का अवसर नहीं है। मैंने उसे कुछ उत्तर नहीं दिया है केवल सुन भर लिया है। एक सप्ताह की ही

तो बात है। इसके बाद सब कुछ देख लिया जायेगा।"

मैंने उन्हें सुखदेव के भीतवों न मारने जाकर यों ही लौट आने और आकर झूठ बोलने का प्रमाण देना चाहा—'प्रकाशवती का मैंने यह तो नहीं बताया कि सुखदेव कहां गया था परन्तु उस के जाते ही मैं उसे यह कह कर गया था, मेरे आने में बहुत देर हो जाये तो भी घबराना नहीं। इन्द्रपाल लौट आये तो उसे सध्या तक कहीं न जाने के लिये कह देना। मैं यहां हूं। तुम अभी दिल्ली किसी को भेज कर सच्ची बात जान सकते हो। सुखदेवराज, इन्द्रपाल और दूसरे लोगों से मेरे विषय में क्या कहता फिरता है इस की चिन्ता मैंने केवल इसलिये नहीं की कि मुझे तुम पर और भैया आज़ाद पर भरोसा था। प्रकाशवती के घर से आने के विषय में तुम भाभी और प्रेम से पूछ सकते हो कि उसके घर छोड़ने से पहले मैंने उस से केवल एक आध घण्टे बात की थी और वह भी प्रेम के सामने। उस के आने के दिन जो बात हुई थी मैंने तुम्हें तभी बता दी थी और जो कुछ किया तुम्हारी राय में किया था। उस के आ जाने के बाद दूसरी बात है। भाभी से कह चुका हूं कि मैं उस से विवाह कर लूंगा बल्कि भाभी ने स्वयं ही यह सुझाव दिया था। मैंने पंजाब के इन्चार्ज की हैसियत से उसे दिल्ली पहुंचा दिया था। इस का खास कारण सुखदेव के व्यवहार के लिये प्रकाश की शिकायत थी।

"खैर, यह तो हुआ लेकिन हम लोगों के जीवन की अस्थिरता और ज़िम्मेवारी में ऐसे झगड़ा के लिये जगह नहीं है ? तुम प्रेम की बात सोचोगे या दल के काम की ?" भगवती भाई ने अंग्रेज़ी में प्रश्न किया।

"सोचने की बात ही क्या है ? यह तो बिना सोचे, दमन करने पर भी हो गया। बाकी रही निर्बलता आने की बात। उस के लिये तुम्हें इन्द्रपाल का लखनऊ में दिया उत्तर याद होगा। उस से साफ बात मैं और क्या कह सकता हूं। १८ या २० रुपया माहवार के लिये सेना में भरती होने वाला सिपाही घर में स्त्री, बाल-बच्चे होते हुये भी तोपों के सामने सीना तानने का कर्तव्य पूरा करते नहीं झिझकते तो क्या सब कमज़ोरी हमीं लोगों के लिये है ? हम में तो कर्तव्य की भावना उन से बहुत अधिक होनी चाहिये।"

भगवती भाई ने मेरा हाथ पकड़ मुस्कराकर कहा—'लेकिन यह बात तुम ने मुझ से क्यों नहीं कही ?"

मैंने उस समय ज़िद की कि यह बात अभी आज़ाद भैया के सामने साफ हो जानी चाहिये। मैं तो आक्रमण में मर जाऊंगा और यह कलंक मेरे सिर रह जायगा।

भगवती बहुत गम्भीर होकर बोले—"मेरा विश्वास करो, सुखदेव ऐसा आदमी नहीं है। आज़ाद से इस बारे में कुछ मत कहना, खबरदार ! राज कुछ

न कर सकने से खिन्न है, ऊटपटाग हरकतें उस से हो रही है। दिल का बुरा नही है। एक घटना मे भाग लेकर वह स्थिर हो जायेगा।"

आज़ाद, भगवती भाई और मुझे बैठाकर बहुत देर तक विचार करते रहे कि जेल पर आक्रमण भगतसिंह की योजना से किया जाय या मेरी योजना से किया जाये। मेरी योजना सेन्ट्रल जेल के फाटक पर उस समय आक्रमण करने की थी जब भगतसिंह और दत्त को कचहरी मे या रविवार के दिन बोर्स्टल जेल मे बन्द साथियो से मुकद्दमे के सम्बन्ध मे कानूनी सलाह के लिए ले जाया जा रहा हो। भगतसिंह की योजना थी कि आक्रमण उनके बोर्स्टल जेल से निकलते समय, जब वे फाटक से निकाल कर लारी मे बैठाये जा रहे हो, किया जाये। भैया ने मेरी योजना की भूल सुझाई, सेन्ट्रल जेल के फाटक पर जेल की गारद अधिक है और 'शेरदिल पुलिस' की एक छोलदारी भी है। बार्स्टल जेल के दरवाज़े पर केवल छ सशस्त्र सिपाही रहते है।

मुझे बोर्स्टल जेल के विषय मे यह आपत्ति थी कि जेल का फाटक सडक से लगभग सौ गज़ दूर है। हमारी मोटर जेल के फाटक की ओर घूमते ही पहरे के सिपाही सतर्क हो जायगे। भगतसिंह और दत्त को जिस समय जेल बस मे ले जाया या लाया जायेगा पुलिस के छ सशस्त्र सिपाही साथ होगे। भगत और दत्त को घेरे हुये सिपाहियो पर हम दूर से गोली चलानी पडेगी। गोली भगत और दत्त को भी लग सकती है। बोर्स्टल जेल पर पिस्तौल या बम की आहट होते ही सेन्ट्रल जेल के फाटक पर तैनात शेरदिल पुलिस की गारद हमारी ओर दौड पडेगी।

सेन्ट्रल जेल के फाटक पर आक्रमण करते समय, भगत और दत्त के जेल फाटक से निकलते ही एक बम जेल गारद पर और दूसरा बम शेरदिलो की छोलदारी पर फेंक दिया जायेगा। भगतसिंह और दत्त हमारी कार की ओर दौड जायेंगे, बमो के एक साथ चलने से भगदड मच जायगी। यदि कोई सिपाही भगत, दत्त का पीछा करेगा तो हमारे पाच आदमी उन्हे पिस्तौलो से रोक सकेंगे। शायद हमे सफलता हो जाये। सेन्ट्रल जेल बिल्कुल सडक पर है, यहा से दिन भर मे सैकडो मोटरें और सवारिया गुजरती है। हमे फाटक की ओर घूमना न पडेगा। हमारे समीप आने से भी जेल वाले सतर्क न होगे।

भगवती भाई का विचार था कि मैं सेन्ट्रल और बोर्स्टल जेलो की स्थिति को दूर से देख कर योजना बना रहा हू। भगतसिंह उस अवस्था मे से प्रतिदिन गुज़रता है इसलिये उसका विचार अधिक भरोसे के योग्य है। भगतसिंह की योजनानुसार चलना ही तय हुआ। फिर भगवती भाई के घटना मे भाग लेने का प्रश्न आया। उन्होने द्रवित स्वर मे कहा—"मैं कोई तर्क नही दे सकता लेकिन चाहता हू कि इस घटना मे अवश्य भाग लू। यदि मैं मर भी गया तो

मैं दोपहर बाद तीन बजे, मई की कडी धूप में जगह जगह घूम फिर कर लौटा था। अपने लिये रखी ठंडी हो गयी खिचडी खा रहा था। उस समय बंगले में भाभी, सुशीला जी, छैलबिहारी और मदनगोपाल ही थे। भैया धन्वन्तरी के साथ मोटर को स्वयं देख लेने के लिये गये हुये थे। भगवती भाई, बच्चन और सुखदेव एक बम लेकर उसका परीक्षण करने रावी के किनारे चले गये थे।

"बम भरा किसने? वह भीतर से सूख भी गया था?" मैंने शंका से पूछा। पता लगा कि बम को धूप में रख कर सूख गया समझ लिया गया था। भगवती और सुखदेवराज ने मिलकर बम भर लिया था और ट्रिगर भी ठीक कर लिया था।

हम लोग बात कर ही रहे थे एक टांगा बंगले में आया। उस में सुखदेवराज दिखायी दिया।

"मुझे टांगे से उतार लो।" राज ने पीडा विकृत स्वर में पुकारा।

छैलबिहारी, मदनगोपाल और मैंने उसे सवारी से उतार लिया। उस के पांव में लिपटे कपडे में से खून फूट रहा था। हम लोगों ने आशंका से चोट का कारण पूछा। पीडा से होंठ दबा कर उसने बताया—"बम का आजमाइश के लिये फेंकते समय बम हरी (भगवती) के हाथ में फट गया। वे बहुत जख्मी होकर गिर पडे हैं। मेरे पांव में सख्त चोट आयी है। बच्चन पीछे था। उसे चोट नहीं आयी। वह उन के पास है।"

मैंने मास्टर छैलबिहारी को साथ लिया और तुरन्त माल रोड पर चारिंग-क्रास की ओर दौड चले। हम लोग सडक पर सचमुच दौड लगा रहे थे। वहां से एक टैक्सी किराये पर ले कर रावी किनारे के जंगल के जितना समीप पहुंच सकते थे गये और फिर रेतीले मैदान को पार कर घने जंगल में घुसे। भटक-भटक कर बच्चन को पुकारा। उसके उत्तर की पुकार के सहारे स्थान ढूंढ लिया। देखा—

भगवती भाई घुटने उठाये चित्त पडे थे। उनकी दोनों बांहें कोहनियों में उठी हुई थीं। एक हाथ कलाई से उड गया था दूसरे की पूरी उंगलियां कट गयी थीं। चेहरे पर कई जगह गहरे घावों से खून बह रहा था। पेट में दाईं ओर बडे-बडे छेद होकर खून बह रहा था और बायीं ओर से पेट फट कर कुछ आंतें बाहर आ गयी थीं। बच्चन नदी से तर में एक कपडा भिगा लाया था और उनके मुंह में पानी की बूंदें निचोड रहा था।

हम दोनों को पहुंचे से ही बोले—"तुम आ गये, अच्छा हुआ। आजाद भी आ जाते तो देख लेता।" मैंने कहा।

"भैया इस समय घर पर न थे वर्ना जरूर आते।"

"कोई बात नहीं।" भगवती भाई ने हमें चिंता न करने के लिये कहा।

हम सभी लोग स्काउटिंग की शिक्षा पाये हुए थे। आमने सामने से अपनी बाहों को जोड़कर उन्हें उठाकर जंगल से बाहर गाड़ी तक ले जाने का यत्न किया। शरीर हिलते ही उनके मुख से चीख निकल गयी। उन्हें फिर लिटा दिया। सोचा एक खाट या स्ट्रेचर के बिना उनका शरीर नहीं उठाया जा सकेगा।

रुंधे हुये गले को वश में कर मैंने आश्वासन दिया— हम अभी जाकर खाट लाते हैं। घबराना नहीं।

तुम समझते हो मैं डर रहा हूं? यही दुख है कि मैं भगतसिंह को छुड़ाने में सहयोग न दे सकूंगा। यह मृत्यु दो दिन बाद होती!

उन्हें उठाकर ले जा सकने के लिये आवश्यक सामान लेकर मेरे लौटने की बात के उत्तर में उन्होंने कहा— व्यर्थ है ऐसा न करो। बम का धड़ाका बहुत जोर का हुआ था। यदि उस की आहट से सन्देह में पुलिस खोज करती आ जाय तो क्या फायदा? यदि हाथ रह जाते तो तुम एक रिवाल्वर दे जाते और पुलिस को मेरे यहां जख्मी होने की खबर न दी जाती। भगतसिंह को छुड़ाने का यत्न नहीं रुकना चाहिए।

भगवती रुक रुक कर अंग्रेजी में बात कर रहे थे। दिमाग उनका इतना साफ था कि उन्होंने अपने बच सकने की निराशा के सम्बन्ध में यह अनुमान बताया कि पेशाब की हालत होने पर भी पेशाब नहीं आ रहा है। बम का कोई टुकड़ा गुर्दे में चला गया है। मृत्यु को या गोली की मार को भी भय को अस्वीकार करने वाले इस क्रांतिकारियों को ही गांधी जी ने वाइसराय इरविन के प्रति सहानुभूति के अपने प्रस्ताव में कायर और जघन्य काम करने वाले बताया था।

छैलबिहारी को उनके पास छोड़कर मैं बच्चन के साथ लौटा। आवश्यक चीजें समेटने के लिये हम नेशनल कालेज के बोर्डिंग में पहुंचे। देवराज सेठी और सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन (अब अज्ञेय के नाम से प्रसिद्ध) से उन्हीं दिनों परिचय हुआ था। दोनों ही हृष्ट पुष्ट बलिष्ठ शरीर थे। भगवती भाई को सुविधा से उठा सकने के लिये वे सहायक हो सकते थे। उनके यहां से ही दो चादरें और खाट भी ले ली। रास्ते में बरफ ले ली कि घावों पर लगा सकेंगे और घुमाते रहेंगे। इन्द्रपाल को भी साथ ले लिया और तुरन्त फिर उसी स्थान की ओर लौटे।

अंधेरा घना हो चुका था। हम लोग टार्च जलाकर घने जंगल में उन्हें खोज रहे थे। छैलबिहारी का नाम लेकर पुकारना शुरू किया। कोई उत्तर न मिला। हमारी टार्चों के प्रकाश में और चिल्लाहट से पेड़ों पर बसेरा करते पक्षी डर डर कर उड़ रहे थे परन्तु हमारी पुकार का कोई उत्तर न था।

टहनियो से लटकती सफेद कपडे की धज्जिया दिखायी दी । इन धज्जियो की दिशा म बढते गये ।

टार्चों के प्रकाश म भगवती भाई का निष्प्राण शरीर हम लोगो के सामने पडा था । छैलबिहारी उनकी मृत्यु हो जान के बाद, शायद भयभीत होकर उन्हे अकेला छोडकर चला गया था ।

हृदय उमड कर मुँह को आ गया । होट काट कर अपन आप को वश किया । बच्चन विह्वल होकर फूट-फूट कर रो रहा था । अब क्या हो सकता था ? शव को उठाकर ले जाने से उसे फिर बगले से बाहर निकालने की समस्या पेश आती । दूसरे सब साथी खतरे म पड जाते । साथ लाई हुई एक चादर से हमने भगवती भाई का शरीर ढक दिया ।

रुँधे हुये गले से मैंने आदेश दिया—"We must honour our Brave Leader and give him last Salute (अपने बहादुर नेता के सम्मान म अन्तिम सलामी दी जानी चाहिये)।" मेरे 'सैल्यूट' ! कहने पर सब लोग शव के चारो ओर एक मिनिट तक सलामी म माथे पर हाथ छुआये खडे रहे ।

हम चारो लौट आये । लौटते समय मेरे घुटने और पूरा शरीर जर्जर हो रहा था । कदम न उठता था । मैं एक बार सुबह से रात एक बजे तक चौंसठ मील चलता रहा था परन्तु वैसी थकावट तब भी न हुई थी ।

बच्चन और मैं बगले पर लौटे । सब लोग बीच के बडे कमरे मे इकट्ठे होकर प्रतीक्षा कर रहे थे । जैसे सकट के समय मनुष्य और जीव सिमिट जाते हैं । हम लोगो को देख कर सब लोगो ने धडकते हृदय से लम्बा सास लिया । उनकी आशका और जिज्ञासा से फैली हुई आँखें पूछ रही थी, क्या हुआ ?

कुछ कहने का सामर्थ्य न था । दोनो हाथ हिलाकर सकेत किया, "सर्वनाश !"

बच्चन फिर रो पडा ।

भाभी जैसे ही बैठी थी वैसे ही आँखें मूँदकर रह गयी । सुशीला जी ने सिर झुका कर दोनो हाथो से थाम लिया । भैया निश्चल फर्श की ओर देखते रह गये । मदनगोपाल भी पत्थर की मूर्ति की तरह मुन्न खडा था । उसी समय छैलबिहारी पहुचा । वह पैदल आया था इसलिये पीछे रह गया था । छैल-बिहारी पर आख पडते ही मुझे क्रोध आ गया । धीमे स्वर म परन्तु क्रोध से फटकारा—"तुम उन्हे छोड कर कैसे आ गये ?"

उसने विवशता प्रकट की—"मृत्यु हो जाने के बाद मैं आ गया ।"

"तुम्हे वहाँ रहने के लिये कहा था । हम लोग स्थान खाजने के लिये आवाजें लगाते रहे !"

"रास्ता दिखाने के लिये टहनियो से धज्जिया लटका दी थी ।"

"छोड आने के लिये तुम्हे किसने कहा था ?" क्रोध से थिरकते होठों से

हम सभी लोग स्काउटिंग की शिक्षा पाये हुये थे। आमने-सामने से अपनी बाहों को जोडकर उन्हे उठाकर जगल से बाहर गाडी तक ले जाने का यत्न किया। शरीर हिलते ही उनके मुख म चीख निकल गयी। उन्ह फिर लिटा दिया। सोचा, एक खाट या स्ट्रेचर के बिना उनका शरीर नही उठाया जा सकेगा।

रुधे हुये गले को वश म कर मैंने आश्वासन दिया—"हम अभी जाकर खाट लाते है। घबराना नही।"

"तुम समझते हो मैं डर रहा हू ? यही दुख है कि मैं भगतसिंह को छुडाने म सहयोग न दे सकूगा। यह मृत्यु दो दिन बाद होगी।'

उन्ह उठाकर ले जा सकने के लिये आवश्यक सामान लेकर मेरे लौटने की बात के उत्तर म उन्होने कहा—"व्यर्थ है, ऐसा न करो। बम का धडाका बहुत जोर का हुआ था। यदि उस की आहट के सन्देह मे पुलिस खोज करती आ जाय तो क्या फायदा ? यदि हाथ रह जाते तो तुम एक रिवाल्वर दे जाते और पुलिस को मरे यहाँ जख्मी होने की खबर द दी जाती। भगतसिंह का छुडाने का यत्न नही रुकना चाहिए।"

भगवती रुक रुक कर अग्रेजी म बात कर रहे थे। दिमाग उनका इतना साफ था कि उन्होने अपने बच सकने की निराशा के सम्बन्ध मे यह अनुमान बताया कि पशाब की हालत होन पर भी पशाब नही आ रहा है। बम का कोई टुकडा गुर्दे म चला गया है। मृत्यु का यो साक्षात्कार करके भी भय को अस्वीकार करने वाले ऐसे क्रातिकारियो को ही गाधी जी ने वाइसराय इरविन के प्रति सहानुभूति के अपने प्रस्ताव म 'कायर' और 'जघन्य' काम करने वाले बताया था।

छैलबिहारी को उनके पास छोडकर मैं बच्चन के साथ लौटा। आवश्यक चीजें समेटने के लिये हम क्रिश्चियन कालेज के बोर्डिंग म पहुच। देवराज सेठी और सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन (अब अज्ञेय के नाम से प्रसिद्ध) से उन्ही दिनो परिचय हुआ था। दोनो ही हृष्ट-पुष्ट बलिष्ठ शरीर थे। भगवती भाई को सुविधा से उठा सकने के लिये वे सहायक हो सकते थे। उनके यहाँ से ही दो चादरें और खाट भी ले ली। रास्ते म बरफ ले ली कि घावो पर लगा सकेंगे और चुसाते रहेंगे। इन्द्रपाल को भी साथ ले लिया और तुरन्त फिर उसी स्थान की ओर लौटे।

अन्धेरा घना हो चुका था। हम लोग टार्चे जलाकर घने जगल म उन्ह खोज रहे थे। छैलबिहारी का नाम लेकर पुकारना शुरू किया। कोई उत्तर न मिला। हमारी टार्चों के प्रकाश म और चिल्लाहट स पेडो पर बसेरा करते पक्षी डर-डर कर उड रहे थे परन्तु हमारी पुकार का कोई उत्तर न था।

टहनियों से लटकती सफेद कपडे की धज्जियां दिखायी दी । इन धज्जियों की दिशा में बढते गये ।

टार्चों के प्रकाश म भगवती भाई का निष्प्राण शरीर हम लोगो के सामन पडा था। छैलबिहारी उनकी मृत्यु हो जाने के बाद, शायद भयभीत होकर उन्ह अकेला छोडकर चला गया था ।

हृदय उमड कर मुँह को आ गया । होंट काट कर अपने आप को वश किया । बच्चन विह्वल होकर फूट-फूट कर रो रहा था। अब क्या हो सकता था ? शव को उठाकर ले जाने मे उस फिर बगने म बाहर निकालने की समस्या पेश आती । दूसरे सब साथी खतरे म पड जाते । साथ लाई हुई एक चादर से हमन भगवती भाई का शरीर ढक दिया ।

रुधे हुये गले से मैंन आदेश दिया—"We must honour our Brave Leader and give him last Salute (अपने बहादुर नेता के सम्मान म अन्तिम सलामी दी जानी चाहिये)।" मेरे 'सैल्यूट' ! कहने पर सब लोग शव के चारो ओर एक मिनिट तक सलामी म माथे पर हाथ छुआये खडे रहे ।

हम चारो लौट आये । लौटते समय मेरे घुटने और पूरा शरीर जर्जर हो रहा था। कदम न उठता था। मैं एक बार सुबह से रात एक बजे तक चौसठ मील चलता रहा था परन्तु वैसी थकावट तब भी न हुई थी ।

बच्चन और मैं बगले पर लौटे । सब लोग बीच के बडे कमरे म इकट्ठे होकर प्रतीक्षा कर रहे थे। जैसे संकट के समय मनुष्य और जीव सिमिट जाते है । हम लोगो को देख कर सब लोगो न धडकते हृदय से लम्बा सास लिया । उनकी आशका और जिज्ञासा से फैली हुई आँखें पूछ रही थी, क्या हुआ ?

कुछ कहने का सामर्थ्य न था। दोनो हाथ हिलाकर सकेत किया, "सर्वनाश!"

बच्चन फिर रो पडा ।

भाभी जैसे ही बैठी थी वैसे ही आँखे मूँदकर रह गयी । सुशीला जी ने सिर झुका कर दोनो हाथो से थाम लिया । भैया निश्चल फर्श की ओर देखते रह गये। मदनगोपाल भी पत्थर की मूर्ति की तरह सुन्न खडा था। उसी समय छैलबिहारी पहुचा । वह पैदल आया था इसलिये पीछे रह गया था। छैल-बिहारी पर आंख पडते ही मुझे क्रोध आ गया । धीमे स्वर मे परन्तु क्रोध से फटकारा—'तुम उन्ह छोड कर कैसे आ गय ?"

उसने विवशता प्रकट की—"मृत्यु हो जाने के बाद मैं आ गया ।"

"तुम्ह वहाँ रहने के लिये कहा था। हम लोग स्थान खोजन के लिय आवाजे लगात रह !"

"रास्ता दिखाने के लिये टहनियों से धज्जियां लटका दी थी ।"

"छोड आने के लिये तुम्ह किसने कहा था ?" क्रोध स थिरकते होंठो से

हम सभी लोग स्काउटिंग की शिक्षा पाये हुये थे। आमने-सामने से अपनी बाहों को जोड़कर उन्हें उठाकर जंगल से बाहर गाड़ी तक ले जाने का यत्न किया। शरीर हिलते ही उनके मुख से चीख निकल गयी। उन्हें फिर लिटा दिया। सोचा, एक खाट या स्ट्रेचर के बिना उनका शरीर नहीं उठाया जा सकेगा।

रुंधे हुये गले को वश में कर मैंने आश्वासन दिया—"हम अभी जाकर खाट लाते हैं। घबराना नहीं।"

"तुम समझते हो मैं डर रहा हूं ? यही दुख है कि मैं भगतसिंह को छुड़ाने में सहयोग न दे सकूंगा। यह मृत्यु दो दिन बाद होगी।"

उन्हें उठाकर ले जा सकने के लिये आवश्यक सामान लेकर मेरे लौटने की बात के उत्तर में उन्होंने कहा— व्यर्थ है, ऐसा न करो। बम का धड़ाका बहुत जोर का हुआ था। यदि उस की आहट के सन्देह से पुलिस खोज करती आ जाये तो क्या फायदा ? यदि हाथ रह जाते तो तुम एक रिवाल्वर दे जाते और पुलिस को मेरे यहां जख्मी होने की खबर दे दी जाती। भगतसिंह को छुड़ाने का यत्न नहीं रुकना चाहिए।"

भगवती रुक-रुक कर अंग्रेज़ी में बात कर रहे थे। दिमाग उनका इतना साफ था कि उन्होंने अपने बच सकने की निराशा के सम्बन्ध में यह अनुमान बताया कि पेशाब की हाजत होने पर भी पेशाब नहीं आ रहा है। बम का कोई टुकड़ा गुर्दे में चला गया है। मृत्यु का यों साक्षात्कार करके भी भय को अस्वीकार करने वाले ऐसे क्रांतिकारियों को ही गांधी जी ने वाइसराय इरविन के प्रति सहानुभूति के अपने प्रस्ताव में 'कायर' और 'जघन्य' काम करने वाले बताया था।

छैलविहारी को उनके पास छोड़कर मैं बच्चन के साथ लौटा। आवश्यक चीजें समेटने के लिये हम क्रिश्चियन कालेज के बोर्डिंग में पहुंचे। देवराज सेठी और सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन (अब अज्ञेय के नाम से प्रसिद्ध) से उन्हीं दिनों परिचय हुआ था। दोनों ही हृष्ट-पुष्ट बलिष्ठ शरीर थे। भगवती भाई को सुविधा से उठा सकने के लिये वे सहायक हो सकते थे। उनके यहाँ से ही दो चादरें और खाट भी ले ली। रास्ते में बरफ ले ली कि घावों पर लगा सकेंगे और चुमाते रहेंगे। इन्द्रपाल को भी साथ ले लिया और तुरन्त फिर उसी स्थान की ओर लौटे।

अन्धेरा घना हो चुका था। हम लोग टार्चें जलाकर घने जंगल में उन्हें खोज रहे थे। छैलविहारी का नाम लेकर पुकारना शुरू किया। कोई उत्तर न मिला। हमारी टार्चों के प्रकाश में और चिल्लाहट से पेड़ों पर बसेरा करते पक्षी डर डर कर उड़ रहे थे परन्तु हमारी पुकार का कोई उत्तर न था।

श्रीमती दुर्गादेवी— भाभी

हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातत्र सेना के दो नेता

हि०स०प्र०स० की मोहर

भगवतीचरण

और निश्चल रहती। अलबत्ता जब बच्चन उन्हें सान्त्वना देने के लिये उनके समीप जाकर फूट-फूट कर रोने लगता तो वे उसे सहारा देने के लिये उस के सिर पर हाथ रख देतीं। बच्चन को भैया आजाद और भगवती भाई दोनों के प्रति ही अगाध अनुरक्ति थी। रोते-रोते उसने कहा—'भैया आजाद ने क्रांति की भावना की चिन्गारी मेरे हृदय में जगायी थी, भगवती भाई उसे अमर ज्वाला बना गये।"

हम लोगों ने बच्चन से घटना का ब्यौरा पूछा। मालूम हुआ, मैं जब बम के खोलों के भीतर रोगन लगाकर उन्हें सुखाने के लिये रख गया था तो सुखदेवराज ने जल्दी मचायी कि इन्हें धूप में रख कर सुखा लिया जाये। वैसा ही किया गया। धूप में रखने से खोलों का रोगन दो तीन घन्टे में (उन के विचार से) सूख गया। उस के बाद उस ने बम भरने का आग्रह किया। भगवती भाई ने बम भर दिया।

मैंने याद दिलाया—"मैंने पहले ही कहा था कि एक बम का ट्रिगर ढीला है।" बच्चन ने बताया, "हम लोगों को उस समय ढीला नहीं मालूम हुआ।"

बम भर लिये जाने पर वे तीनों एक बम की आजमाइश के लिये साइकिलों पर रावी की ओर चले गये। साइकिलें घाट पर छोड़कर उन लोगों ने सनातन धर्म कालिज के घाट बकर के मल्लाह से एक नाव ली और नाव पर चढ़कर सूने जंगल की ओर चले गये। जंगल में पहुंच कर एक स्थान चुनकर भगवती भाई बम को फेंकने के लिये तैयार हुए। बच्चन और राज के पीछे हट जाने पर बम का घोड़ा चढ़ाने से पहले भगवती भाई ने कहा—"इस बम का ट्रिगर तो ढीला है, उसे रहने दिया जाये।"

सुखदेवराज उन की ओर बढ़ गया और बोला—'तुम्हें डर लगता हो तो लाओ मुझे दो!"

'ऐसी क्या बात है?" भगवती भाई ने हंस कर कहा, "जो मेरे लिये है वही तुम्हारे लिये भी। तुम पीछे हट जाओ।" उन्होंने हाथ फैलाकर बम फेंका। बम उन के हाथ से छूटते-छूटते फट गया।

भगवती भाई बम के टुकड़ों की चोट और विस्फोट के धक्के से गिर पड़े। यदि बम का ट्रिगर ठीक होता तो फेंक दिये जाने के बाद बम को जमीन पर गिरने की चोट से ही फटना चाहिये था।

भगवती भाई के इस प्रकार असह्य पीड़ा में शहीद होने से मुझे ऐसा अनुभव हो रहा था जैसे इस के लिये अपराधी मैं ही हूं। जब मैंने देख लिया था कि ट्रिगर ढीला है तो मुझे उसी समय ठीक कर देना चाहिये था और बम को आजमाने के लिये ले गये ही क्यों? लेकिन यह मेरे और लौट आने से पहले ही हो चुका था।

तुम अलग ले जाकर बात कर लो और साइकिल पर ले जाकर स्थान दिखा कर समझा आओ।"

भैया की यह बात भाभी के कान में पड़ी। उन्होंने आग्रह किया—"आक्रमण में 'उनकी' (भगवती भाई) जगह जाने का अवसर मुझे दीजिये। सब से पहले यह मेरा अधिकार है।"

भैया ने मेरी ओर देखा। हम दोनों ने समझाया—"इस समय आप रहने दीजिये ! !"

"क्यों ?" भाभी ने जिद्द की।

भैया ने आंसू पोंछ कर कहा—"ऐसा कोई भी कदम सोच-विचार कर उठाना ठीक होगा। लड़के का भी प्रश्न है।"

"लड़का अब आप लोगों का है, आप के जिम्मे है।"

"भाभी, अभी मान जाओ !" भैया ने समझाया।

भाभी से हमारी बात सुनकर सुशीला जी ने भी आक्रमण में भाग लेने के लिये आग्रह किया परन्तु उन्हें भी इन्कार कर दिया गया।

मुझे छैलबिहारी जचा। उसे एक ओर ले जाकर बात की—"हम भगतसिंह और दत्त को जेल से छुड़ाने के लिये आज जेल के फाटक पर आक्रमण करेंगे। यह निश्चय समझ लो कि वहां मारे जाने की ही अधिक सम्भावना है। गोली चलने पर भागने का कोई सवाल न होगा। ऐसी व्यवस्था में मैं या भैया भागने वाले को स्वयं ही गोली मार देंगे। यदि साहस नहीं है तो पहिले ही इन्कार कर सकते हो।"

छैलबिहारी ने उत्तर देने से पहले विचार करने के लिये समय चाहा। प्रायः आध घन्टे बाद आकर उस ने उत्तर दिया—"मुझ से न हो सकेगा।"

अब मदनगोपाल को बुलाकर बात की। उसे भी पूरी स्थिति समझाकर पूछा कि साथ चलने को तैयार है या नहीं।

मदनगोपाल कुछ देर खड़ा सोचता रहा और फिर उस ने हामी भर ली।

मैंने उसे तैयार रहने के लिये कहा। कुछ मिनट बाद भैया ने मुझे दिखलाया कि मदन एक सूने कमरे के कोने में आसन बिछाकर गीता का पाठ कर रहा था। गोपाल भैया ने संकेत से उसके प्रति अपनी विरक्ति और निराशा प्रकट की—"यह गीता से पाया साहस कहीं ऐन वक्त पर ठसक न जाये !"

यह गीता पढ़ने वाला मदनगोपाल गिरफ्तारी के बाद मुखबिर बन गया। मदन ने अपने बयान में पुलिस के सन्तोष के लिये बीसियों बे-सिर-पैर के झूठ बक डाले। आदमी मुखबिर संकट और प्राणों के लिये भय से बनता है। जो एक बार डरा, पुलिस उस से जो चाहे कहलावा या करा सकती है। परन्तु

दिया, इसे जला दो।

कागज के वे टुकड़े जलाये न गये बल्कि उपेक्षा से बगले या रसोई में किसी स्थान पर फेंक दिये गये। जिस अवस्था में हम बंगले से भाग जाना पड़ा, पुलिस ने सुराग ढूंढने के लिये बंगले के कोने कोने की तलाशी ली। वे कागज उन के हाथ पड़ गये। ध्रुवदेव तुरन्त गिरफ्तार कर लिये गये। पुलिस ने उनसे भेद निकालने के लिये उन्हें खूब यातना दी। अपनी इस भूल के लिये मेरे मन में सदा ही कसक और घोर पश्चाताप बना रहा लेकिन ध्रुवजी शरीर से जितने सक्षिप्त है, हृदय मे उतने ही विशाल। छूट कर आये तो मेरी फरारी की अवस्था में फिर भी सहायता करते रहे। उन्हें मेरी नीयत पर इतना विश्वास था कि आज भी वह मित्रता कायम है।

ध्रुव जी पुलिस को बताते भी क्या? उन्हें यह मालूम ही न था कि हम लोग लाहौर में या बहावलपुर रोड पर थे। उनसे केवल 'कमला' के बारे में पूछा जा सकता था क्योंकि उनकी मार्फत 'कमला' के लिये पत्र लिखा गया था। पुलिस ने ध्रुवजी के मकान के साथ ही उन के सम्बन्धी कृष्ण जी के मकान की भी तलाशी, मकान को घेर कर सरगर्मी से ली। प्रकाशवती पकड़ी नहीं गयी क्योंकि तलाशी से कुछ देर पहले जब खुफिया पुलिस अभी उस मकान की देखरेख कर रही थी, उन्हें शंका हो गयी। आशंका अनुभव कर कृष्ण जी से कुछ कहे बिना ख्यालीराम जी गुप्त के यहां चली गयी थी।

× × ×

रावी के किनारे मल्लाह के पास छोड़ी हुई साइकिलों को वापिस लाना और सुखदेवराज के पाव के इलाज की व्यवस्था आदि कई काम थे। १ जून को जेल पर आक्रमण करना ही था इसलिये हम लोग दिल पर पत्थर रख कर उस व्यवस्था में व्यस्त हो गये। मैं और आजाद दोनों बार-बार बोर्स्टल जेल और सेन्ट्रल जेल के सामने से जगह का निरीक्षण करते हुये गुजर जाते। भैया बार-बार पूछते—'साहब कहां ठीक रहेगा, सेन्ट्रल पर या बोर्स्टल पर?

बहुमत से निर्णय हो चुका था। मेरा एक ही उत्तर था—"फैसला तो हो चुका, बोर्स्टल पर।"

१ जून को सुबह ही भैया ने कहा—"आज शाम पांच बजे एक्शन करना है। भाई भगवती और राज की जगह किन दो को लिया जाय? दो आदमी है, छैलबिहारी और मदन। इनमें से जिसे चाहो, एक को चुन लो।"

उन दोनों को यह तो मालूम था कि किसी बहुत बड़े एक्शन की तैयारी है परन्तु एक्शन कहां और कैसे होगा, कौन लोग इसमें भाग लेंगे, यह बातें उन्हें मालूम न थीं। भैया ने मुझे ही कहा —'तुम उनमें से जिसे उचित समझो, उसे

तुम अलग ले जाकर बात कर लो और साइकिल पर ले जाकर स्थान दिखा कर समझा आओ।"

भैया की यह बात भाभी के कान मे पडी। उन्होने आग्रह किया—"आक्रमण मे 'उनकी' (भगवती भाई) जगह जाने का अवसर मुझे दीजिये। सब से पहले यह मेरा अधिकार है।"

भैया ने मेरी ओर देखा। हम दोनो ने समझाया—"इस समय आप रहने दीजिये।"

"क्यो ?" भाभी ने जिद् की।

भैया ने आसू पोछ कर कहा—"ऐसा कोई भी कदम सोच-विचार कर उठाना ठीक होगा। लडके का भी प्रश्न है।"

"लडका अब आप लोगो का है, आप के जिम्मे है।"

"भाभी, अभी मान जाओ!" भैया ने समझाया।

भाभी मे हमारी बात सुनकर सुशीला जी ने भी आक्रमण म भाग लेने के लिये आग्रह किया परन्तु उन्हे भी इन्कार कर दिया गया।

मुझे छैलविहारी जचा। उसे एक ओर ले जाकर बात की—"हम भगतसिंह और दत्त को जेल से छुडाने के लिये आज जेल के फाटक पर आक्रमण करेंगे। यह निश्चय समझ लो कि वहा मारे जाने की ही अधिक सम्भावना है। गोली चलने पर भागने का कोई सवाल न होगा। ऐसी व्यवस्था मे मैं या भैया भागने वाले को स्वय ही गोली मार देगे। यदि साहस नही है तो पहिले ही इन्कार कर सकते हो।"

छैलबिहारी ने उत्तर देने से पहले विचार करने के लिये समय चाहा। प्राय आध घन्टे बाद आकर उस ने उत्तर दिया—"मुझ से न हो सकेगा।"

अब मदनगोपाल को बुलाकर बात की। उसे भी पूरी स्थिति समझाकर पूछा कि साथ चलने को तैयार है या नही।

मदनगोपाल कुछ देर खडा सोचता रहा और फिर उस ने हामी भर ली।

मैंने उसे तैयार रहने के लिये कहा। कुछ मिनट बाद भैया ने मुझे दिखलाया कि मदन एक सूने कमरे के कोने म आसन बिछाकर गीता का पाठ कर रहा था। गोपाल भैया ने सकेत मे उसके प्रति अपनी विरक्ति और निराशा प्रकट की—"यह गीता से पाया साहस कही ऐन वक्त पर ठमक न जाये!"

यह गीता पढने वाला मदनगोपाल गिरफ्तारी के बाद मुखबिर बन गया। मदन ने अपने बयान म पुलिस के सन्तोष के लिये बीसियो बे-सिर-पैर के झूठ बक डाले। आदमी मुखबिर सकट और प्राणो के लिये भय से बनता है। जो एक बार डरा, पुलिस उस से जो चाहे कहलावा या करा सकती है। मदन-गोपाल ने अपने बयान मे अपनी वीरता प्रकट करने के लिये यह भी कहा कि

छैलबिहारी के भय दिखाने पर आजाद ने क्रोध में कहा—यदि एक्शन का सवाल सामने न होता तो उसे गोली मार देते। उसकी यह बात झूठ थी। किसी आदमी के अपने साहस की सीमा प्रकट कर देने पर गोली मार देने की बात हम लोग न करते थे। अलबत्ता मदनगोपाल के मुखबिर बन जाने की बात मालूम होने पर उसे गोली मार देने की इच्छा भैया क्या हम सभी लोगों की थी।

मदनगोपाल रिवाल्वर या पिस्तौल का उपयोग न जानता था। आजाद ने एक खाली रिवाल्वर उसके हाथ में थमा कर निशाना साधना और रिवाल्वर चलाना सिखा दिया और गोलियां भरने का ढंग भी बता दिया। भैया ने सब को ड्यूटियां बांटकर समझा दिया कि आक्रमण के समय किसे क्या करना होगा। हथियार बांटते समय मेरी और भैया की जेबों का सब रुपया सुशीला जी को सौंप दिया गया लेकिन कुछ सोच कर भैया ने पन्द्रह-पन्द्रह रुपये फिर सब को बांट दिये, यदि किसी हालत में जख्मी होकर बिछुड़ ही जायें तो निस्सहाय न रहें।

बोर्स्टल जेल के फाटक पर पुलिस की बंद बस के घूमने के लिये जगह तंग थी इसलिये गाड़ी फाटक से पन्द्रह-बीस कदम दूर खड़ी की जाती थी। भगतसिंह की योजना थी कि हम लोग ठीक उस समय बोर्स्टल जेल के फाटक की ओर मोटर से आयें जब उन लोगों को बस में बैठाने के लिये फाटक से निकाला जा रहा हो। हमें देखकर और हमारा संकेत पाकर भगत और दत्त फाटक से निकल कर पुलिस की लारी की ओर बढ़ते हुये हम लोगों की ओर दौड़ पड़ेंगे। उस समय ही उनके साथ की गारद पर और बस पर आक्रमण करना होगा।

आजाद ने ड्यूटियां इस प्रकार बांटी थीं। जगदीश और बच्चन एक बजे ही जेल के सामने की सड़क पर घूमते हुए भगतसिंह और दत्त के बोर्स्टल जेल की ओर जाने की सूचना के लिये वहाँ चले गये। बच्चन ने ढाई बजे ही जेल के सामने की सड़क पर घूमते हुये भगतसिंह और दत्त के बोर्स्टल जेल की ओर जाने की सूचना के लिये वहां चले गये। बच्चन ने ढाई बजे बंगले पर आकर खबर दी कि पुलिस की बस भगतसिंह और दत्त को सवा दो बजे बोर्स्टल जेल पहुंचा कर लौट गयी है। भगतसिंह और दत्त के पांच बजे सेन्ट्रल जेल वापिस लौटने की आशा थी। चार बजे हम लोग जेल की ओर जाने के लिये कार में अपने-अपने निश्चित स्थानों पर बैठे ही थे कि सुशीला जी ने पुकारा—ठहरिये ! वे कमरे से निकलीं। उनकी बाँह से कुछ खून बह रहा था। खून में उंगली भर कर उन्होंने सब के माथे पर टीके लगा दिये। भाभी पत्थर की मूर्ति की तरह बरामदे में सुन्न खड़ी देख रही थीं।

हम लोग बोर्स्टल और सेन्ट्रल जेल के सामने से सडक पर कुछ दूर नहर की ओर चले गये। इस समय बच्चन हमारे साथ कार म था गया था। अब जगदीश का काम था कि भगतसिंह और दत्त को वापिस लाने के लिये लारी के बोर्स्टल जेल की ओर चलते ही हमे सकेत दे द। हम कार का मुख जेल की ओर मोड कर प्रतीक्षा कर रहे थे। इन्जन चालू था। ड्राइवर सरदार पुलिस के सडक पर अकारण रुकने पर ध्यान आकर्षित न होने देने के लिये इन्जन का हुड उठाये भीतर देख रहा था। जगदीश का सकेत मिलते ही हम लोग चल पडे। हम बहुत तेजी से आ गये थे। पुलिस की गाडी अभी बोर्स्टल जेल के फाटक पर पहुच ही रही थी। हम बार्स्टल जेल के सामने मुख्य सडक स फाटक की ओर जाने वाली सडक के मोड पर रुक गये। पुलिस बस आहिस्ता-आहिस्ता फाटक पर पहुची। कुछ देर जेल क फाटक की ओर मुह किये रुकी, जैसे सदा रुकती होगी परन्तु जान क्यो, फाटक को तुरन्त खुलता न देख कर मुड जाने के लिये लौट पडी। बस म कैदियो के भीतर जाने का रास्ता पीछे से था। बस अपनी पिछाडी जेल फाटक से लगाकर खडी हो गयी। बस के या पहले ही मुड कर फाटक मे लग जाने का अर्थ हुआ कि अब भगतसिंह और दत्त को फाटक मे निकलते ही गाडी मे बैठा दिया जायगा। गाडी फाटक से सट कर खडी हुई थी जैसे पक्षी को एक पिंजरे से दूसरे पिंजरे मे बदलने क लिये पिंजरो के मुह सटा दिये जाये। भगतसिंह और दत्त को बस की ओर पन्द्रह-बीस कदम जाते समय भाग सकने का अवसर न रहा।

हमारी कार मोड पर खडी थी। गाडी का इजन चालू था। भैया न जेल के फाटक की ओर देखते हुए मुझे सम्बोधन किया—"सोहन अब !"

"बढिये !"

"कैसे ?" विस्मय से भैया न पूछा।

'जो भी हो !"

"हू !"

भगतसिंह और दत्त जेल के बन्द फाटक की सीखो के बीच मे आते दिखाई दिये। योजना के अनुसार पिछली सीट पर मै बाईं ओर, बीच मे मदनगोपाल और बच्चन दायी ओर बैठा था।

भैया ने धीमे से निर्देश दिया—'सिगनल !"

बच्चन ने बासुरी बजाना शुरू किया कि भगतसिंह और दत्त हमे देख कर सावधान हो जायें। यह सिगनल पूर्व निश्चित था। जेल के फाटक की खिडकी खुली। हमारी मोटर धीमी चाल म जेल की ओर बढी।

भगतसिंह से इशारा मिलते ही हमे फाटक पर आक्रमण कर देना था। मेरा काम था कि फाटक के बाईं ओर बेंच पर सदा तैयार बैठे रहने वाले जेल-

छैलविहारी के भय दिखाने पर आजाद ने क्रोध में कहा—यदि ऐक्शन का सवाल सामने न होता तो उसे गोली मार देते। उसकी यह बात झूठ थी। किसी आदमी के अपने साहस की सीमा प्रकट कर देने पर गोली मार देने की बात हम लोग न करते थे। अलबत्ता मदनगोपाल के मुखबिर बन जाने की बात मालूम होने पर उसे गोली मार देने की इच्छा भैया क्या हम सभी लोगों की थी।

मदनगोपाल रिवाल्वर या पिस्तौल का उपयोग न जानता था। आजाद ने एक खाली रिवाल्वर उसके हाथ में थमा कर निशाना साधना और रिवाल्वर चलाना सिखा दिया और गोलियां भरने का ढंग भी बता दिया। भैया ने सब को ड्यूटियां बांट कर समझा दिया कि आक्रमण के समय किसे क्या करना होगा। हथियार बांटते समय मेरी और भैया की जेबों का सब रुपया सुशीला जी को सौंप दिया गया लेकिन कुछ सोच कर भैया ने पन्द्रह पन्द्रह रुपये फिर सब को बांट दिये यदि किसी हालत में जख्मी होकर बिखर ही जायें तो निस्सहाय न रहें।

बोर्स्टल जेल के फाटक पर पुलिस की बंद बस के घूमने के लिये जगह तंग थी इसलिये गाड़ी फाटक से पन्द्रह-बीस कदम दूर खड़ी की जाती थी। भगतसिंह की योजना थी कि हम लोग ठीक उस समय बोर्स्टल जेल के फाटक की ओर मोटर से आयें जब उन लोगों को बस में बैठाने के लिये फाटक से निकाला जा रहा हो। हमें देखकर और हमारा संकेत पाकर भगत और दत्त फाटक से निकल कर पुलिस की लारी की ओर बढ़ते हुये हम लोगों की ओर दौड़ पड़ेंगे। उस समय ही उनके साथ की गारद पर और बस पर आक्रमण करना होगा।

आजाद ने ड्यूटियां इस प्रकार बांटी थी। जगदीश और बच्चन एक बजे जेल के सामने की सड़क पर घूमते हुए भगतसिंह और दत्त के बोर्स्टल जेल की ओर जाने की सूचना के लिये वहां चले गये। बच्चन ने ढाई बजे ही जेल के सामने की सड़क पर घूमते हुये भगतसिंह और दत्त के बोर्स्टल जेल की ओर जाने की सूचना के लिये वहां चले गये। बच्चन ने ढाई बजे बंगले पर आकर खबर दी कि पुलिस की बस भगतसिंह और दत्त को सवा दो बजे बोर्स्टल जेल पहुंचा कर लौट गयी है। भगतसिंह और दत्त के पांच बजे सेन्ट्रल जेल वापिस लौटने की आशा थी। चार बजे हम लोग जेल की ओर जाने के लिये कार में अपने अपने निश्चित स्थानों पर बैठे ही थे कि सुशीला जी ने पुकारा—ठहरिये! वे कमरे से निकलीं। उनकी बांह से कुछ खून बह रहा था। खून में उंगली भर कर उन्होंने सब के माथे पर टीके लगा दिये। भाभी पत्थर की मूर्ति की तरह बरामदे में सुन्न खड़ी देख रही थीं।

हम लोग बोर्स्टल और सेन्ट्रल जेल के सामने से सडक पर कुछ दूर नहर की ओर चले गये। इस समय बच्चन हमारे साथ कार मे आ गया था। अब जगदीश का काम था कि भगतसिंह और दत्त को वापिस लाने के लिये लारी के बोर्स्टल जेल की ओर चलते ही हम सकेत दे दे। हम कार का मुख जेल की ओर मोड कर प्रतीक्षा कर रहे थे। इन्जन चालू था। ड्राइवर सरदार पुलिस के सडक पर अकारण रुकने पर ध्यान आकर्षित न होने देने के लिये इन्जन का हुड उठाये भीतर देख रहा था। जगदीश का सकेत मिलते ही हम लोग चल पडे। हम बहुत तेजी से आ गये थे। पुलिस की गाडी अभी बोर्स्टल जेल के फाटक पर पहुच ही रही थी। हम बोर्स्टल जेल के सामने मुख्य सडक से फाटक की ओर जाने वाली सडक के मोड पर रुक गये। पुलिस बस आहिस्ता-आहिस्ता फाटक पर पहुची। कुछ देर जेल के फाटक की ओर मुह किये रही, जैसे सदा रुकती होगी परन्तु जाने क्यो, फाटक को तुरन्त खुलता न देख कर मुड जाने के लिये लौट पडी। बस मे कैदियो के भीतर जाने का रास्ता पीछे से था। बस अपनी पिछाडी जेल फाटक से लगाकर खडी हो गयी। बस के या पहले ही मुड कर फाटक से लग जाने का अर्थ हुआ कि अब भगतसिंह और दत्त को फाटक से निकलते ही गाडी मे बैठा दिया जायगा। गाडी फाटक से सट कर खडी हुई थी जैसे पक्षी को एक पिजरे से दूसरे पिजरे मे बदलने के लिये पिजरो के मुह सटा दिये जायें। भगतसिंह और दत्त को बस की ओर पन्द्रह-बीस कदम जाते समय भाग सकने का अवसर न रहा।

हमारी कार मोड पर खडी थी। गाडी का इजन चालू था। भैया ने जेल के फाटक की ओर देखते हुए मुझे सम्बोधन किया—"सोहन अब!"

"बढिये!"

'कैसे?" विस्मय से भैया ने पूछा।

"जो भी हो!"

"हू!"

भगतसिंह और दत्त जेल के बन्द फाटक की सीखो के बीच से आते दिखाई दिये। योजना के अनुसार पिछली सीट पर मैं बाईं ओर, बीच मे मदनगोपाल और बच्चन दायी ओर बैठा था।

भैया ने धीमे से निर्देश दिया—"सिगनल!"

बच्चन ने बासुरी बजाना शुरु किया कि भगतसिंह और दत्त हम देख कर सावधान हो जायें। यह सिगनल पूर्व निश्चित था। जेल के फाटक की खिडकी खुली। हमारी मोटर धीमी चाल मे जेल की ओर बढी।

भगतसिंह से इशारा मिलते ही हमे फाटक पर आक्रमण कर देना था। मेरा काम था कि फाटक के बाईं ओर बेंच पर सदा तैयार बैठे रहने वाले जेल

इन्द्रपाल की आशंका ठीक थी। कुछ ही दिन पहले उसका विवाह हुआ था। उसे दहेज में जो सामान मिला था, हम लोग उठा कर ले गये थे। इनमें से कई चीजों पर उसका नाम और उपहार मिलने की तिथि भी लिखी हुई थी।

उसे आश्वासन दिया—' इतनी जल्दी पुलिस नहीं पहुंची होगी। देख आऊं, अवसर हुआ तो सामान उठा लायेंगे।'

भैया ने ताकीद की—"सम्भल कर, बचपन न करना!"

मैं बहावलपुर रोड पर पहुंचा और बंगले के सामने से घूम कर देखा, अभी बिलकुल सुनसान था। भीतर गया और एक परदा उतार कर उसमें जितना सामान सम्भला सका एक गठरी बांध कर इन्द्रपाल के यहां लौट आया और बताया कि अभी तो वहां बहुत कुछ है।

भाभी और सुशीला जी को बच्चन के साथ सुरक्षित स्थान पर पहुंचा कर मैं, भैया और इन्द्रपाल फिर साइकिलों पर बंगले में लौटे। चौकस हो कर बंगले के भीतर झांक कर देख लिया।

भैया ने टोका—"हम लोग बचपन कर रहे हैं। पड़ोसी इंजीनियर के यहां टेलीफोन है। वह ऊंचा सरकारी नौकर है। उसने अगर पुलिस को फोन कर दिया हो तो?"

मैंने पड़ोसी इंजीनियर का दरवाजा खटखटाया। वे बाहर निकले। मैंने अंग्रेजी में बात की—"कोठी में विस्फोट हो गया है?"

"हां" घबराकर उन्हों ने स्वीकार किया।

"आपने पुलिस को फोन तो नहीं किया?"

"अभी तो नहीं किया पर कर देना चाहिये।'

"अभी न कीजिये।"

"क्यों?"

"हम क्रान्तिकारी लोग हैं। विस्फोट आकस्मिक रूप से हो गया है। आप आध घंटे बाद फोन कीजिये। इससे सरकार के प्रति कर्तव्य पालन भी हो जायगा और इतने समय में हम अपना प्रबन्ध भी कर लेंगे।" उन्होंने सज्जनता से मेरी बात स्वीकार कर ली और वैसा ही किया भी। हम लोगों ने केवल निरर्थक चीजें छोड़ कर बंगले से सब कुछ हटा लिया।

बहावलपुर रोड के बंगले में विस्फोट के परिणाम-स्वरूप ध्रुवजी के संकट में फंसने के अतिरिक्त हम लोगों के कारण इन इंजीनियर साहब पर जो बीती, उस के लिये भी दुख है। जब मैं इंजीनियर से बात करने गया तो इन्द्रपाल मेरे साथ था। यह ठीक है कि इन्द्रपाल जान बचाने के लिये मुखबिर न बना था बल्कि मुखबिर बन जाने के लिये तैयार दूसरे लोगों से अपने साथियों को बचाने के लिये ही मुखबिर बना था। उस ने बहुत से लोगों को पुलिस की

लपेट मे आने से बचाया भी परन्तु जाने क्यो, इन इंजीनियर साहब की बात उसने पुलिस से कह दी। इंजीनियर को खूब परेशान किया गया और उनका ओहदा गिरा कर सरकार ने इनसे बदला भी लिया। इंजीनियर साहब ने हम लोगो के प्रति जिस सद्भावना और सहानुभूति का परिचय दिया, उसके लिये वातावरण पैदा करने वाली कुछ घटनायें पिछले दिनो हो चुकी थीं।

× × ×

जलगाव अदालत मे मुखबिर पर गोली

फरवरी १९३० म एक और घटना से जनता मे हमारे दल के प्रति आस्था बढने मे सहायता मिली थी। जलगाव अदालत मे साथी भगवानदास न लाहौर षडयन्त्र के मुखबिर जयगोपाल पर गोली चला दी थी और जयगोपाल जख्मी हो गया था। साथी भगवानदास लगभग अक्टूबर १९२९ मे साथी सदाशिवराव मल्कापुर के साथ गिरफ्तार हो गये थे। भगवानदास और सदाशिव के गिरफ्तार होने के समय जनता का व्यवहार कैसा था और भगवानदास के अदालत म मुखबिर पर गोली चला दन पर जनता म क्या प्रतिक्रिया हुई, इस अन्तर स क्रान्तिकारियो क प्रयत्नो से जनता की भावना पर पडे प्रभाव का बहुत अच्छा उदाहरण मिलता है।

अक्टूबर १९२९ म जब भैया आज़ाद न भगवती भाई के प्रति अविश्वास के कारण हम लोगो मे सम्पर्क अस्वीकार कर दिया था वे ग्वालियर म कठिन अवस्था म थे। वहाँ किसी प्रकार पाव जमते न देखकर उन्होंने भगवानदास और सदाशिवराव को बम बनाने का सामान और यन्त्र लेकर पूना जाने के लिये कह दिया था। पूना म राजगुरु का जमाया हुआ दल का एक अड्डा था। पूना जाते समय भुसावल मे गाडी बदलनी पडती है। भुसावल मे 'मादक द्रव्य नियत्रक' (एक्साइज) पुलिस की बहुत चौकसी रहती थी। प्राय ही मुसाफिरो के सामान की जाँच कर ली जाती थी।

पुलिस ने भगवानदास और सदाशिवराव की गठडी और बक्से की भी जाच करनी चाही। सदाशिव के समझाने-बुझाने का कोई प्रभाव पुलिस पर न हुआ। उन लोगो को अपना बक्सा खोल कर दिखाना ही पडा। बक्से म तेजाब आदि की बोतलें देख कर पुलिस को सन्देह हुआ। भगवानदास ने इन बोतलो को अमूल्य औषधिया बताकर पुलिस को बहलाना चाहा परन्तु तलाशी म कारतूसो की एक बडी पुडिया भी निकल आयी थी। कपडे म लिपटा एक पिस्तौल भी बक्स मे था जिसे भगवानदास ने चातुरी से उठा कर पहले बाहिर रख दिया था।

पुलिस के पहुँचने की सम्भावना न देख भगवानदास ने सदाशिव को संकेत किया, उठाओ और भागो !

सदाशिव ने केवल पिस्तौल न उठा कर पूरा बक्सा ही उठाकर भागना शुरू किया। दोनों प्लेटफार्म से सिगनल की ओर भाग चले। पुलिस के सिपाही उन के पीछे दौड़े। सिपाहियों ने भीड़ की सहायता के लिये पुकारा— दौड़ो, दौड़ो ! बम मारने वाले भाग जा रहे हैं ! भीड़ सिपाहियों की सहायता के लिये दौड़ पड़ी।

बक्सा उठाये सदाशिव का पाँव सिगनल की एक तार में उलझ गया और वह गिर पड़ा। उसे पुलिस के हाथ पड़ता देख कर भगवानदास ने जेब से पिस्तौल निकाल कर भीड़ की ओर हवा में गोली चला दी। इस पर भी भीड़ ने उन लोगों का पीछा न छोड़ा। वे दोनों रास्ता बदल कर स्टेशन का जंगला कूद कर सड़क लाँघ कर बस्ती की ओर दौड़े। स्थान से अपरिचित थे भाग्य से पुलिस चौकी में ही पहुँच गये और गिरफ्तार हो गये।

भगवानदास और सदाशिव का बिना युद्ध कर पाये गिरफ्तार हो जाने और दल का बहुमूल्य सामान खो देने की बहुत ग्लानि थी। मुखबिरों के बयानों से इन दोनों का सम्बन्ध लाहौर षड़यन्त्र से मालूम हो ही चुका था। दोनों को लाहौर लाकर पुलिस ने मुखबिर जयगोपाल और फणीन्द्र से पहचनवा लिया था परन्तु उनका मुकदमा जलगाँव में ही हो रहा था और वे धूलिया जेल में बन्द थे। इन लोगों ने अपने विश्वस्त साथी के प्रसिद्ध वकील रा० बी० दूधकर की परामर्श के लिये धूलिया बुलवा कर आजाद को संदेश भेजा कि उनके मुकदमे में दुबारा गवाही देने के लिये जयगोपाल और फणीन्द्र जलगाँव अदालत में आयेंगे। यदि उन्हें एक पिस्तौल पहुँचा दिया जाय तो वे मुखबिरों को मार सकेंगे।

जनवरी १९३० में संदेश मिलने पर भैया ने भगवती भाई को उन दोनों की योजना समझाने और परिस्थिति देखने के लिये भेज दिया। भगवती भाई साथी के एक वकील की हैसियत से इन दोनों से जेल में मिले और भैया को काम हो सकने की अनुमति दे दी। २७ फरवरी १९३० को सदाशिव के भाई शंकरराव मलकापुर दोनों अभियुक्तों के लिये भोजन लेकर जेल में गये तो भैया का दिया हुआ एक भरा हुआ पिस्तौल कटोरदान में साथ लेते गये।

भगवानदास और सदाशिव ने अपनी योजना पूर्ण कर सकने के लिये जेल वालों पर अपनी सज्जनता और नियमानुकूल रहने का विश्वास पहिले ही जमा लिया था। कभी कभी सिपाहियों को गीत सुना कर उनका मनोरंजन भी करते रहते थे। २७ फरवरी को उन लोगों की जलगाँव की सेशन अदालत में पेशी थी। उसी दिन दोनों मुखबिर जयगोपाल और फणीन्द्र गवाही देने के लिये

आने वाले थे। भगवानदास जेल से अदालत जाते समय पिस्तौल जेब मे लेते गये। अदालत मे दोपहर के विश्राम के समय भगवानदास और सदाशिव के लिये शकरराव खाना लेकर गये थे। दोनो अभियुक्तो के लिये बरामदे के नीचे दो कुसिया डाल दी गयी थी। शकरराव बरामदे मे उनके सामने उकडू बैठ उन्हे भोजन करा रहे थे। अभियुक्तो के पीछे अदालत के अहाते म एक छोलदारी मे दोनो मुखबिरो और उनकी रक्षा के लिये तैनात पुलिस अफसरो के लिये मेज कुर्सियो पर भोजन की व्यवस्था की गयी थी।

भगवानदास और सदाशिव की हथकडिया, भोजन कर सकने के लिये दायें हाथो से खोल कर केवल एक हाथ, बायें हाथ म ही लगा दी गयी थी। शकरराव ने उन्हे बताया—"तुम्हारी पीठ पीछे छोलदारी म दोनो मुखबिर पुलिस वालो के साथ खाना खा रहे है।"

भगवानदास ने छोलदारी का पर्दा उठाया। फणीन्द्र गोली की आहट सुन कर पहिले ही कुर्सी से खिसक कर मेज के नीचे घुस गया था। जयगोपाल हिम्मत करके भगवानदास की ओर झपटा। भगवानदास न उस पर गोली चलायी। गोली जयगोपाल के कन्धे पर लगी और वह चिल्लाकर अदालत की ओर भागा। मुखबिरो के साथ भोजन के लिये बैठा पुलिस का इजार्ज अफसर भी मेज के नीचे घुस गया था। भगवानदास न झुक कर गोली चलाने का यत्न किया परन्तु पिस्तौल अड गया था।

भगवानदास छोलदारी से अदालत के कमरे की ओर भागा ताकि उन के पास पकडा गया जो पिस्तौल उन के विरुद्ध गवाही के लिये अदालत मे रखा हुआ था, उठा ले। सदाशिव उस मे पहिले ही उस ओर दौडने के कारण पकड लिया गया था।

नानकशाह चोट खाकर अदालत की ओर भाग गया था। भगवानदास को अपनी ओर आते देखकर 'मरता क्या न करता' की अवस्था मे वह भगवानदास पर टूट पडा और अपने बोझ से भगवानदास को नीचे गिराकर दबा लिया। पुलिस के दूसरे आदमियो ने भी दौडकर भगवानदास को काबू कर लिया। इस अवसर पर जलगाव की बहुत सी जनता क्रातिकारियो का मुकद्दमा देखने के लिये अदालत मे घिर आयी थी। क्रान्तिकारियो और पुलिस की इस लडाई मे जनता ने पुलिस का साथ न दिया बल्कि क्रातिकारियो के समर्थन मे 'क्राति जिन्दाबाद!' के नारे लगाने लगी।

अदालत की कारंवाई स्थगित कर दी गई। मुखबिरो के लिये भीड 'गद्दार मुर्दाबाद!' के नारे लगा रही थी और बस पर पत्थर फेंके जा रहे थे। नौ या दस आदमी गिरफ्तार कर लिये गये और जलगाव मे दफा १४४ लग गयी। चार महीनो मे क्रातिकारियो के प्रति जनता की भावना मे इतना परिवर्तन आ

गया था क्योंकि इस बीच वाइसराय की गाडी के नीचे बम-विस्फोट, चटगाव में शस्त्रागार पर हमला और 'फिलासफी आफ दी बम' के वितरण की घटनायें हो चुकी थी। जनता जान चुकी थी, क्रांतिकारी कौन हैं और उनका प्रयोजन क्या है।

जनता ही नहीं पुलिस भी इस प्रभाव से न बची थी। हवालात में पिस्तौल पहुंच जाने और अदालत में गोली चल जाने के कारण क्रांतिकारी अभियुक्तों पर चौकसी रखने वाले देसी सिपाहियों को अयोग्य समझा गया। उसी समय गोरे सार्जेंट बुलाकर पुराने सिपाहियों की बदली कर दी गयी। इन देसी सिपाहियों में से कुछ अपनी शिथिलता के कारण सजा पाने की आशंका से घबरा रहे थे। इन्हीं सिपाहियों में से एक वृद्ध ने अपने साथियों को फटकार दिया—"क्यों मरे जा रहे हो नौकरी चली जायगी? बहुत होगा चार-छः महीने की जेल हो जायगी। मां के इन लालों को देखो देश और कौम के लिये जान दे रहे हैं!

वाइसराय की गाडी के नीचे विस्फोट हुए दो मास हो चुके थे। उस घटना की तहकीकात करने के लिये लंदन से खास स्काटलैंडयार्ड के चतुर जासूस बुलाये गये थे। वे भी कुछ पता न लगा पाये थे। अब अदालत में दो मुखबिरों पर गोली चल गयी थी इसलिये जनता क्रांतिकारियों को सहानुभूति के योग्य समझने लगी थी। हम अनुभव कर रहे थे कि जनता का साहस और चरित्र बढ रहा था लेकिन साहस और चरित्र के लिये घटनाये और परिस्थितियां ही थी।

मैं जिन चीजों को कम महत्वपूर्ण समझ कर बहावलपुर रोड के बंगले में छोड़ आया था उन में मेरे हाथ के हिन्दी में लिखे बहुत से कागज थे। इन्द्रपाल के मकान पर या बंगले में जब भी मुझे कुछ समय मिल जाता था, मैं आस्कर-वाइल्ड के प्रसिद्ध नाटक 'वीरा दी निहिलिस्ट' (अराजक वीरा) का अनुवाद किया करता था। इन कागजों को कहां संभालता फिरूंगा, यह सोच कर वहीं ही छोड दिये थे। यह कागज पुलिस के हाथ पडने पर उन्हें मालूम हो गया कि यशपाल बंगले में जरूर था। मेरे पुलिस को बार बार चकमा दे देने के कारण पुलिस मुझ से बहुत नाराज थी।

जनता से क्रांतिकारियों को जो सहानुभूति मिलती थी उसी के बल पर हम पुलिस के हाथ न पडकर उस से लड सकते थे। पुलिस जनता में क्रांतिकारियों के विरुद्ध घृणा फैलाने की तिकडम करती रहती थी इसलिये मुखबिरों से क्रांतिकारियों के चरित्र पर भी लाछन लगवाये जाते थे। मुखबिर बन जाने पर मदनगोपाल ने बयान दिया था कि बहावलपुर रोड के बंगले में बम विस्फोट हो जाने के कारण भगतसिंह को छुडाने की योजना पूरी न हो सकी। विस्फोट का कारण यह था कि जिस आलमारी में बम रखे थे उस के पास खडा होकर

यशपाल भाभी म छडसानी कर रहा था । आलमारी हिन जान स बम फट गया । यशपाल सुशाला दीदी म आ छेडखानी किया करता था । इस स आजाद नाराज रहत थे । इस कमरे म आलमारिया दीवार म बनी हुई थी ।

उपरोक्त बयान लिखात समय पुलिस ने या मदनगोपाल न यह न सोचा कि उस बम विस्फोट स आलमारी क किवाड उड गय थ और बम क टुकडा की चोट स सामने का दीवार पर बहुत स छद हो गय थ दीवार का अधिकाश पलस्तर उड गया था । एसी अवस्था म आलमारी क समीप खड यशपाल की क्या हालत होनी चाहिय था । छडखानी भी उस स्त्री स जिसका पति तीन दिन पूव ही बम स घायल होकर मर गया था । जिसे घायल अवस्था म यशपाल ने स्वय देखा था ।

सुशीलादी और भाभी को धन्वन्तरी न सुरक्षित स्थानो म पहुचा दिया था । मदनगोपाल को मन उसी रोज़ दल स सहानुभूति रखन वाल साथी केवलकृष्ण क एक मित्र क साथ लाहौर से निरापद बाहर भिजवा दिया । केवल का एक मित्र निजी कार म पालमपुर (कागडा) जा रहा था । मदन को उसकी गाडी म बठा दिया गया । गरमी का मौसम था । एक परिचित परिवार शिमला जा रहा था । उन के साथ छलबिहारी को भिजवा दिया था ।

उन दिनो बचपन मे बहुत समय तक रही सग्रहणी के प्रभाव से मेरा पेट बार-बार खराब हो जाता था । भगवती भाई की मृत्यु और दूसरी घटनाओ का तनाव भी मुझ पर काफी पडा था । भैया स मन कहा म दो-तीन सप्ताह विश्राम चाहता हू । व मान गय और तय हुआ कि मै जुलाई के पहल सप्ताह म दिल्ली पहुच जाऊ ।

मैंने हाकी का मच खेलन वाले खिलाडी की पोशाक पहनी । केवलकृष्ण ने भी वसी ही पोशाक पहना । म और केवल मोटर साइकिल पर अमृतसर पहुच गय विचार था दिल्ली म काम आरम्भ करन स पूव कुछ दिन पहाडी स्थान म विश्राम कर लू । देवराज और वात्स्यायन डलहौजी जा रहे थ । उन्ही के साथ जाना तय कर लिया । पहाड जात समय दिल्ली जाकर प्रकाशवती को भी साथ ल लिया था । समय आन पर मेरा यह आचरण भी मेरे अपराधो की सूचि म गिना गया ।

◈

गया था क्योंकि इस बीच वाइसराय की गाडी के नीचे बम-विस्फोट, चटगाव मे शस्त्रागार पर हमला और फिलासफी आफ दी बम' के वितरण की घटनायें हो चुकी थी। जनता जान चुकी थी, क्रातिकारी कौन है और उनका प्रयोजन क्या है।

जनता ही नही पुलिस भी इस प्रभाव से न बची थी। हवालात मे पिस्तौल पहुच जाने और अदालत म गोली चल जाने के कारण क्रातिकारी अभियुक्तों पर चौकसी रखने वाले देसी सिपाहियो को अयोग्य समझा गया। उसी समय गोरे सार्जेंट बुलाकर पुराने सिपाहियो की बदली कर दी गयी। इन देसी सिपाहियो म से कुछ अपनी शिथिलता के कारण सजा पाने की आशका से घबरा रहे थे। इन्ही सिपाहियो मे से कुछ ने अपने साथियो को फटकार दिया—'क्यों मरे जा रहे हो नौकरी चली जायगी? बहुत होगा चार-छ महीने की जेल हो जायगी। वा वे इन लालो को देखा, देश और कौम के लिये जान दे रहे है!'

वाइसराय की गाडी के नीचे विस्फोट हुए दो मास हो चुके थे। उस घटना की तहकीकात करने के लिये लदन से खास स्काटलैंडयार्ड के चतुर जासूस बुलाये गये थे। वे भी कुछ पता न लगा पाये थे। अब अदालत म हो मुखबिरा पर गोली चल गयी थी इसलिये जनता क्रातिकारियो को सहानुभूति के योग्य समझने लगी थी। हम अनुभव कर रहे थे कि जनता का साहस और चरित्र बढ रहा था लेकिन साहस और चरित्र के लिये घटनायें और परिस्थितिया ही थी।

मैं जिन चीजो को कम महत्वपूर्ण समझ कर बहावलपुर रोड के बगले म छोड आया था उन म मेरे हाथ के हिन्दी म लिखे बहुत से कागज थे। इन्द्रपाल के मकान पर या बगले म जब भी मुझे कुछ समय मिल जाता था, मैं आस्कर-वाइल्ड के प्रसिद्ध नाटक 'वीरा दी निहिलिस्ट' (अराजक वीरा) का अनुवाद किया करता था। इन कागजों को कहा सभालता फिरूगा, यह सोच कर वहीं ही छोड दिये थे। यह कागज पुलिस के हाथ पडने पर उन्हे मालूम हो गया कि यशपाल बगले म जरूर था। मेरे पुलिस को बार-बार चकमा दे देने के कारण पुलिस मुझ से बहुत नाराज थी।

जनता से क्रातिकारियो को जो सहानुभूति मिलती थी उसी के बल पर हम पुलिस के हाथ न पडकर उस से लड सकते थे। पुलिस जनता म क्राति-कारियो के विरुद्ध घृणा फैलाने की तिकडम करती रहती थी इसलिये मुखबिरो से क्रातिकारियो के चरित्र पर भी लाछन लगवाये जाते थे। मुखबिर बन जाने पर मदनगोपाल ने बयान दिया था कि बहावलपुर रोड के बगले म बम-विस्फोट हो जाने के कारण भगतसिंह को छुडाने की योजना पूरी न हो सकी। विस्फोट का कारण यह था कि जिस आलमारी म बम रखे थे उस के पास खडा होकर

यशपाल भाभी म छेडखानी कर रहा था। आत्मारी हि न रात म बम फट गया। यशपाल मुशीला दीदा म भी छेडखानी किया करता था। ग्म स आज़ाद नाराज़ रहत थ। इस कमर म आत्मारिया गीवार म बनी हुई थी।

उपरोक्त बयान दिलान समय पुलिस न या मदनगोपाल न यह न सोचा कि उस बम विस्फोट से आत्मारी क किवाड उड गय थ और बम क टुकडा की चोट स सामने का दीवार पर बहुत स छद हो गय थे, दीवार का अधिकाश पलस्तर उड गया था। एसी अवस्था म आत्मारा के समीप खड यशपाल की क्या हालत होनी चाहिय था। छेडखानी भी उस स्त्री स जिसका पति तीन दिन पूव ही बम स घायल होकर मर गया था। जिस घायल अवस्था म यशपाल न स्वय देखा था।

मुशीलाजी और भाभी को ध वन्तरी न सुरक्षित स्थानो म पहुचा दिया था। मदनगोपाल को मैंने उसी रोज़ दन स सहानुभूति रखन वाल माथी कवलकृष्ण क एक मित्र के साथ लाहौर से निरापद बाहर भिजवा दिया। केवल का एक मित्र निजी कार म पालमपुर (कागडा) जा रहा था। मदन को उसकी गाडी म बैठा दिया गया। गरमी का मौसम था। एक परिचित परिवार शिमला जा रहा था। उन क साथ छैलबिहारी को भिजवा दिया था।

उन दिनो बचपन म बहुत समय तक रही सग्रहणी के प्रभाव स मेरा पेट बार बार खराब हो जाता था। भगवती भाई की मृत्यु और दूसरी घटनाओ का तनाव भी मुझ पर काफी पडा था। भैया म मन कहा म दो तीन सप्ताह विश्राम चाहता हू। व मान गये और तय हुआ कि मैं जुलाई के पहले सप्ताह म दिल्ली पहुच जाऊ।

मैंन हाकी का मैच खेलने वाले खिलाडी की पोशाक पहनी। केवलकृष्ण न भी वैसी ही पोशाक पहनी। मैं और केवल मोटर साइकिल पर अमृतसर पहुच गय। विचार था दिल्ली मे काम आरम्भ करन स पूव कुछ दिन पहाडी स्थान म विश्राम कर लू। देवराज और वात्स्यायन डलहौज़ी जा रहे थ। उन्ही के साथ जाना तय कर लिया। पहाड जाते समय दिल्ली जाकर प्रकाशवती को भी साथ ले लिया था। समय आन पर मेरा यह आचरण भी मेरे अपराधो की सूचि मे गिना गया।

◈

दिल्ली मे बड़ी बम-फैक्टरी

भगतसिंह और दत्त को जेल से छुड़ाने के लिये विराट आयोजन और उस मे पूर्व के काम मुख्यत भगवती भाई द्वारा दुर्गा भाभी से दिलाये पाच-छ हजार और सुशीला जी द्वारा अपनी कलकत्ते की नौकरी की कमाई से दिये दो-ढाई हजार रुपय से ही हो सके थे। उसके बाद आर्थिक कठिनाई बहुत बढ गयी थी। भैया आजाद ने मजबूर होकर जुलाई १९३० के पहले सप्ताह मे चादनी चौक दिल्ली मे दोपहर के समय 'गडोदिया स्टोर' मे डाका डाल दिया था।

आजाद, विद्याभूषण और काशीराम पिस्तौलें लिये दुकान की ऊपर की मंजिल मे गडोदिया की गद्दी पर पहुचे। इस स्टोर म काम करने वाला हमारा साथी विश्वम्भरदयाल यहा पहले से मौजूद था। विश्वम्भर ने आजाद को आने के लिये ठीक समय पहले से बता दिया था। धन्वन्तरी और भवानीसिंह गली मे दुकान के जीने के सामने पिस्तौलें लिये खड़े रहे ताकि चीख पुकार होने पर कोई ऊपर न जा सके और ऊपर गये साथी घिर न जायें। गद्दी पर केवल पिस्तौल दिखा कर ही काम चल गया। साथी लगभग १७,३०० रुपये तीन-चार मिनिट म ही लेकर नीचे उतर आया।

हमारे साथियो के जीने से बाहर निकल आने पर कुछ आदमियो ने शोर मचाना चाहा। उस समय एक गोली भैया को और एक गोली विद्याभूषण को चलानी पडी। कुछ ही कदम पर टाउन हाल के हाते म लेखराम कार लिये खड़ा था। इन लोगो के कार म बैठते ही गाडी चल दी। रुपया न्यू हिन्दू होस्टल मे प्रोफेसर निगम के पास रख दिया गया और फिर शनै-शनै जगह-जगह बाँट दिया गया। यह डकैती मेरे दिल्ली पहुचने से पहले ही हो चुकी थी। इसका वृत्तान्त मैंने कैलाशपति और आजाद से सुना था। मैं और कुछ साथी पहाड पर थे।

डकैती में प्राप्त रकम का अच्छा बडा भाग दिल्ली मे कैलाशपति और कानपुर म वीरभद्र तिवारी को इस उद्देश्य से सौंप दिया गया कि दिल्ली मे बम का मसाला बनाने का और कानपुर मे बम के खोल ढालने और खरादने के लिये

कारखाने बनाने जायें। अभिप्राय था, बम इतनी सख्या मे बन सके कि हमारे प्रयत्न इक्के-दुक्के आतकवादी कार्यो तक ही सीमित न रह, बल्कि गारिल्ला दलो के आक्रमण का रूप ले सकें। प्रत्येक प्रान्त के सगठन कर्ता का प्रचार द्वारा सार्वजनिक सम्पर्क बढाने के लिये एक-एक साइक्लोस्टाइल मशीन खरीदने का भी निर्देश दिया गया। पजाब के भाग म दो हजार रुपय विशेष कर इस प्रयोजन से रख गये थे कि सीमान्तप्रदेश मे ब्रिटिश विरोधी नेता बादशाह गुल स सम्पर्क स्थापित करके उस प्रदेश म अपने दृष्टिकोण मे राजनैतिक प्रचार किया जाय।

मैं दिल्ली आकर आजाद स मिला। लाहौर लौट कर अपने काम म लग जाना चाहता था परन्तु भैया ने पहले दिल्ली म बम का ममाला बनाने का कारखाना जमा दने के लिय कहा। उस समय दल म मेरे अतिरिक्त कोई व्यक्ति यह काम न जानता था। मुझे कहा गया—यह काम सभी प्रान्तो की दृष्टि से आवश्यक है। पजाब म धन्वन्तरी घर छोड कर मेरी जगह काम सम्भाल रहा है।

विमलप्रसाद जैन ने 'झन्डेवाला' म एक खूब बडा मकान इस प्रयोजन के लिय खोज कर मुझे दिखाया। मकान हमारे प्रयोजन के बहुत अनुकूल था। उस म खूबी यह थी कि मकान क चारो ओर खुली जगह थी। पडोसियो के भीतर झाकने या गन्ध सूघने की आशका न थी। हवादार कमरे, खुली छतें। मकान ल लिया गया। दल की ओर स आदेश था कि इस बार फैक्टरी ऐसे पर्दे और ढग से जमायी जाये कि स्थाई रूप स चलती रह। भीतर बम का मसाला निरापद रूप स बनाने क लिय बाहरी रूप रग भी कुछ होना चाहिय था। यह सोच कर कि पिक्रिक एसिड धोने क कारण निरन्तर तजाबी पानी बहेगा, हम लोगो न फैक्टरी का साबुन के कारखाने का आवरण देना निश्चय किया। ऊपर के सब इन्तजाम विमल के सुपुर्द थ। उस न एक अच्छा साइन-बोर्ड 'हिमालयन टायलट्स' क नाम मे बनवा लिया था।

हमारे इन कामो म और पिक्रिक एसिड आदि बनाने म भी रसायन (कैमिस्ट्री) पढा आदमी बहुत सहायक हो सकता था इसलिये लाहौर से सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन को बुला लिया गया। वात्स्यायन न पिछले मार्च-अप्रैल मास म ही कालिज छोड कर दल का काम आरम्भ कर दिया था।

कैलाशपति को मैंने आवश्यक सामान की सूचिया बना दी थी। सामान आ गया। हमने जीने स ऊपर पहुचते ही सामने पडने वाले कमरे म फैक्टरी का दफ्तर या 'शो रूम' बना लिया था। वात्स्यायन न प्रसाधन के पदार्थों के नुस्खो की किताबो की सहायता स मुह पर मलने की क्रीम और कुछ सुगन्धित तल बना लिये। इन सब पर हमन अपने कारखाने के नाम के लेबल छपवा कर लगा लिय। कला की ओर प्रवृत्ति रखने वाले दो आदमी यानि वात्स्यायन

(अज्ञेय) और मैं मिल गये थे। हमारे कारखाने की चीजों के नाम भी कलापूर्ण ही रख गये अर्थात् 'वसन्तपराग हेयर आइल' 'वसन्तपराग क्रीम', 'वसन्तपराग सोप'। साबुन हम लोग न बना सके परन्तु शो-रूम में तो साबुन होना ही चाहिये था। विमल साबुन के साँचे बनवा लाया था और हम ने कुछ टिकिया बाजार से बने बनाये साबुन की लेकर उन पर वसन्तपराग सोप के साँचे से नये नाम दे दिये। तेल, साबुन, क्रीम बनाने में तो वात्स्यायन ने मुख्य सहायता दी परन्तु पिक्रिक ऐसिड का कोई पूर्व अनुभव उसे न होने और पिक्रिक की विषाक्त वाष्प उस के कोमल शरीर स्वभाव को सह्य न होने से वह इस काम का बोझ न सम्भाल सका। मुझे आशा थी कि वह उस काम को सम्भाल लेगा तो मुझे लाहौर जाने का अवकाश शीघ्र ही मिल जायगा।

पिक्रिक ऐसिड बनाने के काम में मेरे साथ वात्स्यायन, विमलप्रसाद जैन, प्रकाशवती और गिरिवरसिंह सहयोग दे रहे थे। कैलाशपति ने भी आरम्भ में यह काम सीख लेने की उमंग प्रकट की थी परन्तु वह तेजाबों के दम घोंट वाष्प से घबराकर यह काम छोड़ बैठा। पिक्रिक एसिड की धोवन का पीला पानी मकान से लगातार बहने से पड़ोसियों को सन्देह न हो इसलिये उस में कुछ सोडा मिला कर कोई दूसरा रंग छोड़ दिया जाता था।

पिछले छः मास में कैलाशपति के व्यवहार और वेष-भूषा में काफी परिवर्तन आ गया था। इस से पहिले रूप-व्यवहार का वर्णन अपने दिल्ली के आरम्भिक दिनों में कर चुका हूँ। अब उस के बाल और चेहरा सदा चिकनाई से चमकते रहते थे। बाल खूब ढंग से कढ़े हुये और चेहरे से क्रीम की सुगन्ध आती रहती। खूब इस्त्री किया हुआ कमीज, बुर्राक महीन धोती और नयी चप्पल। चाल एसी कि सभी लोगों की निगाहें उसी की ओर लगी होने की चेतना हो। बंगाली बाबुओं की तरह धोती का छोर हाथ में थामे रहता। उस के प्रति आरम्भिक सहानुभूति गायब होकर कुछ दूसरी तरह की भावना होने लगी थी। अब चौथे संस्करण के लिये दोहराते समय सोचता हूँ, मेरी भावना की प्रतिक्रिया उस पर भी आवश्यक थी।

कैलाशपति के व्यवहार में इस परिवर्तन की ओर मैंने कई बार भैया का ध्यान दिलाया—"ठंडी को जवानी चढ़ रही है।"

कैलाशपति का उपनाम 'ठंडीप्रसाद' भी था। यह परिवर्तन भैया को भी दीखता था परन्तु उतना न खटकता जितना मुझे। कैलाशपति के व्यवहार में ऐसे परिवर्तन के कारण के प्रति मेरा अनुमान था कि अब उस के हाथों में दल का हजारों रुपया था और सैंकड़ों उसके हाथ से खर्च होता था। दल के लिये पचास या सौ रुपये का तेजाब खरीदते समय आठ आने की फेस क्रीम की शीशी अपने चेहरे के लिये खरीदते उसे झिझक न होती होगी। कैलाशपति

की इस आत्मरति और अपने आप को आकर्षक बनाने के प्रयत्नों का वास्तविक कारण हम उसकी गिरफ्तारी के बाद ही पता लग सका।

दिल्ली बम फैक्टरी मे रोहतक के कच्चे मकान की बम फैक्टरी की सी अवस्था न थी। मकान तो बढ़िया हवादार था ही इसके अतिरिक्त काम करते समय तेजाब के वाष्प का असर शरीर पर न हो, इस विचार से मसाला बनाने वाले लोगों के लिय खास वर्दिया बनवा ली गयी थी। यह वर्दी खूब मोटी जीन की थी। वर्दी का नमूना शायद मैने और वात्स्यायन ने सोचा था। उस समय 'बुशशर्ट' का रिवाज न था। यह भारत को, दूसरे महायुद्ध म यहा आये अमरीकनो की ही देन है परन्तु हम लोगो ने अपनी सुविधा के विचार से तभी अपनी वर्दी बुशशर्ट और पतलून बनायी थी। विमल, वात्स्यायन, प्रकाशवती और मै इसी पोशाक मे दिन भर काम करते थे।

दिल्ली मे हम लोगो ने रोहतक से दूने परिमाण पर काम शुरू किया अर्थात् एक साथ दो-दो स्टोव चलाते थ। मकान तो अच्छा था परन्तु वाष्प भी दूनी मात्रा मे उठते थ। सध्या तक हम लोगो का हाल बहुत खस्ता हो जाता था। पिक्रिक एसिड और गनकाटन बनान के बाद हम लोगो ने डाइनामाइट का मसाला और नाइट्रोग्लीसरीन भी बनायी। यह बहुत ही भयकर विस्फोटक पदार्थ थे। एक दिन तेजाब की बोतल मे, जिसने शायद बूद भर तेजाब रह गया था वात्स्यायन ने लगभग आधा औंस 'नाइट्रोग्लीसरीन' डाल दी। गनीमत यह थी कि कार्क ढीला था। कार्क जाकर छत से टकराया। कार्क सख्त होता तो बोतल फटकर हम लोग जख्मी हो जाते।

कैलाशपति टागो और ठेलो पर तेजाब लाता रहता था और हम लोग मसाला बनाते रहते थे। प्राय ही सध्या समय यह हाल हो जाता कि सिर दर्द के कारण हम म से कोई भी खिचड़ी बना लेने योग्य भी न रहता। हाथो मे पिक्रिक एसिड इतना रच गया था कि जिस चीज को हाथ लग जाते कड़वी हो जाती। ऐसी अवस्था मे हम लोग कभी 'मानसरोवर' या दूसरे होटल मे जाकर कुछ खा-पी लेने के लिये मजबूर हो जाते। कभी सिर दरद के कारण ताजी हवा मे जाने की इच्छा होती। विमल का एक बढ़िया टागे वाले से परिचय था। उस के टाग पर चार-पाच मील घूम लेते। तब मुझे यह मालूम न था कि जैसे मुझे कैलाशपति का नया व्यवहार अखर रहा था, उसे भी वैसे हम लोगो का यह व्यवहार अखर रहा था। हमारा होटल मे खाना और टागे की सैर उसे जघन्य ऐयाशी जान पड़ती थी। वह भैया से जाकर शिकायत करता कि मैं दल का रुपया बरबाद कर रहा हू। फैक्टरी मे ऐसा कोई खर्च न था जो मुझ अकेले के लिये ही होता हो परन्तु फैक्टरी की मुख्य जिम्मेवारी मुझ पर थी और समझा जाता था कि मैं ही अपने निर्देश से मजे के लिये रुपया

से उत्तर दिया।

"हो सकता है।" मैंने मुस्कराकर उत्तर दिया, मैं भी पूरी पुस्तक पढ़ लूं।" मेरी कल्पना साहित्यिक प्रसग म ही उलझी हुई थी।

"यह अच्छा हुआ कि तुम्हे रिसीव करने (लेने) के लिये स्टेशन पर भेजा गया साथी तुम्हे देख न सका और तुम यहा आ गये!"

मैंने अनुमान किया, तिवारी केन्द्रीय समिति से पहले मुझ से कुछ बात कर लना चाहता है। सम्भव है, भैया से इसका कुछ मतभेद हो। मैंने प्रश्न किया—"कहिये, अच्छा ही सयोग हुआ। बात क्या है?"

"बहुत ही अच्छा सयोग हुआ।" वीरभद्र न मेरी आखो म निगाह डाल कर सतोष का लम्बा श्वास लिया।

मैं उसकी बातो की प्रतीक्षा उत्सुकता से कर रहा था। वह बोला—"आज दिन भर यहा ही रहो, बाहर न जाना। रात की गाडी से लौटा जाओ!" वह मुझ से आखें मिलाये था।

"मैं तो केन्द्रीय समिति की बैठक के लिये आया हू!"

"केन्द्रीय समिति की बैठक हो चुकी।"

"क्या मतलब?" अत्यन्त विस्मय से मैंने पूछा।

वीरभद्र ने प्रश्न किया कि मेरे लिये सब से सुरक्षित स्थान कौन है? मैंने उत्तर दिया—"सभी स्थान एक जैसे है। जहा भी काम करना हो। दिल्ली म मेरा काम समाप्त हो चुका है। पजाब ही लौटना होगा।"

वीरभद्र न बताया कि पजाब मेरे लिय सुरक्षित नही होगा।

मेरा विस्मय बढा। अनुमान किया शायद वहा कुछ गिरफ्तारिया हो गयी हो जिनका पता मुझे समाचारपत्रो स न लगा हो और वीरभद्र ने अपन विशेष सूत्र से जान लिया हो—"पजाब म क्या हुआ?" मैंन उत्सुकता से प्रश्न किया।

वीरभद्र ने समझा कि मैं उसकी बात समझ नही पा रहा हू। मेरे दोनो हाथ अपने हाथो म लेकर निगाह मिलाये वह बोला—"वचन दो जो मैं कह रहा हू, किसी से न कहोगे।"

"पार्टी सीक्रेट (दल का रहस्य) किसी से कहने का प्रश्न ही क्या है? तुम्हे ऐसी आशका मुझ से हो कैसे सकती है?" असुविधा अनुभव कर मैंने प्रश्न किया।

"यह बात पार्टी सीक्रेट से भी अधिक सीक्रेट है!" वीरभद्र ने आग्रह किया, "जो मैं कह रहा हू, वह पार्टी के भी किसी आदमी को न बताने का वचन दो, आजाद को भी नही।"

"मैं पार्टी के हित के विरुद्ध कोई बात नही करूगा।" मैंने दृढता से कहा।

"मैं भी पार्टी के हित की ही बात कह रहा हू। मेरी-तुम्हारी कोई विशेष

मित्रता नही है। तीन-चार वार ही तुम्हे मिला हू लेकिन तुम्हारे विषय मे जो पहले सुना था और अब सुना है उसके आधार पर ही पार्टी के हित मे यह वचन चाहता हू।"

वीरभद्र की बात ठीक थी। वायसराय की ट्रेन के नीचे विस्फोट से पूर्व और पश्चात कानपुर मे केन्द्रीय कमेटी की बैठको मे मेरा उसका स्पष्ट मतभेद था।

"यदि पार्टी के हित मे यह सीक्रेट रखना आवश्यक है तो मैं वचन देता हू कि कभी किसी से यह बात न कहूगा।" मैने हाथ मिलाकर आश्वासन दिया।

"केन्द्रीय समिति की बैठक हो चुकी है।" वीरभद्र ने बताया, "और उसमे निर्णय हुआ है कि तुम्हे वहा बुलाकर शूट कर दिया जाय।"

"क्यो, किस बात के लिये ?" मुझ पर मानो नीले आकाश से बिजली गिर पड़ी।

"तुम्हारे साथियो का अनुमान है कि तुममे कायरता और विलासिता आ गयी है और तुम काम और खतरे से बचना चाहते हो। तुम किसी भी समय दल के साथ विश्वासघात कर सकते हो।"

घोर अपमान अनुभव हुआ। मैंने पूछा—"इस सन्देह का कारण और प्रमाण ? मेरा ऐसा क्या व्यवहार देखा गया है ? कौन यह बात कहता है ?"

"वह बात जाने दो।" वीरभद्र ने मेरा हाथ थामे समझाया, "मैं तुम्हे गोली मार देना पार्टी के हित मे नही समझता। तभी तुम्हारे हाथ मे 'अरक्षणीया' का 'अ' दबा कर मैंने कहा था 'रक्षणीया' होना चाहिये इसीलिये मैंने कहा था, अच्छा हुआ तुम यहा आ गये और खबरदार हो गये। किसी को यह पता लगने का अर्थ होगा कि मैंने केन्द्रीय समिति का निर्णय पूर्ण नही होने दिया, यह होगा कि मुझे भी गोली मार दी जाय।"

मैं बहुत विक्षिप्त हो गया। बार-बार आग्रह किया कि मुझे गोली मार दी जाने के निर्णय का कारण मुझे बताया जाये। यदि मेरा अपराध प्रमाणित होना है तो मुझे गोली मार दी जाये, मैं आपत्ति न करूगा।

वीरभद्र ने समझाया—"यह नही हो सकता। किसी भी आदमी को यह पता लग जाने पर कि उसे किसी कारण से गोली मार देने का विचार है, वह व्यक्ति पुलिस को सूचना देकर खुद बच सकता है और दूसरे सब साथियो को फसा दे सकता है।"

"इस का मतलब यह है कि मुझ पर यह सदेह किया जा रहा है कि मैं अब पुलिस के पास जा कर अपनी रक्षा करूगा और दूसरो को फसा दूगा ?"

"मुझे न ऐसा सन्देह है और न यह मेरा अनुमान है।" वीरभद्र ने मुस्करा कर उत्तर दिया, "परन्तु दूसरो का ऐसा अनुमान है। मुझे ऐसा सन्देह होता तो मैं यह बात तुम से कहता ही क्यो ? मुझे तो पूरा विश्वास है कि तुम ऐसा

नही कर सकते इसलिये मैंने तुमसे यह बात कह दी और अपने आप को तुम्हारे हाथो मे, दो तरफ से खतरे मे दे दिया है। जिस रोज भी तुम रहस्य खोल दोगे सब से अधिक खतरा मुझ पर होगा लेकिन मेरा यह विश्वास है कि यह पार्टी की भूल है इसलिये मैं पार्टी के हित के लिये यह खतरा सिर ले रहा हू।"

अपने प्रति ऐसे अपमानजनक सदेह की घृणा से मेरा मन जल उठा। बहुत देर अवाक ही बैठा रहा। अपना अपराध जानने के लिये कई बार फिर वीरभद्र से अनुरोध किया और कहा—"मुझे आजाद से मिला दो। मै उन लोगो से बात करना चाहता हू। वह मेरा अपराध बतायें और प्रमाणित करे। किसी को अपराध बताये बिना या अपराध प्रमाणित किये बिना सजा दे देना क्या न्याय है?"

वीरभद्र ने समझाया—"केन्द्रीय समिति तो निश्चय कर चुकी है कि तुम से कोई बात किये बिना तुम्हे गोली मार दी जाये। अब यदि तुम जाकर आजाद से इस विषय मे बात करोगे तो पहिला प्रश्न यही होगा कि तुम्हे रहस्य का पता कैसे लगा? इसका मतलब होगा मुझे गोली मार दिया जाना।"

चुप रह जाना पडा। कुछ देर सोच कर मैंने फिर प्रश्न किया—"ऐसी अवस्था मे मैं कर क्या सकता हू?"

वीरभद्र ने समझाया—"कम से कम अपनी और प्रकाशवती की रक्षा कर सकते हो। तुम्हें गोली मार देने के बाद दल उसे भी गोली मार देगा। यदि तुम अपनी रक्षा करते हुए अपने सूत्रो से कोई ऐसा एक्शन कर सको जिस से दल को यह मान लेना पड़े कि तुम विलासिता मे फस कर केवल अपनी जान ही नही बचाते फिर रहे हो या तुम से विश्वासघात की आशका नही की जानी चाहिये तो मुझे पूरा विश्वास है कि दल को अपना निर्णय बदल देना पडेगा और तुम पर अपराध लगाने वाले झूठे प्रमाणित हो जावेंगे। मुझे भरोसा है कि तुम दोनो मे से एक या दोनो ही बाते कर सकते हो इसलिये मैं दल के हित मे खतरा सिर ले रहा हू।"

मैंने जानना चाहा कि केन्द्रीय समिति मे कौन लोग मौजूद थे पजाब का प्रतिनिधि कौन था? पूर्व निश्चय से तो मैं ही पजाब का प्रतिनिधि था। वीरभद्र ने और कुछ बताने से इनकार कर दिया।

मैं मन और मस्तिष्क की विकट परेशानी मे दिन भर गुम-सुम पडा सोचता रहा कि मैं क्या कर सकता हू? अब तक केवल पुलिस का ही भय था। इन दिनो सब स्टेशनो, डाकखानो और सार्वजनिक स्थानो मे बहुत बडे-बडे इश्तहार लाहौर षडयन्त्र और वाइसराय की गाडी के नीचे विस्फोट करने वाले क्रांतिकारी फरारो की गिरफ्तारी के लिये लगे हुए थे। इन लोगो को गिरफ्तार करा देने के लिये बडे-बडे इनामो की घोषणा थी। इन इश्तहारो मे मेरा चित्र प्राय

नही कर सकते इसलिये मैंने तुमसे यह बात कह दी और अपने आप को तुम्हारे हाथो मे, दो तरफ से खतरे में दे दिया है। जिस रोज़ भी तुम रहस्य खोल दोगे सब से अधिक खतरा मुझ पर होगा लेकिन मेरा यह विश्वास है कि यह पार्टी की भूल है इसलिये मैं पार्टी के हित के लिये यह खतरा सिर ले रहा हूं।"

अपने प्रति ऐसे अपमानजनक सदेह की घृणा से मेरा मन जल उठा। बहुत देर अवाक ही बैठा रहा। अपना अपराध जानने के लिये कई बार फिर वीरभद्र से अनुरोध किया और कहा—"मुझे आज़ाद से मिला दो। मैं उन लोगो से बात करना चाहता हूं। वह मेरा अपराध बतायें और प्रमाणित करें। किसी को अपराध बताये बिना या अपराध प्रमाणित किये बिना सज़ा दे देना क्या न्याय है ?"

वीरभद्र ने समझाया—"केन्द्रीय समिति तो निश्चय कर चुकी है कि तुम से कोई बात किये बिना तुम्हे गोली मार दी जाये। अब यदि तुम जाकर आज़ाद से इस विषय में बात करोगे तो पहिला प्रश्न यही होगा कि तुम्हे रहस्य का पता कैसे लगा ? इसका मतलब होगा मुझे गोली मार दिया जाना।"

चुप रह जाना पड़ा। कुछ देर सोच कर मैंने फिर प्रश्न किया—"ऐसी अवस्था में मैं कर क्या सकता हूं ?"

वीरभद्र ने समझाया—"कम से कम अपनी और प्रकाशवती की रक्षा कर सकते हो। तुम्हे गोली मार देने के बाद दल उसे भी गोली मार देगा। यदि तुम अपनी रक्षा करते हुए अपने सूत्रो से कोई ऐसा एक्शन कर सको जिस से दल को यह मान लेना पड़े कि तुम विलासिता में फंस कर केवल अपनी जान नहीं बचाते फिर रहे हो या तुम से विश्वासघात की आशंका नहीं की जानी चाहिये तो मुझे पूरा विश्वास है कि दल को अपना निर्णय बदल देना पड़ेगा और तुम पर अपराध लगाने वाले झूठे प्रमाणित हो जायेंगे। मुझे भरोसा है कि तुम दोनो में से एक या दोनो ही बातें कर सकते हो इसलिये मैं दल के हित में खतरा सिर ले रहा हूं।"

मैंने जानना चाहा कि केन्द्रीय समिति में कौन लोग मौजूद थे, पंजाब का प्रतिनिधि कौन था ? पूर्व निश्चय से तो मैं ही पंजाब का प्रतिनिधि था। वीरभद्र ने और कुछ बताने से इनकार कर दिया।

मैं मन और मस्तिष्क की विकट परेशानी में दिन भर गुम सुम पड़ा रहा कि मैं क्या कर सकता हूं ? अब तक केवल पुलिस का ही भय था। उन दिनो सब स्टेशनो, डाकखानों और सार्वजनिक स्थानो में बहुत बड़े-बड़े इश्तहार लाहौर षडयन्त्र और वाइसराय की गाड़ी के नीचे विस्फोट करने वाले क्रान्तिकारी फरारो की गिरफ्तारी के लिये लगे हुए थे। इन लोगो को गिरफ्तार कराने के लिये बड़े-बड़े इनामो की घोषणा थी। इन इश्तहारो में मेरा चित्र

कैलाशपति ने साहस की कमी से या अवसर ठीक न समझ कर विमल को मेरा पीछा करके यह पता लेने का ही आर्डर दिया कि मैं कहां जा रहा हूं। विमल को अपना पीछा करते हुये मैं न देख पाया। प्रकाशवती को मैंने 'जामा मस्जिद' के समीप अपने एक पुराने सहपाठी और केवल मुझ से ही सम्बन्धित व्यक्ति वेदराज भल्ला के मकान पर पहुंचा दिया।

इस समय भी मैंने प्रकाशवती को उन्हें फैक्टरी से इस प्रकार लाकर नयी जगह रख देने का कारण या अपने विरुद्ध दल के निर्णय की बात न बतायी। मेरा अभिप्राय उन्हें घबराहट और परेशानी से बचाये रख कर परिस्थिति का उपाय करना था। उस समय जैसे एक्शन की योजना मैंने सोची थी वह ऐसी न थी कि वे उस में भाग ले सकतीं। मैं उसी दिन संध्या लाहौर के लिये चल दिया।

बहुत सा पिक्रिक एसिड, नाइट्रोग्लीसरीन आदि चीज़ें सुरक्षित रूप से लाहौर ले जाने के लिये मैंने वात्स्यायन को भी साथ चलने के लिये कहा। उस समय मुझे मालूम न था कि मुझे शूट कर देने का निर्णय उसे मेरे कानपुर से लौटने के पहले ही कैलाशपति द्वारा मालूम हो चुका था। यह मालूम हो जाने पर भी वात्स्यायन ने कैलाशपति के बजाय मेरा ही साथ दिया। या वह दल के लिये मेरा भेद जान रहना चाहता था। वात्स्यायन को सन्देह से परे रखने के लिये उसे साहब का वेश पहना कर उसके लिये सकण्ड क्लास (आधुनिक फर्स्ट क्लास) का टिकट ले लिया। उस के सूटकेस में सब सामान रख दिया। मैं स्वयं उसका चपरासी बन कर साथ की सर्वेन्टस की गाड़ी में बैठा। भयंकर विस्फोट पदार्थों से भरे सूटकेस को स्टेशन पर मैंने स्वयं ही उठाया और झटके-धक्के से सुरक्षित जगह सेकण्ड क्लास की गाड़ी में रख दिया। लाहौर पहुंच कर वात्स्यायन के मन में जो रहा हो परन्तु उस ने सब सामान मुझे सौंप दिया। इसी सामान के भरोसे मैं कुछ न कुछ कर सकने की आशा बांधे था।

लाहौर पहुंच कर मैंने विश्वस्त साथियों से मिल कर तुरन्त ही किसी एक्शन की योजना को पूर्ण कर सकने का प्रयत्न आरम्भ किया। लाहौर आकर देखा कि साथी दो उपदलों में बंट चुके थे। यह बंटवारा किसी राजनैतिक सिद्धान्त, कार्यक्रम अथवा संगठन के रूप में नहीं था केवल साथियों की शिक्षा, आर्थिक स्थिति और सामाजिक परिस्थितियों से स्वाभाविक रूप से हो गया था। उदाहरणतः इन्द्रपाल और मागराम द्वारा मुझसे परिचित गुरुदासिंह, जहांगीरीलाल आदि साथी, स्वयं अपनी जीविका कमाने वाले निम्न मध्यम श्रेणी के और साधारण शिक्षा (केवल हिन्दी-उर्दू) पाये हुये लोग थे। दूसरी ओर वात्स्यायन, देवराज सेठी, केवलकृष्ण, सुखदेवराज, दुर्गादास खन्ना और धन्वन्तरी आदि मध्यम श्रेणी के युनिवर्सिटी में ऊंची कक्षाओं से आये हुये विद्यार्थी थे जो प्रायः अपने

क्योकि प्रकाशवती को वही छोड गया था। अभी सूर्योदय न हुआ था। यह निश्चय न था कि केन्द्रीय समिति का निर्णय अभी तक फैक्टरी के लोगो को मालूम हुआ है या नही। फैक्टरी से प्रकाशवती को ले जाना आवश्यक था। मैं दोनो ही तरह की परिस्थिति के लिये तैयार था। यदि साथी मेरा विरोध किये बिना प्रकाशवती को ले जाने दें या मेरा अपराध बता कर बात करना चाहे तो बिना झगडे-झझट के बात करके प्रकाशवती को सकट से बाहिर ले जाऊ और यदि कोई मुझ पर हथियार चला दे तो हथियार का इस्तेमाल करना ही होगा। कैलाशपति का उस समय फैक्टरी म होना निश्चित था।

किवाड खटखटाने पर दरवाजा गिरिवरसिंह ने खोला। उसने जैसे मुस्करा-कर बात की उस से अनुमान हुआ कि फैक्टरी म आशक्ति होन की आवश्यकता नही। विमल और वात्स्यायन फैक्टरी म ही थे। मुझे याद है कि वात्स्यायन मुझे देख कर मौन रह गया था। उस मौन का विशेष अर्थ मै न समझा। उसका कभी-कभी मौन रहना साधारण बात थी। भीतर जाकर प्रकाशवती को तुरन्त अपना कपडा-लत्ता और तैयार पिक्रिक एसिड आदि सभाल कर साथ चलने के लिये कहा।

प्रकाशजी ने मेरी बात पर कोई विस्मय प्रकट न किया क्योकि उस समय के जीवन मे इस तरह स्थान बदल लेना साधारण सी बात थी। मैंने आशका या घबराहट पैदा करने वाली कोई बात या व्यवहार भी न किया।

विमल ने आकर पूछा—"क्यो ? कहा जा रहे हो, क्या बात है ?"

विमल को उत्तर दिया—"जान पडता है फैक्टरी पर पुलिस को सदेह हो गया है। तुम लोगो ने कोई बेपरवाही की होगी। मैं कमल को तुरन्त दूसरी जगह पहुचा रहा हू। तुम लोग भी प्रबन्ध करो।"

इसी समय कैलाशपति आ पहुचा। उस के चेहरे पर विस्मय स्पष्ट था। उसे मैंने फटकार कर प्रश्न किया—"यह है तुम्हारे कानपुर पहुचने के वायदे का हाल ?'

वह मुझे जीता-जागता सामने देख कर घबराहट मे कुछ उत्तर न दे सका। मैंने उस के उत्तर की प्रतीक्षा भी न की।

बाद मे मुझे विमल से मालूम हुआ कि उसने तुरन्त कैलाशपति से फैक्टरी पर हो गये सन्देह की बात कह कर आशका प्रकट की तो कैलाशपति ने उसे उत्तर दिया था—"वह बात बना रहा है। केन्द्रीय समिति ने इसे शूट कर देने का निश्चय किया है उसी के लिये उसे कानपुर बुलाया गया था। वह किसी तरह बच कर दिल्ली भाग आया है। अब कमला को लेकर भागा जा रहा है।"

विमल ने कैलाशपति स कहा—"अगर दल का ऐसा निर्णय है तो तुम यहा इन्चार्ज हो, मुझे आर्डर और रिवाल्वर दो। मैं इसे अभी शूट कर देता हू।"

कैलाशपति ने साहस की कमी से या अवसर ठीक न समझ कर विमल को मेरा पीछा करके यह पता लेने का ही आर्डर दिया कि मैं कहां जा रहा हूं। विमल को अपना पीछा करते हुये मैं न देख पाया। प्रकाशवती को मैंने 'जामा मस्जिद' के समीप अपने एक पुराने सहपाठी और केवल मुझ से ही सम्बन्धित व्यक्ति वेदराज भल्ला के मकान पर पहुंचा दिया।

इस समय भी मैंने प्रकाशवती को उन्हें फैक्टरी से इस प्रकार लाकर नयी जगह रख देने का कारण या अपने विरुद्ध दल के निर्णय की बात न बतायी। मेरा अभिप्राय उन्हें घबराहट और परेशानी से बचाये रख कर परिस्थिति का उपाय करना था। उस समय जैसे एक्शन की योजना मैंने सोची थी वह ऐसी न थी कि वे उस में भाग ले सकतीं। मैं उसी दिन सध्या लाहौर के लिये चल दिया।

बहुत सा पिक्रिक एसिड, नाइट्रोग्लीसरीन आदि चीज़ें सुरक्षित रूप से लाहौर ले जाने के लिये मैंने वात्स्यायन को भी साथ चलने के लिये कहा। उस समय मुझे मालूम न था कि मुझे शूट कर देने का निर्णय उसे मेरे कानपुर से लौटने के पहले ही कैलाशपति द्वारा मालूम हो चुका था। यह मालूम हो जाने पर भी वात्स्यायन ने कैलाशपति के बजाय मेरा ही साथ दिया। या वह दल के लिये मेरा भेद जाने रहना चाहता था। वात्स्यायन को सन्देह से परे रखने के लिये उसे साहब का वेश पहना कर उसके लिये सेकण्ड क्लास (आधुनिक फर्स्ट क्लास) का टिकट ले लिया। उस के सूटकेस में सब सामान रख दिया। मैं स्वयं उसका चपरासी बन कर साथ की सर्वेण्टस की गाडी में बैठा। भयंकर विस्फोट पदार्थों से भरे सूटकेस को स्टेशन पर मैंने स्वयं ही उठाया और झटके-धक्के से सुरक्षित जगह सेकण्ड क्लास की गाडी में रख दिया। लाहौर पहुंच कर वात्स्यायन के मन में जो रहा हो परन्तु उस ने सब सामान मुझे सौंप दिया। इसी सामान के भरोसे मैं कुछ न कुछ कर सकने की आशा बांधे था।

लाहौर पहुंच कर मैंने विश्वस्त साथियों से मिल कर तुरन्त ही किसी एक्शन की योजना को पूर्ण कर सकने का प्रयत्न आरम्भ किया। लाहौर आकर देखा कि साथी दो उपदलों में बट चुके थे। यह बटवारा किसी राजनैतिक सिद्धान्त, कार्यक्रम अथवा सगठन के रूप में नहीं था केवल साथियों की शिक्षा, आर्थिक स्थिति और सामाजिक परिस्थितियों से स्वाभाविक रूप में हो गया था। उदाहरणत इन्द्रपाल और भागराम द्वारा मुझसे परिचित गुलाबसिंह, जहांगीरीलाल आदि साथी, स्वयं अपनी जीविका कमाने वाले निम्न मध्यम श्रेणी के और साधारण शिक्षा (केवल हिन्दी-उर्दू) पाये हुये लोग थे। दूसरी ओर वात्स्यायन, देवराज सेठी, केवलकृष्ण, सुखदेवराज, दुर्गादास खन्ना और धन्वन्तरी आदि मध्यम श्रेणी के यूनिवर्सिटी में ऊंची कक्षाओं से आये हुये विद्यार्थी थे जो प्राय अपने

क्योंकि प्रकाशवती को वही छोड़ गया था। अभी सूर्योदय न हुआ था। यह निश्चय न था कि केन्द्रीय समिति का निर्णय अभी तक फैक्टरी के लोगो को मालूम हुआ है या नही। फैक्टरी से प्रकाशवती को ले जाना आवश्यक था। मैं दोनो ही तरह की परिस्थिति के लिये तैयार था। यदि साथी मेरा विरोध किये बिना प्रकाशवती को ले जाने दें या मेरा अपराध बता कर बात करना चाहे तो बिना झगडे-झझट के बात करके प्रकाशवती को सकट से बाहिर ले जाऊ और यदि कोई मुझ पर हथियार चला दे तो हथियार का इस्तेमाल करना ही होगा। कैलाशपति का उस समय फैक्टरी मे होना निश्चित था।

किवाड खटखटाने पर दरवाजा गिरिवरसिंह ने खोला। उसने जैसे मुस्करा-कर बात की उस से अनुमान हुआ कि फैक्टरी मे आशकित होने की आवश्यकता नही। विमल और वात्स्यायन फैक्टरी मे ही थे। मुझे याद है कि वात्स्यायन मुझे देख कर मौन रह गया था। उस मौन का विशेष अर्थ मैं न समझा। उसका कभी-कभी मौन रहना साधारण बात थी। भीतर जाकर प्रकाशवती को तुरन्त अपना कपडा-लत्ता और तैयार पिक्रिक एसिड आदि सभाल कर साथ चलने के लिये कहा।

प्रकाशजी ने मेरी बात पर कोई विस्मय प्रकट न किया क्योंकि उस समय के जीवन मे इस तरह स्थान बदल लेना साधारण सी बात थी। मैंने आशका या घबराहट पैदा करने वाली कोई बात या व्यवहार भी न किया।

विमल ने आकर पूछा—"क्यों ? कहा जा रहे हो, क्या बात है ?"

विमल को उत्तर दिया—"जान पडता है फैक्टरी पर पुलिस को सदेह हो गया है। तुम लोगो ने कोई बेपरवाही की होगी। मैं कमल को तुरन्त दूसरी जगह पहुचा रहा हू। तुम लोग भी प्रबन्ध करो।"

इसी समय कैलाशपति आ पहुचा। उस के चेहरे पर विस्मय स्पष्ट था। उसे मैंने फटकार कर प्रश्न किया—"यह है तुम्हारे कानपुर पहुचने के वायदे का हाल ?'

वह मुझे जीता-जागता सामने देख कर घबराहट मे कुछ उत्तर न दे सका। मैंने उस के उत्तर की प्रतीक्षा भी न की।

बाद मे मुझे विमल से मालूम हुआ कि उसने तुरन्त कैलाशपति से फैक्टरी पर हो गये सन्देह की बात कह कर आशका प्रकट की तो कैलाशपति ने उसे उत्तर दिया था—"वह बात बना रहा है। केन्द्रीय समिति ने इसे शूट कर देने का निश्चय किया है उसी के लिये उसे कानपुर बुलाया गया था। वह किसी तरह बच करे दिल्ली भाग आया है। अब कमला को लेकर भागा जा रहा है।"

विमल ने कैलाशपति से कहा—"अगर दल का ऐसा निर्णय है तो तुम यहा के इन्चार्ज हो, मुझे आर्डर और रिवाल्वर दो। मैं इसे अभी शूट कर देता हू।"

कैलाशपति ने साहस की कमी से या अपनी ठीक न समझ कर विमल को मेरा पीछा करने यह पता लेने का ही आर्डर दिया कि मैं कहां जा रहा हूं। विमल को अपना पीछा करते हुये मैं न देख पाया। प्रकाशवती को मैंने 'जामा मस्जिद' के समीप अपने एक पुराने सहपाठी और केवल मुझ से ही सम्बन्धित व्यक्ति वेदराज भल्ला के मकान पर पहुंचा दिया।

इस समय भी मैंने प्रकाशवती को उन्हें फैक्टरी से इस प्रकार लाकर नयी जगह रख देने का कारण या अपने विरुद्ध दल के निर्णय की बात न बतायी। मेरा अभिप्राय उन्हें घबराहट और परेशानी में बचाये रख कर परिस्थिति का उपाय करना था। उस समय जैसे एक्शन की योजना मैंने सोची थी वह ऐसी न थी कि वे उस में भाग ले सकती। मैं उसी दिन संध्या लाहौर के लिये चल दिया।

बहुत सा पिक्रिक ऐसिड, नाइट्रोग्लीसरीन आदि चीजें सुरक्षित रूप से लाहौर ले जाने के लिये मैंने वात्स्यायन को भी साथ चलने के लिये कहा। उस समय मुझे मालूम न था कि मुझे शूट कर देने का निर्णय उसे मेरे कानपुर से लौटने के पहले ही कैलाशपति द्वारा मालूम हो चुका था। यह मालूम हो जाने पर भी वात्स्यायन ने कैलाशपति के बजाय मेरा ही साथ दिया। या वह दल के लिए मेरा भेद जाने रहना चाहता था। वात्स्यायन को सन्देह से परे रखने के लिये उसे साहब का वेश पहना कर उसके लिये सेकण्ड क्लास (आधुनिक फर्स्ट क्लास) का टिकट ले लिया। उस के सूटकेस में सब सामान रख दिया। मैं स्वयं उसका चपरासी बन कर साथ की सर्वेण्टस की गाड़ी में बैठा। भयंकर विस्फोट पदार्थों से भरे सूटकेस को स्टेशन पर मैंने स्वयं ही उठाया और झटके-धक्के से सुरक्षित जगह सेकण्ड क्लास की गाड़ी में रख दिया। लाहौर पहुंच कर वात्स्यायन के मन में जो रहा हो परन्तु उस ने सब सामान मुझे सौंप दिया। इसी सामान के भरोसे मैं कुछ न कुछ कर सकने की आशा बांधे था।

लाहौर पहुंच कर मैंने विश्वस्त साथियों से मिल कर तुरन्त ही किसी एक्शन की योजना को पूर्ण कर सकने का प्रयत्न आरम्भ किया। लाहौर आकर देखा कि साथी दो उपदलों में बंट चुके थे। यह बंटवारा किसी राजनैतिक सिद्धान्त, कार्यक्रम अथवा संगठन के रूप में नहीं था केवल साथियों की शिक्षा, आर्थिक स्थिति और सामाजिक परिस्थितियों से स्वाभाविक रूप से हो गया था। उदाहरणतः इन्द्रपाल और भागराम द्वारा मुझसे परिचित गुलाबसिंह, जहांगीरी-लाल आदि साथी, स्वयं अपनी जीविका कमाने वाले निम्न मध्यम श्रेणी के और साधारण शिक्षा (केवल हिन्दी-उर्दू) पाये हुये लोग थे। दूसरी ओर वात्स्यायन, देवराज सेठी, केवलकृष्ण, सुखदेवराज, दुर्गादास खन्ना और धन्वन्तरी आदि मध्यम श्रेणी के युनिवर्सिटी में ऊंची कक्षाओं से आये हुये विद्यार्थी थे जो प्रायः अपने

धन्वन्तरी ने मुझे इन्द्रपाल की मार्फत पी फटने के समय, डी० ए० वी० कालिज बोर्डिंग-हाउस मे बुलाया था। पंजाब मे गरमी की छुट्टिया यू० पी० की अपेक्षा पिछड़ कर होती है और स्कूल कालिज विलम्ब से ही खुलते भी हैं। इस बोर्डिंग मे प्राय ऐसे विद्यार्थी रहते थे जिन्हे कालिजों के बोर्डिंगो मे स्थान न मिलता था या जो विशेषत से रहना चाहते थे या निजी तौर पर परीक्षाओ की तैयारी कर रहे थे। यह मकान चारो ओर कमरो से घिरा, बड़ा पर्देदार मकान था, जिसे बोर्डिंग बना लिया गया था। छुट्टियो के कारण यह मकान और पास-पड़ोस भी बिलकुल सूना पड़ा था। जब हम लोग इस मकान मे पहुचे, धन्वन्तरी आंगन के बीचोबीच खाट पर बैठा था। चारो ओर के कमरे सूने थे परन्तु दरवाजों की आड़ मे दो-तीन व्यक्तियों के होने की पूरी आशंका थी। मुझे दो साथियो के साथ आता देख कर धन्वन्तरी की साधारणत बनी रहने वाली मुस्कान लोप होकर चेहरा क्रोध से गम्भीर हो गया। उसके क्रोध का कारण समझ कर भी मैंने मुस्कराकर आत्मीयता के स्वर मे पूछा—"कहो भई, तुमसे मिलने के लिये कब से परेशान हू।"

"मैंने तुम्हे अकेले बुलाया था," रूखे अप्रसन्न ढंग से वह बोला, "यह लोग क्यो आये है?"

"हम लोग शहर से एक साथ आ रहे थे। ऐसी क्या बात है, आओ हम दोनो उधर बात कर लें।"

धन्वन्तरी इसके लिये तैयार न हुआ। जो वह चाहता था उसके लिये मैं कैसे तैयार हो जाता?

अब तक मुझे भरोसा था कि सुखदेवराज को छोड़ कर जिस किसी से भी मुझे बात करने का अवसर मिलेगा, मैं अपनी बात समझा कर आजाद तक अपना सन्देश पहुचा सकूगा। सबसे अधिक आशा धन्वन्तरी से ही थी परन्तु वह बात सुनने के लिये भी तैयार न हुआ। इस घटना से मैं निराश हो गया। अब तक मैंने दिल्ली और लाहौर मे इन्द्रपाल के अतिरिक्त अपने विरुद्ध निर्णय की बात किसी को न बतायी थी। दल के साथियो का विचार था कि कानपुर स्टेशन पर मुझे लेने के लिये भेजे गये साथियो की बेपरवाही के कारण मैं झुझला कर दिल्ली लौट गया और अनुशासन की चिन्ता न कर आवारागर्दी कर रहा हू।

धन्वन्तरी के मुझे अकेला बुलाने पर भी मै दो आदमी साथ ले गया, इसे धन्वन्तरी ने मेरी ओर से अनुशासन की अवज्ञा समझा या खतरा भांप लिया, इस विषय मे उस से कभी बात नही हुई। उस समय दल से प्राप्त निर्णय के अनुसार मुझे गोली न मार सकने की विफलता उन लोगो के लिये अपमान का कारण बनी हुई थी और वे लोग अपने विचार मे, वह मुझे दल को हानि पहुचा

सकने का अवसर देने से पहले ही, गोली मार देना अपना कर्तव्य समझे हुये थे।

धन्वन्तरी अथवा दल से सहयोग और सहायता मिलना सम्भव न देखकर मैं पर्याप्त रिवाल्वर-पिस्तौलों और बम के खोलो के बिना ही इन्द्रपाल, भागराम के साथ कोई बडा एक्शन कर डालने की योजना बनाने लगा। दिल्ली से साथ लाया हुआ पिक्रिक एसिड और नाइट्रोग्लीसरीन आदि विस्फोटक पदार्थ मेरे पास काफी मात्रा मे थे। हमने मालरोड के समीप पुलिस लाइन की बारकें उडा देने की तदबीर सोचनी आरम्भ की। इन्द्रपाल और भागराम को मैंने चिकें या सिरकी बना कर बेचने वाले लोगो के वेश मे वहाँ घूम-घूम कर भेद लेने की सलाह दी। साधनो के अभाव मे हम लोगो ने यहा ऐसे बम लगा देने की बात भी सोची जो खास स्थानो पर रख दिये जाने के बाद निश्चित समय पर आकस्मिक रूप से फट जाते। हमारी इस उतावली योजना की मूल प्रेरणा यथा सम्भव शीघ्र कुछ करके धन्वन्तरी, सुखदेवराज के समर्थक साथियो को अपनी अपेक्षा अयोग्य और अकर्मण्य प्रमाणित कर देने की इच्छा थी।

आतिशीचक्कर

बहावलपुर रोड पर दुर्घटना के बाद लाहौर छोडते समय मैं भैया से सलाह किये बिना इन्द्रपाल से कह गया था कि तुमने दल मे काफी दिन जिम्मेवारी से काम किया है। इस समय मेरा यहा रहना सम्भव नही। मेरी अनुपस्थिति मे तुम पजाब के सगठनकर्ता की स्थिति से काम करते रहना।

इन्द्रपाल ने अपनी समझ के अनुसार उत्साह से अपने क्षेत्र मे काम आरम्भ कर दिया था। उसने अपने छोटे सगठन का नाम 'आतिशीचक्कर' अग्नि चक्कर रख लिया था। उस के प्रयत्न-स्वरूप १९ जुलाई १९३० को पजाब मे छ स्थानो-लाहौर, अमृतसर, रावलपिण्डी, शेखूपुरा, गुजरावाला, लायलपुर मे बम विस्फोट किये गये थे।

इन्द्रपाल ने यह सब काम स्वतन्त्र स्थिति मे किया था। उस के साथ देने वाले जहागीरीलाल, कुन्दनलाल, भागराम, जयप्रकाश, दयानतराय, हसराज आदि थे। शिक्षित समझे जाने वाले लोगो का उस से कोई सम्पर्क न था। धन्वन्तरी और सुखदेवराज के अपने आप को दल का सगठनकर्ता बताने पर इन्द्रपाल को अच्छा न लग रहा था। वह मेरे अतिरिक्त किसी दूसरे का नेतृत्व और अधिकार मानने के लिये तैयार न था।

इन्द्रपाल के पास पिक्रिक एसिड या बमो के खोल नही थे। धन्वन्तरी से कोई सहायता न पाकर उसने गुलाबसिंह और हसराज की सहायता से आतिशबाजी मे काम आने वाले मसालो से सिगरेट के डिब्बो मे यह बम बना लिये-

जीना है तो मरना सीखो !

"दुश्मन का मुकाबिला करने के लिये हमको जंग ही करनी पड़ेगी। बेकसूर और मासूम नन्ही दुनिया का खूनरवार, बाहथियार दुश्मन के हाथों खून गिरवाना और सैंकड़ों जिन्दगियों को तबाह कर देना जंग नहीं कहलाता। यह खुदकुशी है। पब्लिक शान्तमयी सत्याग्रह के गुमराहकुन(१) उसूलों का काफी तजरुबा कर चुकी है। हजारों हमवतनों के जेल में सड़ने, करोड़ों रुपये के फिजूल खर्च और सैंकड़ों जिन्दगियों के भेंट चढ़ा चुकने के बाद शान्तमयी सत्याग्रह की लड़ाई में हमको सिर्फ नाकामयाबी ही हासिल हुई है। हमारी पिछली पन्द्रह बरस की तवारीख(२) इस बात की गवाह है। बेकसूर और मजलूम(३) लोगों का खून बहाने से बेइनसाफी और जुल्म का खात्मा नहीं हो सकता। खुद अपना ही खून बहाकर और अपनी ताकत घटाकर हम को आजादी हासिल न होगी। आजादी हासिल करने के लिये गुलामी की जंजीरों को तोड़ना निहायत जरूरी है जुल्म और बेइनसाफी पर मबनी (४) गैर-हुकूमत को उखाड़ फेंकना निहायत जरूरी है।

"जंग में फतह हासिल करने के लिये हमको एक ताकतवर फौज की सूरत में मुनज्जम(५)होकर दुश्मन का मुकाबिला करना होगा। बगैर निजाम के इस बिखरी हुई हालत में दुश्मन का मुकाबिला करने से कोई फायदा नहीं है। इसमें हमारा अपना ही नुकसान है। पेशावर में करीब ढाई सौ हिन्दुस्तानियों का खून गिराकर हम क्या मिला ? हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी ने चटगाँव की मिसाल से आप को रास्ता दिखा दिया है। मुनासिब तौर पर मुसल्ला(६) और मुनज्जम होकर दुश्मन का मुकाबिला कितनी अच्छी तरह किया जा सकता है, यह नुमायां(७) हो चुका है।

"गैरमुल्की हुकूमत का नुमाइन्दा वाइसराय हिन्दुस्तान की हमदर्दी का ढोंग रच कर अब अपनी असली सूरत दिखा रहा है। आपकी जवांमर्दी और हिम्मत के इम्तहान का वक्त अब आ गया है। दुश्मन को खबर देकर उस पर वार करना जंग के उसूलों के खिलाफ है। जगह-जगह पर फौजी शक्ल में मुनज्जम होकर तैयार होना होगा। ताकत और हथियारों को इकट्ठा करने के काम में हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसियेशन (H S R A) आपको फतह के रास्ते पर ले जायगा।

"यह जंग फैसलाकुन(८) होगी। आजादी या मौत !"

---

१ भटकाने वाला, २ इतिहास, ३ निर्दोष और पीड़ित, ४ नींव पर बनी, ५ संगठित ६ सशस्त्र, ७ स्पष्ट ८ निर्णयात्मक

थे। बमो के निश्चित समय पर स्वय चल जाने की योजना बना लेने मे हंसराज ने उसे सहायता दी थी। योजना बहुत साधारण थी। मामबत्ती की जड म आग पकडने वाले मसाले मे सनी रस्सी चिपकाकर बम से लगा दी गयी थी। मोमबत्ती को जला कर छोड दिया गया। पाच-छ घन्टे म मोमबत्ती समाप्त होने पर मसाला लगी रस्सी ने आग पकड ली और आग बम तक पहुच कर बमो का विस्फोट हो गया। इन बमो के धडाके से जब पुलिस ने जाकर एम घटनास्थल पर तलाशी ली तो वहा रक्खी चीजो म छिपे हुये बम हिलने पर फट गये। इस घटना म एक जगह सब-इन्सपेक्टर और दो जगह सिपाही मारे गये।

इन्द्रपाल ने यह विस्फोट प्रवल जनता म पैदा हो जाने वाली घबराहट का तमाशा देखने के लिये ही नही किया था। वह सरकार पर आक्रमण और सर्व साधारण म सम्पर्क स्थापित करने के महत्व को भी समझता था। अपने बहुत परिमित क्षेत्र म केवल अपने साथियो के परिवारो का पेट काटकर जमा किये रुपये से इन लोगो ने उर्दू म छपायी करने के लिये एक हैन्ड प्रेस भी खरीद लिया था।

विस्फोट सुबह सुबह हुआ था और उससे पहली रात इन लोगो ने अपना घोषणा पत्र भी बाट दिया था। दूसरे लाहौर षडयन्त्र के मुकद्दमे म यह घोषणा पत्र पुलिस ने ब्रिटिश सम्राट के विरुद्ध युद्ध घोषणा के षडयन्त्र के प्रमाण स्वरूप पेश किया था। गवाही की इस वस्तु का नम्बर E X I P A, E था। घोषणा पत्र उर्दू म था। उसकी हिन्दी प्रतिलिपि इस प्रकार है —

हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसियेशन

"भारत माता की इज्जत के रखने वाले, आजादी के अलमबरदार(१) पंजाबियो! गैरमुल्की हुकूमत का बोझ और गुलामी के कलंक का टीका अब ज्यादा देर तक बरदाश्त करना नामुमकिन है। मादरेहिन्द के पुरतवस्सुम(२) चेहरे पर लगे हुये कलंक को तुमने अपने बेशकीमती खून को पानी की तरह बहा कर धो डालने का पाक और मुसम्मिम(३) इरादा कर लिया है। तुम जिन्दगी की बाजी लगा कर मैदाने जंग मे उतर आये हो। जो तुम्हारे इस पाक इरादे म दखलअन्दाज होता है, वह गद्दार और काफिर है। कुदरत की हुकूमत म हर एक जानदार खुदमुख्तयार है। दुनिया के मैदानेजंग मे वही लोग जिन्दा रह सकते है जो अपनी जिन्दगी की बाजी लगाकर, जिन्दा रहने के हकूक हासिल कर लेते है।

---

१ झडा उठाने वाले, २ सुन्दर, ३ पवित्र और दृढ

जीना है तो मरना सीखो !

"दुश्मन का मुकाबिला करने के लिये हमको जंग ही करनी पड़ेगी। बेकसूर और मासूम नन्ही दुनिया का खूं ख्वार, बाहथियार दुश्मन के हाथों खून गिरवाना और सैंकड़ों जिन्दगियों को तबाह कर देना जंग नहीं कहलाता। यह खुदकुशी है। पब्लिक शान्तमयी सत्याग्रह के गुमराहकुन(१) उसूलों का काफी तजरुबा कर चुकी है। हजारों हमवतनों के जेल में सड़ने, करोड़ों रुपये के फिजूल खर्च और सैंकड़ों जिन्दगियों के भेंट चढ़ा चुकने के बाद शान्तमयी सत्याग्रह की लड़ाई में हमको सिर्फ नाकामयाबी ही हासिल हुई है। हमारी पिछली पन्द्रह बरस की तवारीख(२) इस बात की गवाह है। बेकसूर और मजलूम(३) लोगों का खून बहाने से बेइनसाफी और जुल्म का खातमा नहीं हो सकता। खुद अपना ही खून बहाकर और अपनी ताकत घटाकर हम को आजादी हासिल न होगी। आजादी हासिल करने के लिये गुलामी की जंजीरों को तोड़ना निहायत जरूरी है जुल्म और बेइनसाफी पर मबनी (४) गैर-हुकूमत को उखाड़ फेंकना निहायत जरूरी है।

"जंग में फतह हासिल करने के लिये हमको एक ताकतवर फौज की सूरत में मुनज्जम(५)होकर दुश्मन का मुकाबिला करना होगा। बगैर निजाम के इस बिखरी हुई हालत में दुश्मन का मुकाबिला करने से कोई फायदा नहीं है। इसमें हमारा अपना ही नुकसान है। पेशावर में करीब ढाई सौ हिन्दुस्तानियों का खून गिराकर हम क्या मिला ? हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी ने चटगाँव की मिसाल से आप को रास्ता दिखा दिया है। मुनासिब तौर पर मुसल्ला(६) और मुनज्जम होकर दुश्मन का मुकाबिला कितनी अच्छी तरह किया जा सकता है, यह नुमाया(७) हो चुका है।

'गैरमुल्की हुकूमत का नुमाइन्दा वाइसराय हिन्दुस्तान की हमदर्दी का ढोंग रच कर अब अपनी असली सूरत दिखा रहा है। आपकी जवामर्दी और हिम्मत के इम्तहान का वक्त अब आ गया है। दुश्मन को खबर देकर उस पर वार करना जंग के उसूलों के खिलाफ है। जगह-जगह पर फौजी शक्ल में मुनज्जम होकर तैयार होना होगा। ताकत और हथियारों को इकट्ठा करने के काम में हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसियेशन (H S R A) आपको फतह के रास्ते पर ले जायगा।

"यह जंग फैसलाकुन(८) होगी। आजादी या मौत।"

---

१ भटकाने वाले, २ इतिहास, ३ निर्दोष और पीड़ित, ४ नींव पर बनी, ५ संगठित ६ सशस्त्र, ७ स्पष्ट ८ निर्णयात्मक

इन्द्रपाल और उस के साथियों द्वारा प्रकाशित घोषणा में विदेशी सरकार के विरुद्ध क्रांति के लिये दृढ़ निश्चय और बलिदान की भावना की कमी नहीं है परन्तु फिलासफी आफ दी बम की तुलना में यह निश्चय ही भिन्न स्तर की शिक्षा और राजनैतिक परिस्थिति का ज्ञान रखने वाले लोगों की लिखी हुई चीज़ है। यह इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि धन्वन्तरी और सुखदेवराज इन लोगों का मार्ग निर्देशन नहीं कर रहे थे।

हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन ऐसोसियेशन के नाम पर बलिदान हो जाने के लिये तैयार लोगों में परस्पर सहयोग की कमी के दोनों ही कारण थे। दल की ओर से नियत संगठनकर्ता का इन लोगों की उपेक्षा करना और इन लोगों का उस पर अविश्वास। संगठन के शैथिल्य के कारण अपने इन साथियों का बलिदान मुझे व्यर्थ ही जचा।

इन्द्रपाल का इस घटना से स्वयं भी संतोष न हुआ था। वह अब कोई अच्छा एक्शन करने की फिक्र कर रहा था। हंसराज ने इन बमों को स्वयं चलाने का तरीका तो बता दिया परन्तु स्वयं अलग हो गया था। उस ने फिर विश्वास दिलाया कि कुछ दिन में मृच्छा गैस बना देगा। इन्द्रपाल ने अपने गरीब साथियों में मांग तांग कर हंसराज को इस काम के खर्च के लिये लगभग दो सौ रुपया भी दिया था।

हंसराज गैस बना देने में हीले बहाने करता रहा। इन्द्रपाल बहुत चिढ़ गया था। यह सोच कर कि हंसराज आशंका में फंसने के भय में जान बूझ कर काम नहीं कर रहा है उसने हंसराज को मजबूर कर देना चाहा।

इन्द्रपाल ने यह उपाय किया कि एक सूटकेस में कुछ विस्फोटक पदार्थ तेजाब के साथ इस तरह रख दिये कि सूटकेस को पटक देने पर कुछ देर बाद विस्फोट हो जाय। इस सूटकेस में उसने कुछ कागज भी रख दिये जिनमें कुछ काल्पनिक पतों पर लिखी हुई चिट्ठियों के साथ हंसराज का वास्तविक पता भी था। वह सूटकेस को साथ लिये बाज़ार गया। दूध दही की एक दूकान पर सूटकेस रख कर दही की लस्सी पीने बैठ गया और सूटकेस को छोड़ कर आगे चल दिया। कुछ देर बाद सूटकेस मामूली धड़ाके से बिना किसी को चोट पहुंचाये फट गया। पुलिस तहकीकात करने पहुंच गयी।

इन्द्रपाल ने हंसराज को संदेश भेज दिया कि तुम पर पुलिस को संदेह हो गया है तुरन्त घर छोड़ कर हमारे पास आ जाओ। हम तुम्हारी रक्षा का प्रबन्ध कर देंगे। तीसरे चौथे दिन वास्तव में ही लायलपुर में हंसराज के मकान की तलाशी हो गयी। हंसराज घर छोड़ चुका था इसलिये गिरफ्तार नहीं हुआ। अब इन्द्रपाल को आशा हो गयी कि हंसराज मरता क्या न करता की अवस्था में दल की सहायता करेगा ही परन्तु हंसराज अब भी हीले बहाने

कर अपनी रक्षा के प्रबन्ध की ही माग कर रहा था। वह कभी सुखदेवराज के दल मे हो जाने की बात करता कभी इन्द्रपाल के दल मे। इसके अतिरिक्त हंसराज को शायद यह भी ख्याल था कि वह इन्द्रपाल और इस उपदल के दूसरे साथियो की अपेक्षा अधिक शिक्षित है और दल के काम को चलाने के साधन मूर्छा गैस, वायरलेस आदि उसी के हाथ मे हैं इसलिये इन लोगो को उस का नेतृत्व मानना चाहिये।

हंसराज बहुत गरीबी मे निर्वाह करने की कठिनाई की शिकायत करता रहता। इन्द्रपाल और उस के साथी अपनी सब जमापूजी आतिशीचक्कर या बम बनाने, प्रेस खरीदने और हंसराज के मूर्छा गैस बनवाने में खर्च कर चुके थे। अवसरवश 'शेरे खालसा' अखबार से इन लोगो की नौकरिया भी छूट गयी थी। यह लोग आजाद, धन्वन्तरी, सुखदेवराज या मेरी तरह अपने परिचय, अपनी बातचीत से परिचितो को प्रभावित करके रुपया भी इकट्ठा न कर सकते थे इसलिये इस समय बहुत ही कठिन अवस्था मे थे।

हंसराज वायरलेस आविष्कारक समझा जाने के कारण थोड़ा बहुत पैसा इकट्ठा कर लाता था जो वह दल के दूसरे साथियो को न देता था। हंसराज पैसा मागते समय लोगो पर प्रभाव डालने के लिये प्राय अपना परिचय वाइसराय की ट्रेन के नीचे वायरलेस से बम विस्फोट करने वाले क्रान्तिकारी के रूप मे देता था। इस समय तक किसी मुकद्दमे मे उस विस्फोट का रहस्य प्रकट नही हुआ था इसलिये लोग उसकी बात पर विश्वास भी कर लेते थे। हंसराज की इस करतूत का एक प्रमाण अभी कुछ ही दिन पूर्व पंजाब के बटवारे के बाद लखनऊ आये एक सज्जन से भी मिला। इन्द्रपाल के नये-नये उत्साही साथियों की असावधानी के कारण स्वयं उस पर भी पुलिस को सदेह हो गया था। इन्द्रपाल सकट मे होने पर भी वह अपने विचार मे अन्याय के विरुद्ध मेरी सहायता मे लड़ जाने के लिये तैयार था।

× × ×

अभी इस स्थिति मे कुछ दिन बाद मुझे दुर्गादास खन्ना* का सन्देश उस से मिलने के लिये मिला। मेरे विचार मे लाहौर के साथियों मे वही सब से चतुर और गम्भीर था। शायद मुझे किसी तरह घेर लेने में सफलता न पाने पर दुर्गादास को भी सहायता के लिये कहा गया था। सतर्कता के विचार से मैं खन्ना को सूचना दिये बिना उस के घर पर ही उस से मिलने चला गया

* दुर्गादास खन्ना स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात पंजाब की दूसरी विधान सभा के अध्यक्ष थे।

था। इससे पूर्व सन्ना से मेरा बहुत मित्रता-सा परिचय था। मेरे लाहौर से जाने के पहले वह एक बार रात के समय 'शालीमार' बाग में मुझे मिला था। उस समय सन्ना ने मुझ से प्रकाशवती के सम्बन्ध में पूछा था। सन्ना की इस जिज्ञासा का कारण मैंने उसका लाहौर का होना, उसकी बिरादरी और प्रकाशवती जी के परिवार से सम्बन्ध होना समझ लिया था।

उस समय भी सन्ना ने साफ बात की—"प्रकाश देश का कुछ काम कर सकेगी या तुम उसे वैसे चाहते हो?"

मैंने भी साफ ही उत्तर दिया था—"मैं प्रकाश को बिलकुल नहीं जानता था। उसके बारे में केवल सुना था लेकिन अब सब जान गया हूँ। Now I respect and love her (अब उसका आदर और उससे प्रेम भी करता हूँ)। वह सभी कुछ कर सकेगी। उस में साहस और बुद्धि दोनों हैं।"

दुर्गादास ने नसीहत दी थी कि प्रकाशवती के परिवार के लोग इस घटना से बहुत अपमान अनुभव करते होंगे। वे क्रोध में हैं। न जाने क्या कर डालें। सावधान रहना। उसे लाहौर से बाहर ही भेज दो।'

इस बार मिलने पर भी सन्ना ने प्रकाशवती के सम्बन्ध में याद दिलाकर पूछा—"तुम उसे चाहते हो या तुम उसका आदर करते हो। मैंने उसके सम्बन्ध में कुछ बदनामी की बात सुनी है।"

मुझे बुरा लगा, मैंने कहा—"मैं उस के आदर के लिये जिम्मेवार हूँ। जिसे कुछ कहना हो, मेरे सामने कहे।"

बातचीत अंग्रेज़ी में हो रही थी। उसने पूछा—"क्या तुमने उससे विवाह कर लिया है?"

मैंने स्वीकार किया।

सन्ना ने सन्देश दिया, धन्वन्तरी मुझसे मिलना चाहता है।

"बहुत अच्छी बात है। मैं स्वयं उस से मिलना चाहता हूँ। तुम मुझे ले चलो।" मैंने उत्तर दिया।

"एक बात कहना चाहता हूँ यदि किसी से न कहो," दुर्गादास सोच कर बोला, "वचन दो, किसी से न कहोगे।"

मेरे स्वीकार कर लेने पर उस ने कहा—"घबराना नहीं।"

"मैं घबराता नहीं हूँ।"

"केन्द्रीय समिति ने तुम्हें गोली मार देने का निर्णय किया है। तुम्हें इसी बात के लिये बुलाया जा रहा है।"

"यह मैं जानता हूँ। मुझे यह खबर मिलने की जिम्मेवारी तुम पर नहीं है, निश्चिन्त रहो। मुझे लाहौर आने से पहले और लाहौर में भी यह खबर मिल चुकी है।" मैंने खबर का असली स्रोत छिपाने के लिये झूठ बोला, "मैं

इसके लिये सतर्क हू इसीलिये मैंने तुम्हें साथ चलने के लिये कहा है। तुम धन्वन्तरी से कह दो कि मुझे उन लोगो के षडयन्त्र की सूचना कई दिन पहले से मिल चुकी है। उसे समझ लेना चाहिये कि वह कितने पानी में है और दल के लोग किसके साथ है। इस पर भी मैं आज़ाद और केन्द्रीय समिति के सामने बात करने और अपने सामने किये गये दल के निर्णय को मानने के लिये तैयार हू। वह झूठ बकता है, कोई निर्णय नही हुआ। प्रमाण क्या है ? यदि वह लडाई चाहता है, मैं उस के लिये तैयार हू।"

"यह बड़े अफसोस की बात है। अगर ऐसा फैसला हुआ भी है तो क्यो और कैसे किया गया ?" दुर्गादास ने दुख प्रकट किया।

'मुझे मेरा कोई अपराध नही बताया गया। सफाई देने का कोई अवसर नही दिया गया। यह धन्वन्तरी और सुखदेवराज की नेतृत्व के लिये व्यक्तिगत महत्वाकाक्षा और ईर्षा है, केन्द्रीय समिति का निर्णय नही। मेरे विरुद्ध कोई आरोप है तो मेरे सामने केन्द्रीय समिति में मेरा मामला पेश हो, या यहा के कुछ साथी मिल कर इस पर विचार करें। आरोप लगाने वाले अपनी बात कहें, मैं अपनी बात कहू, जो निर्णय होगा, स्वीकार करूगा। परन्तु या खामुखा बकरे की मौत मर जाने के लिये तैयार नही हू। मेरे साथ भी छ सशस्त्र आदमी हैं। गोली लग जाने पर भी मैं पिस्तौल की पूरी गोलिया चलाकर ही छोड़ूगा चाहे धन्वन्तरी सामने आये, चाहे आजाद! यदि मैं अपनी सफाई का अवसर दिये बिना मारा जाता हू तो क्रान्तिकारियो के इतिहास में मेरे नाम पर कलक का धब्बा बना रहेगा। सामर्थ्य रहते मैं यह न होने दूगा। यदि यह लोग मुझे चुपचाप, कही बेखबरी में गोली मार भी देंगे तो इन का यह काम दल को ले डूबेगा। मेरे साथी अन्याय का बदला लिये बिना न रहेंगे। मुझे बचाने के लिये खबर देने वाले भी ईमानदार साथी हैं। वे कैसे मान लें कि दल का निर्णय है। या तो आज़ाद के नाम पर धोखा दिया जा रहा है या उसे मूर्ख बनाया जा रहा है। ऐसे आदमी की बुद्धि पर क्या भरोसा किया जाये ?"

क्रोध और खिन्नता तो थी ही इस के अतिरिक्त दल की मार्फत धन्वन्तरी को धमकाने और डराने के लिये कूटनीति से काम लेने का भी यत्न किया। इस के लिये मैंने कभी ग्लानि भी अनुभव नही की क्योंकि यह सब मैं धोखे और निरंकुशता के विरुद्ध न्यायोचित अधिकार के लिये कर रहा था।

दुर्गादास ने मुझे आश्वासन दिया—'तुम्हें सफाई का अवसर न दिया जाना तो असह्य अन्याय है ही पर मैंने जो आरोप सुने हैं, मुझे बिलकुल निरर्थक और अस्पष्ट जान पड़े हैं।"

उस समय तक मुझे अपने विरुद्ध आरोपो के विषय में पता न था। मैंने उस से पूछा—"आखिर आरोप है क्या ? मुझे तो कुछ भी बताया नही गया।"

उस ने बताया—"तुम्हारे विरुद्ध आरोप है कि तुमने प्रकाश को केवल अपनी विलासिता के लिये भगा कर दल पर कलंक लगाया है। तुमने दल में प्रकाशवती का आदर बढ़ाने के लिये प्रेम पर झूठा दोष लगाया कि उस ने प्रकाश के भेजे हजार रुपये गुम कर दिये। तुम भगवतीचरण से ईर्षा करते थे। तुमने जान-बूझकर ऐसा बम बनाया जो फेंकते समय ही फट जाय। इस से राज का पाँव जख्मी हुआ और भगवती की जान गयी। भगवती की जान बचाई जा सकती थी परन्तु तुम ने जान-बूझ कर समय पर सहायता न पहुँचायी। तुम भगतसिंह को जेल से छुड़ाने के विरुद्ध थे क्योंकि अब अपनी जान बचाकर प्रकाश के साथ भाग जाना चाहते हो। बहावलपुर रोड के बंगले में विस्फोट तुम्हारी ही शरारत से हुआ ताकि वह एक्शन हो ही न सके। तुम जब तक उस कमरे में रहे, बम नहीं फटे परन्तु तुम्हारे बाहर निकलते ही फट गये। तुम्हारे व्यवहार के कारण सभी को सन्देह है कि आराम से रह सकने के लोभ में किसी भी समय जाकर पुलिस में भेद देकर सब को पकड़वा कर खुद बच जाओगे।"

इन आरोपों को सुन कर मैं कुछ देर चुप ही रह गया और फिर बड़े दुख से उत्तर दिया—"यह आरोप ईर्षा के आधार पर कल्पनामात्र हैं। इन का प्रयोजन साथियों को कुछ बताये बिना मुझे रास्ते से हटा देना है। जितनी घटनाओं का जिक्र इन आरोपों में है, उन में से प्रत्येक घटना में कोई न कोई व्यक्ति सदा मेरे साथ रहा है। क्या उन व्यक्तियों से इस विषय में प्रश्न किये गये हैं? प्रकाशवती को घर से आने की अनुमति मैंने, आजाद और भगवतीचरण से परामर्श किये बिना नहीं दी थी।* उस के आने पर मेरा क्या व्यवहार था, वह इन्द्रपाल जानता है। यदि वह मेरे बुलाने या मेरे प्रोत्साहन पर आती तो पहले दुर्गा भाभी के यहाँ न जाती। प्रेम ने जिस समय आँसू बहाते हुए हजार रुपये खो जाने की बात बतायी थी, इन्द्रपाल मौजूद था।

भगवतीचरण के प्रति मेरे व्यवहार के लिये इन्द्रपाल और आजाद भी साक्षी

---

* पहले इस प्रसंग में इस बात की चर्चा करना भूल गया हूँ। प्रकाशवती के प्रेम के साथ पहली बार मिलने आने और घर छोड़कर आ जाने के बीच मैं दिल्ली गया था और आजाद से भगवती भाई के सामने इस सम्बन्ध में बात हुई थी। आजाद ने स्वीकार किया था कि मकान आदि किराये पर लेने के लिये दल में स्त्रियाँ सहायक तो अवश्य होंगी परन्तु तुम लोग सोच लो, औरत होती है झगड़े की जड़। मैं उस लड़की को जानता भी नहीं। भगवती भाई और मैं भी प्रकाशवती को जानते न थे परन्तु प्रकाशवती को दल में ले लिये जाने का समर्थन बहिन प्रेमवती ने किया था, इसलिये भगवती भाई इस कदम के पक्ष में थे।

है। भगवतीचरण के हाथ मे जो बम फटा था, वह मेरा तैयार किया हुआ नही बल्कि मेरी अनुपस्थिति मे भगवतीचरण और सुखदेवराज ने ही तैयार किया था। मुझे यह भी मालूम न था कि वे लोग बम की आजमाइश करने गये कब? भगवती के जख्मी हो जाने पर सहायता पहुचाने का प्रबन्ध करते समय पहले छैलबिहारी, फिर बच्चन और इन्द्रपाल मेरे साथ थे। वे क्या चाहते है? बम जिस कमरे मे फटे मैं स्वय उस मे सो रहा था। यह अवसर की बात है कि मेरे और भाभी के उठ आने पर वे दो और पाच मिनिट के अन्तर से फटे। बम दो मिनिट पहले भी फट सकते थे। मैं भाभी के कमरे से निकलने के कुछ सैकण्ड बाद ही बाहर आ गया था। अगर इसमे मेरी शरारत है तो समझाया तो जाय कि वह शरारत कैसे, क्या सम्भव हो सकती थी?"

मैंने दुर्गादास से यह भी कहा, "यह सब सुखदवराज का कूट षडयन्त्र है।" इस प्रकार की कुछ बात उसने भगवतीचरण से भी कही थी परन्तु वह समय झगडे का नही था।

'इन लोगो को सन्देह है कि मै विलासिता मे फस गया हू। किसी दिन पुलिस को भेद दे कर सर्वनाश कर सकता हू। मैं पन्द्रह दिन स जानता हू कि यह लोग मुझे अन्याय मे कत्ल कर देना चाहते है। मैं इसे दल के कुछ लोगो का विश्वासघात समझता हू। यदि मैं क्रोध या भय से पागल हो जाता तो कभी का पुलिस की शरण चला गया होता। मैं आज भी दल के सामने मामला रखने और दल के सामूहिक निर्णय को मान्यता देने के लिये तैयार हू। लोगो मे से किसने मेरी तरह निष्ठा, साहस और सचाई दिखायी है!" मैंने बहुत क्रोध और खिन्नता के स्वर म पूछा।

खन्ना का स्वर द्रवित हो गया—"यही तुम्हारे विश्वासपात्र होने का सब से बडा प्रमाण है। तुम मेरे साथ धन्वन्तरी के यहा चलो। हम लोग इस बात पर जोर देंगे कि आरोपो की जाच होनी चाहिय।"

सन्ध्या आठ बजे का समय था।

"कहा चलना होगा?" मैंने खन्ना से पूछा।

'मिटो पार्क मे।" उसने उत्तर दिया।

मिटो पार्क सध्या आठ के बाद बिलकुल सूना हो जाता था।

"मै चलने को तैयार हू।" मैने कहा, "परन्तु जिम्मेवारी तुम्हारी है। मुझे कोई भी सन्देहजनक व्यवहार दिखायी दिया तो मै पहले गोली चला दूगा और अधेरे मे मुझ पर कही से गोली चली तो मैं तुम्हे गोली मार दूगा।"

'विश्वास रखो!" खन्ना ने आश्वासन दिया, "इस निर्णय को अन्याय समझने के अतिरिक्त, तुम्हे मालूम नही कि प्रकाशवती से मेरा पारिवारिक सम्बन्ध भी है। बुलाया तो तुम्हे वहा गोली मारने के लिये गया है लेकिन मेरे

उसने बताया— तुम्हारे विरुद्ध आरोप है कि तुमने प्रकाश को केवल अपनी विलासिता के लिये भगा कर दल पर कलंक लगाया है। इतना ही नहीं प्रकाशवती की आड़ मकान के लिये उस पर झूठा आरोप लगाया कि उस ने प्रकाश के हजार रुपये गुम कर लिये। तुम भगवतीचरण से ईर्ष्या करते थे। तुमने जान-बूझकर ऐसा बम बनाया जो पहले समय ही फट जाय। इससे राज का पांव जख्मी हुआ और भगवती का जान गया। भगवती भाई बच जा सकते थे परन्तु तुम ने जान बूझ कर समय पर सहायता न पहुंचायी। तुम भगतसिंह को जेल से छुड़ाने के विरुद्ध थे क्योंकि तुम अपनी जान बचाकर प्रकाश के साथ भाग जाना चाहते हो। बहावलपुर रोड के मकान में विस्फोट तुम्हारी ही शरारत से हुआ ताकि वह पकड़ा न जा सके। तुम जब तक उस मकान में रहे बम नहीं फटे परन्तु तुम्हारे बाहर निकलते ही फट गये। तुम्हारे व्यवहार के कारण सभी को सन्देह है कि आराम से रह सकने के लालच में किसी भी समय जाकर पुलिस में भेद दे कर सब को पकड़वा कर खुद बच जाओगे।

इन आरोपों को सुन कर मैं कुछ देर चुप ही रह गया और फिर बड़े दुख से उत्तर दिया— यह आरोप ईर्ष्या के आधार पर कल्पनामात्र हैं। इन का प्रयोजन साथियों को कुछ बताये बिना मुझ से बदला ले लेना है। जितनी घटनाओं का जिक्र इन आरोपों में है उन में से प्रत्येक घटना में कोई न कोई व्यक्ति सदा मेरे साथ रहा है। क्या उन व्यक्तियों से इस विषय में प्रश्न किये गये हैं? प्रकाशवती को घर से आने की अनुमति मैंने आज़ाद और भगवतीचरण से परामर्श किये बिना नहीं दी थी।* उस के आने पर मेरा क्या व्यवहार था वह सुखदेव जानता है। यदि वह मेरे बुलाने या मेरे प्रोत्साहन पर आती तो पहले दुर्गा भाभी के यहां न जाती। प्रेम ने जिस समय आगे बढ़ाते हुए हज़ार रुपये खो जाने की बात बतायी थी सुखदेव मौजूद था।

भगवतीचरण के प्रति मेरे व्यवहार के लिये सुखदेव और आज़ाद भी साक्षी

---

* पहले इस प्रसंग में इस बात की चर्चा करना भूल गया हूं। प्रकाशवती के प्रेम के साथ पहली बार मिलने आने और घर छोड़कर आ जाने के बीच मैं दिल्ली गया था और आज़ाद से भगवती भाई के सामने इस सम्बन्ध में बात हुई थी। आज़ाद ने स्वीकार किया था कि मकान आदि किराये पर लेने के लिये दल में स्त्रियां सहायक तो अवश्य होंगी परन्तु तुम लोग सोचो तो औरत होती है झगड़े की जड़। मैं उस लड़की को जानता भी नहीं। भगवती भाई और मैं भी प्रकाशवती को जानते न थे परन्तु प्रकाशवती को दल में ले लिये जाने का समर्थन बहिन प्रेमवती ने किया था इसलिये भगवती भाई इस कदम के पक्ष में थे।

हैं। भगवतीचरण के हाथ मे जो बम फटा था, वह मेरा तैयार किया हुआ नही बल्कि मेरी अनुपस्थिति मे भगवतीचरण और सुखदेवराज ने ही तैयार किया था। मुझे यह भी मालूम न था कि वे लोग बम की आजमाइश करने गये कब? भगवती के जख्मी हो जाने पर सहायता पहुचाने का प्रबन्ध करते समय पहले छैलबिहारी, फिर बच्चन और इन्द्रपाल मेरे साथ थे। वे क्या चाहते है? बम जिस कमरे मे फटे मैं स्वय उस मे सो रहा था। यह अवसर की बात है कि मेरे और भाभी के उठ आने पर वे दो और पाच मिनिट के अन्तर से फटे। बम दो मिनिट पहले भी फट सकते थे। मैं भाभी के कमरे मे निकलने के कुछ सैकण्ड बाद ही बाहर आ गया था। अगर इसमें मेरी शरारत है तो समझाया तो जाय कि वह शरारत कैसे, क्या सम्भव हो सकती थी?"

मैंने दुर्गादास से यह भी कहा, "यह सब सुखदेवराज का कूट षडयन्त्र है।" इस प्रकार की कुछ बात उसने भगवतीचरण से भी कही थी परन्तु वह समय झगडे का नही था।

'इन लोगों को सन्देह है कि मैं विलासिता मे फस गया हू। किसी दिन पुलिस को भेद दे कर सर्वनाश कर सकता हू। मैं पन्द्रह दिन से जानता हू कि यह लोग मुझे अन्याय से कत्ल कर देना चाहते हैं। मैं इसे दल के कुछ लोगो का विश्वासघात समझता हू। यदि मैं क्रोध या भय से पागल हो जाता तो कभी का पुलिस की शरण चला गया होता। मैं आज भी दल के सामने मामला रखने और दल के सामूहिक निर्णय को मान्यता देने के लिये तैयार हू। लोगो मे से किसने मेरी तरह निष्ठा, साहस और सचाई दिखायी है!" मैंने बहुत क्रोध और खिन्नता के स्वर मे पूछा।

खन्ना का स्वर द्रवित हो गया—"यही तुम्हारे विश्वासपात्र होने का सब से बडा प्रमाण है। तुम मेरे साथ धन्वन्तरी के यहा चलो। हम लोग इस बात पर जोर देंगे कि आरोपो की जाच होनी चाहिये।"

सन्ध्या आठ बजे का समय था।

"कहा चलना होगा?" मैंने खन्ना से पूछा।

"मिंटो पार्क मे।" उसने उत्तर दिया।

मिंटो पार्क सध्या आठ के बाद बिलकुल सूना हो जाता था।

"मैं चलने को तैयार हू।" मैंने कहा, "परन्तु जिम्मेवारी तुम्हारी है। मुझे कोई भी शकाजनक व्यवहार दिखायी दिया तो मैं पहले गोली चला दूगा और अधेरे मे मुझ पर कही से गोली चली तो मैं तुम्हे गोली मार दूगा।"

"विश्वास रखो!" खन्ना ने आश्वासन दिया, "इस निर्णय को अन्याय समझने के अतिरिक्त, तुम्हें मालूम नही कि प्रकाशवती से मेरा पारिवारिक सम्बन्ध भी है। बुलाया तो तुम्हे वहा गोली मारने के लिये गया है लेकिन मेरे

साथ रहने तक कुछ न हो सकेगा। मैं तुम्हें छोड़कर अलग न होऊंगा। मैं चाहता हूं कि बात साफ हो। इस आपसी फूट से दल बरबाद हो रहा है।"

हम दोनो साइकिलों पर मिंटो पार्क की ओर चले। पार्क की सीमा पर पहुंच कर मैंने हाथ से साइकिल को थामा और दूसरा हाथ जेब में पिस्तौल की मूठ पर जमा लिया। तब तक खन्ना पर भी मुझे पूरा विश्वास न था। सड़क पर तो रोशनी थी परन्तु पार्क में कुछ ही कदम भीतर गहरा अंधेरा था। हम दोनों साइकिलें हाथों में थामे पैदल चलने लगे। खन्ना ने टार्च जला ली थी। कुछ कदम दूर एक बेंच और उस पर बैठा एक व्यक्ति दिखाई दिया। खन्ना ने अपने हाथ की टार्च से संकेत किया। मैंने आदमी को पहचाना, यह धन्वन्तरी था। मैं और भी सतर्क होकर खन्ना के बहुत समीप हो गया और पिस्तौल जेब से निकाल लिया। धन्वन्तरी निश्चल बैठा रहा।

खन्ना ने धन्वन्तरी को बात सुनने के लिये कहा। धन्वन्तरी ने अपने हाथ के टार्च को आकाश की ओर उठाकर कुछ संकेत किया। वे दोनों मेरे सामने पांच-छः कदम पर खड़े आपस में बहुत धीमे स्वर में बात कर रहे थे। खन्ना मेरी ओर लौट गया। धन्वन्तरी ने फिर टार्च से संकेत किया। खन्ना ने लौट कर मुझे वापस चलने के लिये कहा। मैंने सतर्कता के विचार से कहा—"सड़क तक धन्वन्तरी भी साथ चले। सड़क तक हम साथ साथ आये। धन्वन्तरी मुंह से कुछ न बोला।

खन्ना ने बीच में पड़ कर यह तय कराया कि मैं और धन्वन्तरी दिल्ली जायें और मामले पर मेरी उपस्थिति में विचार करने का प्रस्ताव आज़ाद के सामने रखा जाय। लाहौर में यह दिन मैंने नित्य नये स्थान पर इन्द्रपाल, जहांगीरीलाल आदि के घरों में गुजारे। दिल्ली लौटने के समय इन्द्रपाल सावधानी के विचार से मुझे स्टेशन तक छोड़ने गया।

लाहौर में तो मैं बहुत साधारण मैले-कुचैले गरीब पंजाबी वेश में रहता था परन्तु स्टेशन पर सूट पहन कर गया। विचार था सेकण्ड क्लास में सफर करूंगा। उस समय का सेकण्ड आजकल के फर्स्ट के बराबर था और फर्स्ट एयर कण्डीशन के बराबर। मन में अब भी धोखे का खटका था। सेकण्ड क्लास में एक बार खिड़कियां और दरवाज़े भीतर से बन्द कर लेने पर मेरे सोये रहते समय कोई व्यक्ति गाड़ी में नहीं आ सकता था।

सावधानी के लिये घबराहट में एक असावधानी हो गयी। बहुत सतर्क रहने के लिये मैं भरा हुआ पिस्तौल कोट की जेब में डाले रहता था और काफी कारतूस भी। टिकट लेने की खिड़की पर पहुंचकर मैंने टिकट के दाम निकाले। भीतर की जेब से नोट और बाहर की जेब से फुटकर पैसे लेकर खिड़की की सिल पर रख दिये। फुटकर पैसों के साथ असावधानी से पिस्तौल के दो

कारतूस भी सिल पर आ गये ।

कनखियो से आस-पास देखा। खिडकी के समीप गडा तुर्रेदार पगडी बाधे खुफिया पुलिस का आदमी मेरी ओर देख रहा था। अब कारतूसो को छिपाने या घबराहट दिखाने का अर्थ होता, निश्चित रूप से फस जाना। कारतूसो को जेब मे डालने के बजाय मैं उन्हे हाथ म लेकर उछालने लगा और जरा ऊचे बिगडैल स्वर म, अग्रेजी मे सेकण्ड के बजाय फर्स्ट क्लास का टिकट मागा ।

"सर, फर्स्ट क्लास मे जगह नही है । सब रिजर्व है !" बाबू न अग्रेजी मे उत्तर दिया ।

मैं बिगड उठा—"क्या बकवास ! तीन बजे फोन पर तुम बोला हमारा जगह रिजर्व किया अब बोलता जगह नई ।" मैंने उलट कर इन्द्रपाल पर क्रोध दिखाया "मुन्शी, तुम तीन बजे फोन किया ?"

"हा हुजूर !" इन्द्रपाल ने भय और विनय म हामी भरी ।

"क्या बोलता ?" क्रोध मे मैंने बाबू को सम्बोधन किया ।

"मैं छ बजे से ड्यूटी पर आया हू, मुझे कुछ मालूम नही।" बाबू ने सफाई दी ।

"हम रिपोर्ट करेगा । अबी सेकण्ड क्लास म दो ।" मैं अब भी कारतूसो को हाथ मे उछालता जा रहा था। बाबू टिकट बना रहा था। इन्द्रपाल की ओर देख फिर मैंन क्रोध प्रकट किया, "क्या देखता है, सेकण्ड क्लास म जगा है । जल्दी सामान लगाओ !"

इन्द्रपाल मेरा सक्षिप्तसा बिस्तर और सूटकेस लेकर प्लटफार्म पर चला गया। उस के पीछे-पीछे मैं चला। खुफिया पुलिस का आदमी कुछ कदम पीछे-पीछे चल रहा था ।

प्लेटफार्म पर पहुच कर मैंन इन्द्रपाल को फिर डाटा—"क्या देखना तुम, गार्ड को जगा पूछो !"

गार्ड सामने ही था। इन्द्रपाल द्वारा 'जट साहब'* के लिये जगह पूछने पर गार्ड ने समीप की गाडी म जगह दिखा दी । वह बिस्तर लगाने लगा । मैं एक हाथ से पिस्तौल को कोट की जेब म थामे हाथ से कारतूसो को उछालता हुआ उडती-उडती नजर खुफिया पुलिस के आदमी के व्यवहार पर रखे था। उसे यह समझाना चाहता था कि मेरे हाथ मे कारतूस देखे जाने मे मुझे कोई आशका नही हो सकती । वह अब कुछ दूर हो गया था और मेरी ओर अब उतनी तीव्रता से न देख रहा था परन्तु था तो मैं उसके सामने ही । ट्रेन का समय हो चुका था परन्तु ट्रेन चल न रही थी । मैंने पुलिस वाले को सुना कर

* अनपढ पजाबी ज्वाइट मैजिस्ट्रेट को जट साहब ही कहते थे ।

गार्ड को फिर पुकारा—"गार्ड !"

"यस सर !" गार्ड मेरी ओर आ गया। जेब से एक पांच या दस का नोट निकाल कर उस की ओर बढ़ाकर मैंने अंग्रेजी में कहा, 'एक टीन ब्लेक एण्ड ह्वाइट सिगरेट ला दो !"

गार्ड लपक कर कुछ दूर स्टाल से सिगरेट का डिब्बा ले आया। सिगरेट का डिब्बा लेकर मैंने शेष दाम लेने से पहले मुंह फेर लिया। गार्ड ने दाम गाडी की सीट पर रख दिये और तुरन्त सीटी बजाता हुआ लौट गया।

यह सब नाटक करके भी मेरा दिल धड़क रहा था, खुफिया पुलिस का आदमी क्या करता है। ट्रेन चल दी तब सांस लिया परन्तु निश्चिन्त न हुआ। अनुमान किया यहां से फोन कर दिया जायगा और पांच मील परे, छावनी के स्टेशन पर पुलिस काफी संख्या में तलाशी के लिये आ सकती है। छावनी का स्टेशन 'मियामीर' भी निरापद गुज़र गया, तब भी मन न माना। यह गाडी 'फ्रन्टियरमेल' थी। प्रायः एक घण्टे की दौड़ के बाद 'कसूर' स्टेशन पर ठहरती थी। मैं बहुत सतर्कता से प्रतीक्षा कर रहा था। कसूर भी निरापद निकल गया परन्तु मैं फिरोजपुर का स्टेशन भी गुज़र जाने तक आहट की प्रतीक्षा करता रहा।

दिल्ली स्टेशन पर भी निश्चिन्त न था। वहां तो अपने साथियों और खुफिया पुलिस दोनों का ही भय था। जब भी ऐसा विकट तनाव सहना पड़ता था उसका प्रभाव शरीर और मेदे पर बहुत पड़ता था। ऐसी अवस्था में दूसरे लोग क्या अनुभव करते हैं, कहा नहीं सकता लेकिन मुझे मुख में एक तरह की कड़ुवाहट, जिसे वैद्य लोग पित्त की अधिकता कहते हैं, अनुभव होने लगती थी।

प्रकाशवती को जामा मस्जिद के समीप वैदराज भल्ला के यहां छोड़ कर गया था। दिल्ली लौट कर मैं सीधा वहां ही पहुंचा। प्रकाशवती एक सप्ताह पूर्व अपने साथियों से मिलने गयी थी तब से लौटी नहीं। यह सुन कर घबराहट बढ़ी। लाहौर जाते समय मैं उन्हें कहीं न जाने या साथियों से न मिलने की बात इसलिये नहीं कह गया था कि वे घबरा न जायें। साथियों को मिलने जाकर उनके इतने दिन तक न लौटने से सन्देह हुआ कि अपनी इच्छा और सुविधा से वहां रहती तो सामान भी ले जाती। अवश्य कहीं कैद कर ली गयीं हैं। मैं स्वयं ही घबरा गया। उल्टे पांव जीना उतरा और बम-फैक्टरी में पहुंचा।

अभी सूर्योदय हुए देर न हुई थी। धन्वन्तरी मुझ से एक गाडी पहले ही आज़ाद से मुलाकात निश्चित करने के लिये दिल्ली आ गया था। वह और सुखदेवराज फैक्टरी में हो सकते थे। जीने में घुसने पर ऊपर के किवाड़ खुले ही दिखाई दिये। मैंने जेब से पिस्तौल निकाल कर हाथ में ले लिया। इससे पूर्व ऐसे अवसरों पर मैंने इतनी जल्दबाज़ी न की थी परन्तु इस समय प्रकाशवती के खतरे में होने की आशंका से मेरा मस्तिष्क चकरा गया था।

फैक्टरी के दफ्तर और बीच के कमरे मे कोई दिखाई न दिया । दाहिनी हाथ की खुली छत पर गया । देखा, धन्वन्तरी खाट पर बिना कुछ बिछाये एक चादर ओढे पडा था । मेरी आहट से उसकी नींद खुली । उसमे कुछ बात न कर मैं लौट पडा । धन्वन्तरी ने आख खुलते ही मुझे हाथ म पिस्तौल थामे अपनी चारपाई से लौटते देखा । वह वैसे ही बैठा रहा । उसमे कोई घबराहट या उजलत न दिखायी । चेहरे पर क्रोध जरूर स्पष्ट था । मेरे व्यवहार से अपमान अनुभव करना स्वाभाविक था परन्तु मेरे सिर पर इस आशका से खून सवार था कि जाने प्रकाशवती के साथ क्या हुआ होगा ? किसी भी कान से मुझे गाली लग जा सकती थी । दुबारा कमरे मे लौटते पर गिरवरसिंह नहाकर गीले शरीर पर धोती पहने दिखायी दिया ।

मैंने गिरवर से प्रकाशवती के विषय म पूछा । मेरी आवाज सुन कर प्रकाशवती समीप के कमरे से निकल आयी । पहली ही नजर म मैं उन के चेहरे पर सूखे आसू और परेशानी पहचान गया । कोई बात न करके मैंने उन्हे तुरन्त अपने साथ चलने के लिये कहा । उन्हे आगे करके मैं पीछे नजर किये जीने तक पहुचा था कि सुशीला जी स्वाभाविक स्वर म पुकार कर आती दिखायी दी—"कब आये, कहा जा रहे हो क्या बात है ?"

'अभी जल्दी है । फिर आऊगा ।' उत्तर देकर मैं जीने से उतर गया ।

वैदराज भल्ला के यहा पहुचने पर प्रकाशवती ने बताया, मेरे उन्हे भल्ला के यहा छोड जाने के चौथे या पाचवें दिन वे साथियो से मिल आने के लिये फैक्टरी चली गयी थी । वहा विमलप्रसाद ने उन्हे रोक लिया । बाद म भैया, धन्वन्तरी आदि भी आये । भैया बार बार उन से पूछते थे, मैं कहा गया था ? मैं प्रकाशवती को अपने जाने का स्थान और प्रयोजन बताकर नही गया था इसलिये उन्हे यही कहना पडा कि वे नही जानती थी ।

आजाद ने समझा कि वे चालबाजी कर रही है और धमकाना शुरू किया—'तुम सब जानती हो । अगर बताओगी नही तो अच्छा नही होगा ।"

दूसरा प्रश्न उन से पूछा गया—'तुम्हारा यशपाल से क्या सम्बन्ध है ?"

आजाद का ऐसा व्यवहार प्रकाश जी ने कभी न देखा था । धमकियो के कारण वह पहले ही खिन्न हो चुकी थी । वास्तविक स्थिति या प्रश्न का प्रयोजन का भी कुछ अनुमान न था । बिगडकर और अपने आत्मसम्मान की रक्षा के लिये उन्होने उत्तर दिया—"जैसा होना चाहिये वैसा है । आप को मतलब ?"

आजाद से हम सभी लोग आदर से बात करते थे । उन के व्यक्तिगत व्यवहार मे ऐसी कोई बात थी भी नही की जो खटकती । बिना आत्मीयता के वे कभी 'तू' का व्यवहार न करते थे । क्रोध मे सदा 'तुम' और 'आप' । उन दिनो धन्वन्तरी, सुखदेवराज और कैलाशपति उन की बहुत चापलूसी भी कर रहे

फैक्टरी के दफ्तर और बीच के कमरे मे कोई दिखाई न दिया। दाहिनी हाथ की खुली छत पर गया। देखा, धन्वन्तरी खाट पर बिना कुछ बिछाये एक चादर ओढे पडा था। मेरी आहट से उसकी नीद खुली। उससे कुछ बात न कर मैं लौट पडा। धन्वन्तरी ने आख खुलते ही मुझे हाथ म पिस्तौल थाम अपनी चारपाई से लौटते देखा। वह वैसे ही बैठा रहा। उसने कोई घबराहट या उजलत न दिखायी। चेहरे पर क्रोध जरूर स्पष्ट था। मेरे व्यवहार स अपमान अनुभव करना स्वाभाविक था परन्तु मेरे सिर पर इस आशका से खून सवार था कि जाने प्रकाशवती के साथ क्या हुआ होगा? किसी भी कोने से मुझे गोली लग जा सकती थी। दुबारा कमरे मे लौटते पर गिरवरसिंह नहाकर गीले शरीर पर धोती पहने दिखायी दिया।

मैंने गिरवर से प्रकाशवती के विषय मे पूछा। मेरी आवाज सुन कर प्रकाशवती समीप के कमरे मे निकल आयी। पहली ही नजर मे मैं उन के चेहरे पर सूखे आसू और परेशानी पहचान गया। कोई बात न करके मैंने उन्हे तुरन्त अपने साथ चलने के लिये कहा। उन्हे आगे करके मैं पीछे नजर किये जीने तक पहुचा था कि सुशीला जी स्वाभाविक स्वर म पुकार कर आती दिखायी दी—"कब आये, कहा जा रहे हो, क्या बात है?"

"अभी जल्दी है। फिर आऊगा।" उत्तर देकर मैं जीने से उतर गया।

वेदराज भल्ला के यहा पहुचने पर प्रकाशवती ने बताया, मेरे उन्हे भल्ला के यहा छोड जाने के चौथे या पाचवें दिन वे साथियो से मिल आने के लिये फैक्टरी चली गयी थी। वहा विमलप्रसाद न उन्हे रोक लिया। बाद म भैया, धन्वन्तरी आदि भी आये। भैया बार-बार उन से पूछते थे, मैं कहा गया था? मैं प्रकाशवती को अपने जाने का स्थान और प्रयोजन बताकर नहीं गया था इसलिये उन्हे यही कहना पडा कि वे नहीं जानती थी।

आजाद ने समझा कि वे चालबाजी कर रही है और धमकाना शुरू किया—"तुम सब जानती हो। अगर बताओगी नही तो अच्छा नहीं होगा।"

दूसरा प्रश्न उन से पूछा गया—"तुम्हारा यशपाल से क्या सम्बन्ध है?"

आजाद का ऐसा व्यवहार प्रकाश जी ने कभी न देखा था। धमकियो के कारण वह पहले ही खिन्न हो चुकी थी। वास्तविक स्थिति या प्रश्न का प्रयोजन का भी कुछ अनुमान न था। खिसककर और अपने आत्मसम्मान की रक्षा के लिये उन्होने उत्तर दिया—"जैसा होना चाहिये वैसा है। आप को मतलब?"

आजाद से हम सभी लोग आदर से बात करते थे। उन के व्यक्तिगत व्यवहार मे ऐसी कोई बात थी भी नहीं जो खटकती। बिना आत्मीयता के वे कभी 'तू' का व्यवहार न करते थे। क्रोध मे सदा 'तुम' और 'आप'। उन दिनो धन्वन्तरी, सुखदेवराज और कैलाशपति उन की बहुत चापलूसी भी कर रहे

थे। परस्पर स्पष्ट आलोचना का ढंग समाप्त हो चुका था। प्रकाशवती की बात से उन्हें कितना क्षोभ आया होगा, यह अनुमान कर लेना कठिन ही है। ऐसी अवस्था में आज़ाद का प्रकाशवती को चांटा न लगा देना उन के स्वयं चांटा सह जाने के बराबर ही था।

मैंने प्रकाशवती को अपने विरुद्ध निर्णय और आज़ाद की परेशानी का कारण बता दिया। सुनकर उन का परेशान हो जाना स्वाभाविक था। यह जानकर कि मैं आज़ाद और दूसरे साथियों से मिलने जा रहा हूं उन्होंने भी पिस्तौल लेकर साथ चलने का आग्रह किया।

मैंने भरोसा दिलाया कि इस बात की बात आवश्यकता नहीं। मैं पिस्तौल तक नौबत न आने दूंगा। मेरा प्रयोजन तो स्थिति को साफ करना है। इस समय भरोसा सचाई और बुद्धि का ही किया जा सकता है। यदि मैं इस समय स्थिति साफ न कर सका और मारा गया तो तुम्हारे बच रहने से कलंक को धो सकने का अवसर शेष रहेगा। उतावली और घबराहट उचित नहीं।

आज़ाद से मिलने से पहले मैं भगवतीचरण गुप्त से मिला और उन्हें सम्पूर्ण स्थिति बता दी। वे सुनकर हैरान रह गये। अपने विरुद्ध निर्णय सुनने के बाद पहले मेरा प्रयत्न इस लज्जाजनक बात को छिपाये रखकर स्थिति को सुधारने का था। उस में सफलता न हुई। अब मैंने समझा कि सचाई को प्रकट कर साथियों के जनमत के बल पर ही मैं न्याय की मांग कर सकता हूं। गुप्त जी को स्थिति बताकर मैंने अपने साथ आज़ाद के सामने चलने का अनुरोध किया। वे इस के लिये आग्रहपूर्वक तैयार हो गये। इस के बाद मैं सुशीला जी से मिला और अपने विरुद्ध निर्णय की बात बतायी। वे भी अवाक रह गयीं। उन का विस्मय देखकर मैं समझ गया कि यह रहस्य इन्हें भी नहीं बताया गया था। प्रयत्न ऐसा ही था कि कम से कम साथियों को पता लगे और मुझे समाप्त कर दिया जाये। उन्होंने विस्मय से मेरे विरुद्ध आरोप पूछे और सुनकर विस्मित रह गयीं, कुछ बात ही न सूझी।

यशपाल की मुक्ति

आज़ाद उस समय कानपुर में थे। कैलाशपति ने उन्हें तार देकर दिल्ली बुलाया था। मैं भगवतीचरण गुप्त और सुशीला जी को साथ लेकर दोपहर के समय फैक्टरी में पहुंचा। आज़ाद धन्वन्तरी के साथ बैठे बात करते दिखायी दिये। हम लोगों को देखते ही आज़ाद के चेहरे और आंखों की लाली और धन्वन्तरी के गम्भीरता से लटक गये चेहरे से ही उन लोगों के क्षोभ का अनुमान हो गया। उस की उपेक्षा कर मैंने आज़ाद को सम्बोधन किया— मैं अपने

खिलाफ लगाये आरोपों को जानना चाहता हू उस की जाच हो।"

भैया की आखे बिलकुल अगारा हो गयी। होठ क्रोध मे फड़क उठे—"तुम अपने साथ आदमियो को लाकर मुझे डराना चाहते हो? किस के हुक्म से तुम इन्ह यहा लाये?" उन्होंने खयालीराम गुप्त की ओर सकेत किया। सुशीला जी तो वहा रहती ही आयी थी, आजाद ने कहा, "तुम मुझे धमकी देते हो कि छ आदमी लेकर मुझे शूट कर दोगे। बुला लाओ अपने साथियो को! देख लूगा किसने मा का दूध पिया है।" उन का हाथ हाथ मूछ पर चला गया।

अनुमान कठिन नही था कि आजाद के इस क्रोध का कारण धन्वन्तरी से प्राप्त समाचार थे। मैने क्रोध दबा कर परन्तु कड़े स्वर म उत्तर दिया—'मुझे नही मालूम तुम्हारे सामने क्या-क्या झूठ बोले गय है। मै तो न्याय और जाच की माग करने आया हू। दल के लोग जिस बात को अन्याय समझते है, उसका विरोध क्यो न करें? मुझे न्याय की माग का भी अधिकार नही है? तुम यदि मुझ से अकेले म बात करना चाहते हो, मैं उसक लिये तैयार हू।'

आजाद ने धन्वन्तरी, सुशीला जी और खयालीराम गुप्त को हटा दिया। अकेले मे मुझसे पहिला प्रश्न यही पूछा—'यह भेद तुम्ह किस न बताया?"

"भेद मुझे दिल्ली म ही मिल गया था। मै कानपुर केवल इसलिय गया था कि तुम से बातकर सकू। मुझे स्टेशन पर कोई न मिला। मैं तुम्हारा पता पूछने वीरभद्र के मकान पर गया। उसने मुझ से चालबाजी की—साझ तक मेरे यहा ठहरा। मैं ढूढ कर पता लगा या रात म आठ बजे सरसैया घाट पर मिलना। मैने उससे कहा, साझ स पहले पता क्या नही लग सकता? मैन चार बजे तक तुम्ह उसी के यहा बुला लाने के लिये कहा। मै चार बजे और फिर पाच बजे उसके यहा गया। वह मिला नही। मैं यहा लौट कर लाहौर चला गया। अभिप्राय था 'शेरदिलो' का एक्शन कर तुम्हारा या दूसरे लोगो का सन्देह दूर कर सकू। वहा मुझे जाते ही दो जगह स भेद मिला और इसका विरोध भी सुना। वे लोग तो इस मे सुखदेवराज और धन्वन्तरी का कुचक्र समझ कर उन्हे ही शूट कर देना चाहते थे। मैंने उन्ह बड़ी कठिनाई से रोक कर तुम्हारे सामने बात करने के लिये तैयार किया क्योंकि तुम पर भरोसा था। लोग कैसे मान ले कि यह दल का निर्णय है?"

"मैं कहता हू कि दल का निर्णय है।" भैया को क्रोध आ गया

"निर्णय करते समय मुझे आरोप बताया जाना चाहिये था" मैने जोर दिया।

"आरोप बताने की क्या बात है?" आजाद ने मुझे डाटा, तुम्हारा इस बात से क्या सम्बन्ध है?"

"पति-पत्नी का सम्बन्ध है।" मैंने भी उतने ही जोर से कहा।

"वह इनकार करती है, उसने मेरी इन्सल्ट की। वह मुट्ठी भर की मसनरूप

लड़की कहती है, यार की मारता! तुम लोग पार्टी में गन्द फैलाते हो।"

'गन्द का क्या मतलब?' मुझे क्रोध आ गया। उत्तर दिया, 'इस तरह का अपमान मैं नहीं सह सकता। इस से कम कहते तो मैं जवाब देता। तुमने समता से भी इसी ढंग से बात की इसलिए उसने भी वैसा जवाब दिया।"

'तुमने किसकी इजाज़त से शादी की? शादी करने से पहले सबकी या पार्टी से इजाज़त लेनी चाहिए।' भैया ने धमकाया, "तुम प्रान्त के आर्गनाइज़र हो, तुम्हें पार्टी का रूल नहीं मालूम?

मैंने इस बारे में भगवती भाई से बात कर ली थी। उन्होंने मुझ से बात नहीं की तो यह उनकी भूल थी। मैंने कोई बात छिपा कर नहीं की। इस बारे में तुम भाभी से पूछो। यह उन्हीं का सुझाव था। भगवती भाई से इस संबंध में उनकी मृत्यु से दो दिन पहले बात हुई थी। उस समय भी सुखदेवराज ने मेरी ऐसी इन्सल्ट की थी और मैं तुम्हारे सामने बात करना चाहता था परन्तु भगवती ने रोक दिया कि जेल पर आक्रमण का काम हो लेने दो। उनकी मृत्यु हो गयी और हम लोग बहावलपुर रोड के धमाके के बाद बिछुड़ गये। दिल्ली लौटने पर उन बातों को मैंने महत्व न दिया। मैं समझता था कि हमारा व्यवहार दल के सामने है। किसी का एतराज़ नहीं। यदि साथियों को मेरे चरित्र पर एतराज़ था, तो मुझसे बात की जाती या चेतावनी दी जाती। आप लोग बात मन में छिपाये रहे। मेरे साथ जिस ढंग से व्यवहार किया गया, उसे मैं न्याय नहीं समझता। मुझ पर आरोप लगाया जा रहा है कि मैंने प्रकाशवती को अपने शौक के लिये घर से भगाया। क्या भगवती भाई और तुम्हारे सामने बात नहीं हुई थी? इस विषय में इन्द्रपाल, प्रेम और भाभी से क्यों नहीं पूछा गया? जो कुछ सुखदेवराज और धन्वन्तरी ने कह दिया, वही सच मान लिया गया। मेरा विचार दल को धोखा देने का या तुम्हारे प्रति विश्वासघात का होता तो बदला लेने और अपने प्राण बचाने के लिये पुलिस के पास चला जाता। तुम लोग मेरी या प्रकाशवती की बोटी-बोटी काट डालो तब भी मैं पुलिस के पास नहीं जाऊँगा लेकिन एक दिन तुम्हारा अन्तरात्मा तुम्हें धिक्कारेगा।" यह कह मैंने अपना रिवाल्वर निकाल कर भैया के सामने रख दिया, "   अपराध बताये और प्रमाणित किये बिना साथियों को कत्ल कर देने से ही यदि शान्ति हो सकती है तो कर लो!" मेरे आँसू न रुके।

दुर्गादास से कह कर धन्वन्तरी की मार्फत जो कुछ मैंने कहलाया था, वह भी किसी न किसी रूप में उन तक पहुँच चुका था। आज़ाद की आँखों से भी झरना सा झरने लगा।

आज़ाद आँखें पोंछे बिना बोले—"जो होना था हो गया। तुम्हें यह बताना

(१९२९—१९३१)
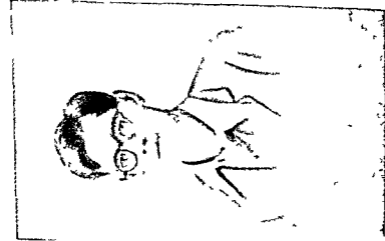
यशपाल

प्रकाशवती

पड़ेगा कि भेद किसने दिया, नहीं तो पार्टी चल ही नहीं सकती।"

'इसके लिये मैं मजबूर हूं। हो सकता है भेद देने वाले कभी स्वयं ही यह बात बता दें। उन्हें यह विश्वास है कि उन्हों ने पार्टी के हित में ऐसा किया है। मेरी उन लोगों से व्यक्तिगत मित्रता तो है नहीं परन्तु मैंने जो वचन दिया है, उसे न तोड़ूंगा। मैंने तुम्हारे साथ विश्वासघात नहीं किया, उनके साथ भी नहीं करूंगा। इस बात के लिये गोली मारना चाहो तो विवश हूं। मुझे संतोष रहेगा, बात पर मर रहा हूं।"

भैया दो तीन मिनिट चुपचाप दोनों पंजे जोर से बांधे सोचते रहे और बोले—"यह पार्टी चल नहीं सकती।' आंखें पोंछ कर उन्हों ने सुशीला जी, धन्वन्तरी और कैलाशपति को बुला लिया और क्रोध में कहा, "मैं पार्टी वार्टी कुछ नहीं रखूंगा। मुझे किसी पर विश्वास नहीं है। मुझे सब ने धोखा दिया है। तुम सब लोग बड़े-बड़े विद्वान बी०ए० ऐसे हो। मुझे उल्लू बनाते हो। साथ बैठ कर कुछ फैसला किया जाता है और फैसला करने वाले ही धोखा देते हैं। अब जो हो गया लेकिन यह बात पक्की है कि भेद कौन्सिल (केन्द्रीय समिति) से ही फूटा है। मेरा सिर चक्कर खा गया है कि ऐसे कौन बेईमान है। मैं ऐसी कौन्सिल के साथ काम नहीं करूंगा। मैं अकेला भला। मेरे लिये एक 'माउजर' काफी है। जब कोई रास्ता न होगा, बाजार में पुलिस से लड़ता हुआ मारा जाऊंगा। बस क्रान्ति हो चुकी। तुम लोग आपस में हथियार बांट लो और अपनी-अपनी पार्टियां बना लो।"

सुशीला जी ने पार्टी तोड़ दी जाने का विरोध करके भैया से अनुरोध किया—'कुछ लोगों ने आप को धोखा दिया है परन्तु ऐसे लोग भी तो हैं (उन्होंने मेरी ओर इशारा किया) जिन्होंने अपने कत्ल का सही या गलत प्रयत्न किये जाने पर भी आप को और दल को धोखा नहीं दिया। यदि ऐसा एक भी आदमी आप के साथ है तो पार्टी जीवित रहेगी। यह तो पार्टी की अग्नि-परीक्षा हो गयी। जिन्होंने धोखा दिया है, उन्हें पहचान कर अलग कीजिये।"

धन्वन्तरी ने इस पर भी सिर झुकाये और आंखों में आंसू भरे विरोध किया कि जिस आदमी ने भैया के अधिकार और नेतृत्व के विरुद्ध साथियों को भड़काया है, भैया को अयोग्य, अहम्मन्य और 'बैल बुद्धि' कहा है, उस के साथ वह काम नहीं कर सकता। उस का अभिप्राय मुझ से ही था। अब प्रसंग से यह कहना अनुचित न होगा कि धन्वन्तरी की वह श्रद्धा या भावुकता स्पष्ट ही व्यक्ति के प्रति थी, दल के लक्ष्य के प्रति नहीं। लाहौर में मेरे विरुद्ध जैसे आरोपों का प्रचार किया गया था उन के लिये वह अब लाहौर में क्या जवाब देता? मेरे विरुद्ध निर्णय बदल जाने से पंजाब में उस के प्रतिनिधित्व के रूप में पार्टी की प्रतिष्ठा, अधिकार और शक्ति समाप्त हो जाती।

धन्वन्तरी की बात से आज़ाद को फिर क्रोध आ गया—"ठीक है, जो लोग मुझे बेवकूफ समझते हैं, मैं उन के साथ कैसे काम कर सकता हूं।'

मैंने स्वीकार किया—अपने प्रति न्याय की मांग के लिये और अन्याय के विरुद्ध क्रोध के कारण मैंने बहुत-सी बातें भैया के व्यक्तित्व के विरुद्ध कह डाली हैं। मैंने सदा यही कहा है कि भैया को धोखा दिया जा रहा है और वह धोखे को समझ नहीं पा रहे। 'बैल बुद्धि' भी मैंने कहा है। मैं इसके लिये क्षमा मांगने के लिये तैयार हूं लेकिन मेरे लिये कौन बुरा शब्द प्रयोग नहीं किया गया? मैंने भैया को सम्बोधन किया— तुम बीसियों बार मुझे 'कौवा' या 'बागड़ूस' कहते रहे हो। 'बैल बुद्धि' तुम्हें मैंने ही नहीं, सभी ने कहा है परन्तु निरादर की भावना से नहीं।

मैंने बहावलपुर रोड पर विस्फोट से पहले की एक बातचीत की याद दिलायी जिसमें भगवती, मैं, सुखदेव, धन्वन्तरी, सुशीला जी और दुर्गा भाभी सभी आज़ाद की कुछ बातों पर हम हंस कर उन्हें 'बैल-बुद्धि' कह रहे थे। हम लोग आज़ाद को प्रायः ही 'बैल-बुद्धि' कहते थे परन्तु इस शब्द से समझ की कमी या तिरस्कार का भाव नहीं बल्कि ज्ञान की अधिकता और विश्वासपरता के कारण सन्देह की दृष्टि से छान बीन करने की प्रवृत्ति की कमी का ही अभिप्राय रहता था। मेरी हर बात पर सन्देह की प्रवृत्ति और पुलिस को बार बार धोखा दे देने के कारण मुझे प्रायः ही 'कौवा' और बिना सवारे मुंहफट बात कह देने के कारण 'बागड़ूस' और खर्च के बारे में बेपरवाही और नफासत के शौक के कारण 'प्रिंस' कह दिया जाता था। दूसरे साथियों के भी ऐसे कई नाम थे। दुर्गा भाभी तो हर किसी का कोई उपनाम दिये बिना मानती ही न थी। ऐसे नामों से कोई न चिढ़ता था लेकिन भैया प्रायः चिढ़ जाते थे। इसका मानसिक कारण उनके मन में बैठी यही धारणा थी कि उनके स्कूल-कालिज में शिक्षित न होने के कारण हम लोग उन्हें अशिक्षित समझते हैं।

'नहीं-नहीं, यह नहीं होगा।' भैया ने धन्वन्तरी की बात का विरोध किया। मुझे सम्बोधन कर, आंख बचाते हुए उन्होंने गम्भीर और कुछ आर्द्र स्वर में कहा, "खैर, जो हो गया, उसे भूल जाना ही ठीक है। मुझे अफसोस है कि हम पार्टी का बहुत ही मूल्यवान और भरोसे का साथी खो बैठते। अब हम साथ मिलकर ही काम करना है। एक-दूसरे ने जो कहा, उसे जाने दो।"

निश्चय हुआ कि प्रकाशवती को यशपाल की दल द्वारा स्वीकृत पत्नी और दल का पूरा सदस्य माना जाय। पंजाब का संगठनकर्ता धन्वन्तरी ही रहें और मैं आकर भैया के साथ काम करूं। धन्वन्तरी पंजाब जाकर मेरे सम्बन्ध में निर्णय बदल दिया जाने और मुलह सफाई हो जाने की बात कह दें। मैं लाहौर जाकर धन्वन्तरी के पंजाब का संगठनकर्ता होने की बात का समर्थन साथियों

के सामने कर दू, अपने कब्जे मे रखा हुआ विस्फोटक सामान धन्वन्तरी को सौंप दू और लाहौर पडयन्त्र मे पुलिस के इचार्ज खानबहादुर अब्दुल अजीज को शूट करने की योजना म धन्वन्तरी की सहायता दू ।

भैया न प्रकाशवती को भी फैक्टरी म बुलवाकर बात की—"तुम्हारे साथ जो व्यवहार हुआ उसके लिये हम सब को बहुत दुख है । मेरा तुम से कोई व्यक्तिगत झगडा नही है । मैंने जो कुछ किया, दल के अनुशासन के विचार से किया था । उन सब बातो को भूल जाओ ।"

दल भग

आजाद और सुशीला जी के प्रयत्न से दिल्ली मे सुलह-सफाई हो गई परन्तु धन्वन्तरी को उसम सन्तोष न हुआ । इस सुलह सफाई की क्रियात्मक कठिनाई को वह समझता था ।

लाहौर पहुच कर मने विस्फोटक पदार्थ धन्वन्तरी को सौंप दिय। धन्वन्तरी के पजाब का सगठनकर्ता होने की बात का भी समर्थन कर दिया । बात यहा ही समाप्त न हो गयी । साथियो को मेरी स्थिति के बारे म जिज्ञासा थी । धन्वन्तरी ने कहा कि यशपाल ने अपना अपराध स्वीकार करके दल और आजाद से क्षमा माग ली है इसलिये उस क्षमा कर दिया गया है । पजाब में दल और दल के नेता के सम्मान की रक्षा और किसी बात से हो ही न सकती थी परन्तु मैं अपने लिये अपमानजनक और झूठी बात का समर्थन करने के लिये तैयार न था ।

मैंने विरोध किया—'मामला केन्द्रीय समिति के सामने न पहले रखा गया था न अब रखा गया । यदि पहला निर्णय केन्द्रीय समिति का था तो अकेला आजाद उसे कैसे बदल दे सकता है ? हा, आजाद ने पहले निर्णय की भूल स्वीकार कर ली है कि आरोप झूठे थे । क्षमा मैंने नही, आजाद और झूठा आरोप लगाने वालो ने मागी है ।

"धन्वन्तरी को पजाब का सगठनकर्त्ता केन्द्रीय समिति ने नही केवल आजाद ने नियत किया है क्योकि वह आजाद की चापलूसी करता है । पजाब का सगठनकर्त्ता यहाँ के साथियो को चुनना चाहिये ।" ऐसी अवस्था म मेरे प्रति विश्वास करने वाले साथी धन्वन्तरी का विश्वास कर उसे सहायता देने के लिये कैसे तैयार हो जाते ?

दिल्ली म मेरे और प्रकाशवती के सम्बन्ध के अतिरिक्त किसी दूसरे आरोप पर बात ही न हुई थी । भैया से मैंने दूसरे आरोपों की चर्चा भी की तो उन्हो ने खिन्न होकर बात करने से ही इनकार कर दिया—"कौन कहता है ? क्या फायदा, हटाओ उस बकवास को ।" उन्हो ने केवल बहावलपुर रोड पर बमो

के आकस्मिक रूप से फटने पर ही चिन्ता प्रकट की कि क्या कारण हो सकता है?

इस विषय में मैं स्वयं बहुत माथा पच्ची कर चुका था और लाहौर में वैकुण्ठ शर्मा से मिलकर भी बात की थी। हम लोगों ने यह कारण सोचा था कि बमों का ठीक मुंह जाने के अखबार से दबकर बहुत ज्यादा भर दिया गया इसीलिए रोगन और विस्फोटक मसाले में रासायनिक क्रिया से गर्मी पैदा होने लगा। रोगन में नमी होने के कारण रासायनिक क्रिया बहुत कम परिमाण में होती रही होगी और यथाक्रम गरमी पैदा हो जाने में काफी समय लगा होगा। जैसे किसी रोग की छूत बहुत कम परिमाण में लगने से शरीर में रोग का प्रकोप काफी समय बाद प्रकट होता है। दोनों बमों में मसाला भरने में जितना अंतर रहा होगा ठीक उतने ही अंतर से वे फटे था। इस विश्लेषण से भय का भी समाधान हो गया।

इन दिनों इन्द्रपाल और उसके साथियों की अवस्था उन के पास पैसा बिलकुल न रह जाने और हसराज की फरारी के कारण बहुत ही शोचनीय हो गयी थी। धन्वन्तरी और सुखदेवराज से उन्हें कोई सहायता न मिल रही थी। धन्वन्तरी की पूरी शक्ति और समय मेरे कारण लाहौर में हो गयी गड़बड़ी का सुलझाने में ही लग रहा था। दिल्ली में हो गयी मुठभेड़ सफाई के बाद भी जब मैंने लाहौर में अपने लिये दल के जाने माने साथियों में उचित स्थान न देखा तो फिर इन्द्रपाल के सहयोग से पथक काम चलाने की बात सोची।

मैं २६ या २७ अगस्त दोपहर के समय उस के मकान पर पहुंचा। मकान के भीतर जाने से पहले हाते में एक ओर निष्प्रयोजन बैठे सन्दिग्ध से व्यक्ति पर निगाह पड़ी। हाते की दीवार की आड़ के कारण इस आदमी को सड़क से न देख सका था। लौट जाने के बजाय जोर से दरवाजा खटखटा कर निश्चिन्त रूप में भीतर गया। मैंने इन्द्रपाल को चेतावनी दी— तुम्हारे यहाँ तो खुफिया पुलिस का पहरा लगा जान पड़ता है। यहां तक आ गया था भीतर आये बिना मुड़ जाता तो उसे सन्देह हो जाता। मैं तुरन्त जा रहा हूं। कहीं बाहर आकर बात करो।

मुझे देखकर उसे भी विस्मय और घबराहट हुई। दिल्ली से लौट कर मैं उसे न मिल सका था। सहसा मुझे देखकर उसने आश्चर्य प्रकट किया— तुम यहां कैसे आ गये? यहां तो तीन दिन से सी० आई० डी० का पहरा है। यह स्थान, गवालमंडी की बैठक और जहांगीरीलाल का मकान सब घिर चुके हैं। बड़ी गलती की तुमने। अब लौटोगे तो पीछा किया जायेगा।

खड़े खड़े ही मैंने पूछा— मालूम हो गया था तो तुम लोग फरार क्यों नहीं हुए?

उसने उत्तर दिया—"तीन दिन से खाने के लिये भी पैसा नहीं है। तुम्हारे जाने के दो दिन बाद से पुलिस पीछा कर रही है। किसी से मिलता कैसे ?"

उस के पास कुछ बम व खोल थे। मैंने पूछा वे कहां है ? उसने बताया मास्टर नन्दलाल के यहां रख दिये हैं। जल्दी में मैंने कहा—"तुम भी बाहर निकलो। दोनो अलग-अलग दिशा में जायगे। पुलिस वाला एक का ही पीछा कर सकेगा।"

इन्द्रपाल ने स्वीकार किया—"ठीक है, मेरा ही पीछा करेगा। मैं जहां जाता हूं पीछा करता है।" बाहर निकलते समय उसने पूछा 'कुछ पैसे हैं ? एक बण्डल बीडी ले आने के बहाने से चलूं।"

मेरी जेब में भी उस समय डेढ दो रुपये से अधिक न था। उसे दे दिया और आश्वासन दिया कि रात साढे आठ बजे 'चौबुर्जी' के एकान्त में या कल सुबह रावी की सडक पर पुलिस को बिना पीछे लिये आये तो दस-पन्द्रह रुपये कहीं न कहीं से अवश्य ला दूंगा।

हम लोग गवर्नमेन्ट कालिज की ओर से अनारकली की ओर गये थे। इन्द्रपाल एक दुकान पर लस्सी पीने के लिये खडा हो गया। खुफिया पुलिस को देखने के लिये मैंने कुछ आगे बढ कर पीछे घूम कर ऊंची आवाज में पुकारा, "अच्छा, शाम को आऊंगा। कहीं चले न जाना। अभी दुबारा जा रहा हूं।"

खुफिया पुलिस का सिपाही इन्द्रपाल को आंख से ओझल न होने देने के लिये वहां ही ठहर गया था। इस पर भी मैं मेडिकल कालिज के भीतर घुस कर कुछ देर कम्पाउण्डरों के क्वार्टरों में किसी काल्पनिक व्यक्ति को खोजता देखता रहा कि कोई पीछे तो नहीं है।

इन्द्रपाल अपने प्रति सन्देह का निश्चय हो जाने पर गिरफ्तारी की आशंका में हथियार और दूसरा सामान तो हटा चुका था परन्तु स्वयं न हटा था। मुझे उसका यह व्यवहार बहुत ही अनुचित लगा। अपनी आर्थिक कठिनाई और साथियों के पारस्परिक व्यवहार से वह इतना निराश हो गया था कि फरार होकर कुछ कर सकना सम्भव न समझ रहा था। शायद उसे आशा थी कि गिरफ्तार हो जाने पर भी सबूत के अभाव में कुछ दिन बाद छूट जायगा और फिर मेहनत करके शान्त पारिवारिक जीवन बितायेगा। वह रात में चौबुर्जी पर नहीं आया। सुबह रावी की सडक पर भी नहीं आया। बाद में मालूम हुआ कि उस सन्ध्या में उसके मकान पर पहरा बढा दिया गया था और दूसरे दिन सुबह पांच बजे से पहले ही वह और उसके दूसरे साथी अपनी-अपनी जगह पर गिरफ्तार हो गये थे। इन लोगों की गिरफ्तारी का प्रभाव मुझ पर भी गहरा पडा। उस समय मेरे भरोसे के साथी वे ही लोग थे।

मैंने एक बार फिर धन्वन्तरी से मिल कर भुगा पर कोई एतराज कर डालने

मे सहयोग के लिये कहा। मेरा सम्मान और अस्तित्व अब इसी बात पर निर्भर करता था। धन्वन्तरी को मेरे ऐसे अनुरोध मे मेरी अपनी स्थिति जमा लेने की ही भावना मुख्य जान पडती थी। यो वह लाहौर मे अब्दुल अजीज पर चोट करने का पूरा यत्न कर रहा था परन्तु योजना जम न रही थी। मुझ से वह खुलकर बात न करता था। उसे सब से अधिक भरोसा सुखदेवराज पर था। मुझे उसने जो कुछ बताया उस पर मेरी आपत्ति यह थी कि अपनी जान बचाने का ख्याल मुख्य रख कर दूसरे को मार सकने की योजना पूरी नही होगी। मेरे बोलने का ढग जरूर कडवा था लेकिन बात ठीक थी। उन लोगो ने नहर के किनारे खानबहादुर अब्दुल अजीज की मोटर पर एक बार गोली चला भी दी थी लेकिन परिणाम सतर्कता बढ जाने के अतिरिक्त कुछ न हुआ। मैं बार-बार कहता था कि सुखदेवराज की योजना मे कायरता से अपनी जान बचाने की बात पहले है, वह योजना कभी पूरी न होगी। धन्वन्तरी को राज की बुद्धि, साहस और निष्ठा पर वास्तव मे गहरा विश्वास था और यह भ्रम दूर होने मे अभी दो मास शेष थे।

दो-तीन दिन बाद धन्वन्तरी ने साफ-साफ बात की। हम लोग तुम्हारे साथ काम नही कर सकते। मेरे पजाब मे रहने पर दल मे एकता भी सम्भव नही होती है। दोनों की ही परस्पर शिकायतें थी। फिर एक बार केन्द्रीय समिति के सामने मसला पेश किया जाने का विचार हुआ। हम दोनों दिल्ली आये। फिर भैया आजाद को बुलाया गया। अदालत मे कैलाशपति के बयान के अनुसार यह बैठक दिल्ली फैक्टरी मे ४ सितम्बर को हुई थी। धन्वन्तरी ने फिर मुझ पर आरोप लगाया कि मैं अपनी प्रतिष्ठा जमाने के लिये दल मे निरकुशता और मनमानी किये जाने का दोष लगा रहा हू। सभी को कायर बताता हू और कहता हू कि दल ने मुझसे माफी मागी है। ऐसी अवस्था मे उस के लिये मेरे साथ काम कर सकना असम्भव हो गया है। उसने मुझे दल से पृथक कर देने पर जोर दिया। कैलाशपति ने उसका समर्थन किया।

मुझ पर आरोप लगाकर, दल के साथियो को मुझे शूट कर देने का निर्णय बताने वाले जिम्मेवार साथी अब विकट परिस्थिति मे थे। वे यही कह सकते थे कि यशपाल ने अपराध स्वीकार करके क्षमा माग ली है। स्थिति को सम्भाल लेने के लिये किस प्रकार की बातें कही जाती थी, इसका उदाहरण मुखबिर मदनगोपाल के अदालत मे दिये बयान मे लग सकता है। मदनगोपाल ने अदालत मे बयान देते समय कैलाशपति की बतायी हुई बात इस प्रकार कही थी—"मगर चूकि यशपाल भेस बदलने मे, बम का मसाला तैयार करने मे और पार्टी के मेम्बरान को आर्गनाइज करने मे माहिर है और पजाब का सबसे बडा कारकुन है इसलिये उसकी कमज़ोरी को नजरअन्दाज़ किया जा रहा है। अगर

उसने अपने चाल-चलन की इसलाह (सुधार) न की तो फिर सेन्ट्रल कमेटी से इजाजत लेकर उसे मार दिया जायगा।"*

मेरा कहना था कि मुझ पर लगाये गये आरोप क्षमा कर देने योग्य नही है। अपराध प्रमाणित हो तो मैं क्षमा नही दण्ड चाहता हू। मै अपराध स्वीकार कर लेने और क्षमा माग लेने की बात का विरोध कर रहा था।

अपने सम्मान के विचार से मैंने बहुत आग्रह किया कि मामला केन्द्रीय समिति के सामने रखा जाय, किसी एक व्यक्ति का निर्णय कुछ अर्थ नही रखता। आजाद को इस बात पर बहुत क्रोध आ गया। झुझला कर बोले—"कहा है केन्द्रीय समिति? जब तक यह न पता चले कि केन्द्रीय समिति मे विश्वासघात करने वाले लोग कौन है, केन्द्रीय समिति को मैं मानने के लिये तैयार नही हू। जिसे मुझ पर विश्वास नही, वह जो चाहे सो करे।"

मुझे चुप रह जाना पडा।

धन्वन्तरी और कैलाशपति दोनो ही के मुझे दल से पृथक कर देने का आग्रह करने पर भैया ने दल को ही तोड दिया। इस बार धन्वन्तरी और कैलाशपति ने मुझे दल मे रख कर काम करने के बजाय दल को तोड दिया जाना ही स्वीकार कर लिया। भैया ने बिहार, यू० पी०, पंजाब, दिल्ली और मध्यप्रान्त, महाराष्ट्र और मेरे लिये हथियार बराबर-बराबर बाट दिये। मैं इस समय किसी प्रान्त का प्रतिनिधि न था परन्तु उन्होने अपने निर्णय से मुझे बराबर का हिस्सा देने के बाद एक बहुत अच्छा रिवाल्वर और भी दिया और द्रवित स्वर मे कहा—"सोहन को हथियार देना लोगो को अनुचित लगेगा परन्तु मैं जो उचित समझता हू, कर रहा हू। दूसरे लोग जाने हथियारो का क्या करेंगे लेकिन सोहन जरूर उनका उपयोग करेगा।"

धन्वन्तरी के मन मे आजाद के लिये इतना आदर और विश्वास था कि मेरे प्रति घृणा और वैमनस्य होने पर भी उसने कोई आपत्ति न की। दल टूट गया। मुझे बहुत ग्लानि थी कि इस दुर्भाग्य का कारण मैं ही बन रहा हू परन्तु मेरे सामने दूसरा उपाय न था।

दल मे धन्वन्तरी और कैलाशपति के अतिरिक्त बच्चन, विमल आदि और लोग भी ऐसे थे जो मेरे आचरण से अप्रसन्न थे। मुझ पर लगाये गये अधिकाश आरोपो की चिन्ता न कर उनकी दृष्टि मे मेरा एक ही अपराध, प्रकाशवती के साथ पत्नी का सम्बन्ध स्थापित कर लेना काफी था। क्रान्ति का काम करने के लिये त्याग और सयम का जो आदर्श उनके मस्तिष्क मे था, उसके अनुसार मेरा व्यवहार उन्हे लज्जाजनक जच रहा था। तीन-चार वर्ष पूर्व दल का एक

* लाहौर षडयन्त्र के मुकद्दमे मे मदनगोपाल का अक्षरशः बयान।

साथी आपस में ही व्यवहार या शायद इस से भी भयंकर अपराध अर्थात दल में सहानुभूति रखने वाले एक व्यक्ति की स्त्री से अनुचित सम्बन्ध रखने के कारण दलनऊ में शट भी कर दिया जा चुका था।

नारी और प्रेम के सम्बन्ध में हि० स० प्र० स० के साथियों का दृष्टिकोण अपने से पहले के क्रान्तिकारियों से बहुत कुछ बदल चुका था। यह लोग नारी को नरक का द्वार और उस विचार और चर्चा को घृणा की वस्तु या पाप न समझते थे। विपरीत इस के नारी की दलित अवस्था के प्रति सहानुभूति और समाज पर उस के ऋण के कारण नारी को समान अधिकार और आदर की अधिकारी मानने लगे थे। हमारी पहिली धारणा बहुत कुछ रोमन कैथोलिक ईसाई ब्रह्मचारियों जैसी थी जो नारी की कल्पना मसीह की पवित्र कुमारी माता के रूप में करके उसमें पूजा की भावना स्थापित कर उस का आदर तो करते हैं परन्तु नारी संग को असामाजिक या मौलिक पाप (आरिजिनल सिन) मानते हैं। हमारे बहुत से साथी प्रेम को स्वाभाविक और स्वार्थ से ऊंचा उठाने वाली प्रवृत्ति मानते थे परन्तु संयम की बाधा सफल बनाये रखने के लिये प्रेम को अतीन्द्रिय रूप में अनुभव कर लेना ही सरस्वति और संयम समर्थ रहे थे। नारी के प्रति प्रेम या आकर्षण को जीवन के व्यवहार में आने देना उनकी दृष्टि में अपराध था। मेरा या मेरे जैसे कुछ साथियों का दृष्टिकोण इस विषय में भिन्न था। हम लोगों ने क्रान्ति के प्रयत्न को जीवन भर का कार्य क्रम मान लिया था। उस काम को निबाहते हुए जीवन की स्वाभाविक अनुभूतियों या आवश्यकताओं को भी यदि वे मार्ग में अड़चन न बनें पूरा कर सकने से घबराते न थे। जिन की भावना इस प्रकार की न थी उन्हें मेरा व्यवहार दल के लिये कलंक जान पड़ा।

इस घटना के पश्चात मैं कई दिन बहुत चिंतित और उदास रहा। मैंने अपने आचरण पर आत्मालोचना के रूप में बार बार विचार किया। मुझे यह स्वीकार करने का कोई कारण न मिला कि मैंने प्रेम के आकर्षण में अपने क्रान्तिकारी कर्तव्य के प्रति कभी कोई अवहेलना दिखायी थी परन्तु उस समय प्रश्न कर्तव्य के प्रति अवहेलना का नहीं बल्कि एक अनुचित काम कर देने का था।

उस समय के अधिकांश क्रान्तिकारी साथी मेरे दृष्टिकोण से सहमत न थे परन्तु आधुनिक क्रान्तिकारी मेरे उस समय के दृष्टिकोण से सहमत जान पड़ते हैं।

हमारे देश में बहुत से राजनैतिक कार्यकर्ता व्यक्तिगत स्वार्थों और पारिवारिक चिन्ताओं को छोड़कर पिछले दस पन्द्रह वर्षों से कम्युनिस्ट पार्टी या अन्य दलों में काम कर रहे हैं उन के विश्वासों और लक्ष्यों के अनुसार उन्हें क्रान्तिकारी ही मानना होगा। ऐसे लोगों के घोर विरोधी भी उन की लगन और

कर्तव्यनिष्ठा को अस्वीकार नही कर सकते । क्रान्ति पथ के इन कार्यकर्ताओ ने अपने जीवन के अनुभवो से यह जान लिया है कि क्रान्तिकारी उद्देश्य के प्रति सतत् निष्ठा निवाहने के लिये जीवन को यथासम्भव स्वाभाविक रखना या प्रेम की परिणिति को भी स्वाभाविक अवसर देना ही उचित है । इन राजनैनिक स्त्री पुरुष कार्यकर्ताओ म सकट म गिरफ्तारी की निरतर सम्भावना होन पर भी अवसर आने पर, परस्पर प्रेम और विवाह सम्बन्ध का स्वीकार कर लेना ही नैतिकता की रक्षा का मार्ग समझा जाता है ।

धन्वन्तरी न आज तक क्रान्ति के ध्येय के प्रति पूर्ण निष्ठा का प्रमाण दिया है । १ नवम्बर १९३० के दिन दिल्ली म गिरफ्तार होने के बाद वह जेल म भी बराबर लडता रहा । उस ने कालापानी' काटा और वहा क्रान्तिकारी दल के प्रगतिशील साथियो के साथ वैज्ञानिक और सगठित मार्क्सवादी मार्ग पर काम करने के लिय अध्ययन करता रहा । जल से छूटने पर स्वास्थ्य खराब होन हुये भी वह लगन से महत्वपूर्ण काम कर रहा है । वह अब भी अपनी धारणा से क्रान्तिकारी काम मे सलग्न है परन्तु १९६० म जब वह लखनऊ आया था, उस ने मुझे जालन्धर मे अपन विवाह म सम्मिलित होन का निमत्रण दिया था। अर्थात अब वह क्रान्ति के लिये यत्न और विवाह म विग्रह नही समझ रहा था। धन्वन्तरी का वह विवाह उस की प्रेमिका का विचार बदल जान के कारण नही हो पाया परन्तु प्रेम को जीवन म व्यावहारिक रूप स चरितार्थ कर सकने के सम्बन्ध म धन्वन्तरी का दृष्टिकोण और आदर्श बदल चुका था, इस म सन्देह नही है ।

कैलाशपति न इस विषय मे जो कुछ किया वह यथाप्रसग कहूगा ।

यह स्वीकार करन म मुझे कोई झिझक नही कि भारत के आधुनिक राजनैतिक क्रान्तिकारियो का नैतिक दृष्टिकोण हिमप्रस के साथियो की अपक्षा अधिक यथार्थवादी है । हमारे देश और समाज की प्रगति की ओर प्रवृत्ति के कारण यह स्वाभाविक भी है । इस प्रगति का आधार आखें मूद कर परम्परागत मान्यताओ की उपासना न करते रहकर, नैतिकता को सामाजिक यथार्थ और भौतिक परिस्थितिया के अनुकूल निश्चित करन का साहस है ।

हिसप्रस मे पहले के क्रान्तिकारियो और हिमप्रस के साथियो का दृष्टिकोण प्रेम और यौन आचार के सम्बन्ध मे अति आदर्शवादी और भावुकतापूर्ण होन का कारण उन की विशेष परिस्थितिया भी थी । वह समय क्रान्ति के उद्देश्य से सगठनो का आरम्भ था । उस समय क्रान्ति के प्रयत्नो के रूप मे किसी एक घटना (एक्शन) को पूर्ण कर देने के लिये ही दल का सगठन भी प्राय समाप्त हो जाता या बिखर जाता था और फिर सिरे से सगठन का आयोजन आरम्भ किया जाता था । सगठन के रूप मे आन्दोलनो की अवधि बहुत ही सक्षिप्त

होती थी और किसी एक सदस्य के क्रांति के कार्यक्रम में भाग न सकने का समय बहुत संक्षिप्त होता था। आजाद के शब्दों में एक बार जमाया दल अठारह महीने से अधिक नहीं चल सकता था।

किसी काम को कुछ समय के भीतर पूरा कर डालने के लिये प्राणयाम की सी एकाग्रता आवश्यक होती है। अस्वाभाविक तनावों को कुछ समय तक भी निबाहा जा सकता है। हिसप्रस के क्रांतिकारी प्रयत्नों की अवधि पहिले क्रांतिकारी संगठनों की अपेक्षा बहुत लम्बी हो गयी थी। लम्बी अवधि या कार्यक्रम को देर तक निबाह सकने की आवश्यकता ने ही हम लोगों की नैतिक धारणा को व्यवहारिकता की ओर ढालना शुरू कर दिया था। हमारे आधुनिक राजनैतिक कार्यकर्ताओं के सामने ऐसी परिस्थितियां और कारण और भी स्थूल और स्पष्ट रूप में आये हैं। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के अनेक कार्यकर्ता पन्द्रह और बीस वर्ष से अपने कार्यक्रम को उसी क्रांतिकारी लगन से निबाह रहे हैं जिस लगन से हिसप्रस से पहले के क्रांतिकारी छः महीने या बरस भर काम करते थे और हम लोगों ने दो तीन वर्ष तक किया था। इसी परिस्थिति ने कम्युनिस्टों और आधुनिक राजनैतिक कार्यकर्ता के दृष्टिकोण को यथार्थवादी बना दिया और उन्होंने अपने संगठन की नैतिकता को भी यथार्थवादी और व्यवहारिक बनाना आवश्यक समझा।

एक प्रश्न जो उस समय मुझे परेशान करता था—और जिस पर मैं अब भी अनेक बार विचार करता हूँ—यह था यदि मेरे उस आचरण को अपराध भी मान लिया जाय तो क्या दल के एक ही व्यक्ति का आचरण और व्यवहार पूरे दल को तोड़ देने के लिये काफी हो सकता था? दल को हानि पहुंचाने का मेरा व्यवहार क्या दल के शेष साथियों को अपने दल को बचाये रखने की चेष्टा में अधिक सबल हो सकता था? इस प्रश्न का उत्तर यही था कि दल के सब साथियों को दल को बचाये रखने की चेष्टा उन के वैयक्तिक प्रयत्नों के रूप में सामने आ ही नहीं सकी। दल में उन की वैयक्तिक चेष्टा के लिये अवसर ही न था। दल के सम्पूर्ण साथियों की चेष्टा और शक्ति दल के नेताओं द्वारा दी गयी आज्ञाओं को मान लेने या पूरा कर देने तक ही सीमित थी। जैसे फौजी अनुशासन में सेना के सब सिपाही आज्ञा देने वाले अफसर के हाथ पांव ही बन जाते हैं अपना स्वतन्त्र सूझ और निर्णय खो बैठते हैं, उसमें मिलता जुलता हो व्यवहार हमारे दल में था। ऐसा व्यवहार एक सत्तात्मक व्यवस्था का प्रतीक है जनवादी व्यक्तिगत क्रियाशीलता और स्वतन्त्रता का नहीं जिसमें प्रत्येक व्यक्ति में समाज के लिये सूझ और प्रेरणा का स्रोत होने की आशा की जाती है।

मेरे विरुद्ध किया गया निर्णय यदि प्रजातान्त्रिक ढंग से किया जाता अर्थात दल के साथियों को इस विषय में विचार कर के अपनी अपनी बात कह सकने

का अवसर मिलता तो या तो ऐसा निर्णय होता नहीं और यदि ऐसा निर्णय होता तो किसी भी साथी को उसके विरुद्ध जाने की इच्छा और साहस न होता। आदर्श के रूप में हम लोग प्रजातन्त्र के सिद्धान्त का आदर करते थे। यह बात 'हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातन्त्र' सेना 'या संघ' के नाम से स्पष्ट है परन्तु प्रजातन्त्र ढंग पर काम नहीं कर पा रहे थे। हमारा काम संगठन और संगठन के प्रयत्नों को अत्यन्त गुप्त रखने की आवश्यकता के कारण एक गुट के रूप में होता था। इस स्थिति में समस्याओं और घटनाओं पर विचार के लिये सामूहिक समान अवसर देना अव्यवहारिक या बहुत जोखिम का होता।

कैलाशपति ने अपने बयान में मेरे विरुद्ध जिस केन्द्रीय समिति में निर्णय किया जाने की बात कही थी उसमें उपस्थित साथियों के नाम—आजाद, वीरभद्र, विद्याभूषण, कैलाशपति, सतगुरदयाल अवस्थी और धन्वन्तरी बताये थे। मैं, भैया आजाद और भगवती भाई द्वारा दल के पुनः संगठन के प्रसंग में केन्द्रीय समिति के सदस्यों के दूसरे नाम बता चुका हूं। यह नाम थे—आजाद, भगवतीचरण, सेठ दामोदरस्वरूप, वीरभद्र, कैलाशपति और यशपाल। भगवती भाई, दामोदरस्वरूप और मेरी जगह विद्याभूषण, धन्वन्तरी और सतगुरदयाल अवस्थी का आ जाना किसी निर्वाचन अथवा जनमत के आधार पर न हुआ था। जैसे पहली केन्द्रीय समिति हम लोगों ने आपस में गढ़ ली थी उसी प्रकार परिस्थिति और आवश्यकतानुसार दूसरी बना ली गयी होगी। किसी भी केन्द्रीय समिति का कोई भी सदस्य अपने प्रान्त के साथियों द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि नहीं था इसलिये वह सदस्य अपने प्रान्त के साथियों के प्रति कोई उत्तरदायित्व भी अनुभव न करता था। प्रान्तों के सदस्य भी ऐसे संगठनकर्ताओं को अपने सिर पर थोपा हुआ ही मान सकते थे।

हमारा संगठन वैयक्तिक अनुमति और वैयक्तिक सूत्रों द्वारा संगठित होता था इसलिये हम एक दूसरे के प्रति जनवादी उत्तरदायित्व और अधिकार अनुभव नहीं करते थे। यह हमारी सबसे बड़ी कमज़ोरी थी। एक ही नेता के निर्देश पर चलने वाले संगठन या आन्दोलन का ढंग सदा ऐसा ही होगा। ऐसे उत्तरदायित्व की कमी ही हमारे साथियों की सबसे बड़ी निर्बलता थी और संकट पड़ने पर दल के प्रति उनके विश्वासघात का कारण भी बन जाती थी। प्रत्येक साथी अपने वैयक्तिक साहस और नैतिक बल पर ही निर्भर कर सकता था।

यह कह देना भी अप्रासंगिक न होगा कि जनवादी दृष्टिकोण से हिसप्रस का संगठन आधुनिक क्रान्तिकारी आन्दोलनों और संगठनों की अपेक्षा पिछड़ा हुआ था परन्तु हिसप्रस का वातावरण और भावना अपने से पहले क्रान्तिकारियों की अपेक्षा अधिक जनवादी था। आजाद द्वारा कमाण्डर इन-चीफ के अधिकार से केन्द्रीय समिति का निर्णय स्वयं बदल देने का कारण उस निर्णय के

होती थी और किसी एक सदस्य के क्रांति के कार्यक्रम में भाग ले सकने का समय बहुत संक्षिप्त होता था। आजाद के शब्दों में एक बार जमाया दल अठारह महीने से अधिक नहीं चल सकता था।

किसी काम को कुछ समय के भीतर पूरा कर डालने के लिये प्राणायाम की सी एकाग्रता आवश्यक होती है। अस्वाभाविक तनावों को कुछ समय तक ही निबाहा जा सकता है। हिंसप्रस के क्रांतिकारी प्रयत्नों की अवधि पहिले क्रान्तिकारी संगठनों की अपेक्षा बहुत लम्बी हो गयी थी। लम्बी अवधि या कार्यक्रम को दूर तक निबाह सकने की आवश्यकता ने ही हम लोगों की नैतिक धारणा को व्यवहारिकता की ओर ढालना शुरू कर दिया था। हमारे आधुनिक राजनैतिक कार्यकर्ताओं के सामने ऐसी परिस्थितियां और कारण और भी स्थूल और स्पष्ट रूप में आये हैं। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के अनेक कार्यकर्ता पन्द्रह और बीस वर्ष से अपने कार्यक्रम को उसी क्रान्तिकारी लगन से निबाह रहे हैं जिस लगन से हिंसप्रस से पहले के क्रान्तिकारी छः महीने या बरस भर काम करते थे और हम लोगों ने दो तीन वर्ष तक किया था। इसी परिस्थिति ने कम्युनिस्टों और आधुनिक राजनैतिक कार्यकर्ता के दृष्टिकोण को यथार्थवादी बना दिया और उन्होंने अपने संगठन की नैतिकता को भी यथार्थवादी और व्यवहारिक बनाना आवश्यक समझा।

एक प्रश्न जो उस समय मुझे परेशान करता था—और जिस पर मैं अब भी अनेक बार विचार करता हूं—यह था यदि मेरे उस आचरण को अपराध भी मान लिया जाय तो क्या दल के एक ही व्यक्ति का आचरण और व्यवहार पूरे दल को तोड़ देने के लिये काफी हो सकता था? दल को हानि पहुंचाने का मेरा व्यवहार क्या दल के शेष साथियों का अपने दल को बचाये रखने की चेष्टा से अधिक सबल हो सकता था? इस प्रश्न का उत्तर यही था कि दल के सब साथियों को दल को बचाये रखने की चेष्टा उन के वैयक्तिक प्रयत्नों के रूप में सामने आ ही नहीं सकी। दल में उन की वैयक्तिक चेष्टा के लिये अवसर ही न था। दल के सम्पूर्ण साथियों की चेष्टा और शक्ति दल के नेताओं द्वारा दी गयी आज्ञाओं को मान लेने या पूरा कर देने तक ही सीमित थी। जैसे फौजी अनुशासन में सेना के सब सिपाही आज्ञा देने वाले अफसर के हाथ पांव ही बन जाते हैं अपनी स्वतन्त्र सूझ और निर्णय खो बैठते हैं उससे मिलता जुलता ही व्यवहार हमारे दल में था। ऐसा व्यवहार एक सत्तात्मक व्यवस्था का प्रतीक है जनवादी व्यक्तिगत क्रियाशीलता और स्वतन्त्रता का नहीं, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति से समाज के लिये सूझ और प्रेरणा का स्रोत होने की आशा की जाती है।

मेरे विरुद्ध किया गया निर्णय यदि प्रजातान्त्रिक ढंग से किया जाता अर्थात दल के साथियों को इस विषय में विचार कर के अपनी अपनी बात कह सकने

का अवसर मिलता तो या तो ऐसा निर्णय होता नहीं और यदि ऐसा निर्णय होता तो किसी भी साथी को उसके विरुद्ध जाने की इच्छा और साहस न होता। आदर्श के रूप में हम लोग प्रजातन्त्र के सिद्धान्त का आदर करते थे। यह बात 'हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातन्त्र' सेना 'या संघ' के नाम से स्पष्ट है परन्तु प्रजातन्त्र ढंग पर काम नहीं कर पा रहे थे। हमारा काम संगठन और संगठन के प्रयत्नों को अत्यन्त गुप्त रखने की आवश्यकता के कारण एक गुट के रूप में होता था। इस स्थिति में समस्याओं और घटनाओं पर विचार के लिये सामूहिक समान अवसर देना अव्यवहारिक या बहुत जोखिम का होता।

कैलाशपति ने अपने बयान में मेरे विरुद्ध जिस केन्द्रीय समिति में निर्णय किया जाने की बात कही थी उसमें उपस्थित साथियों के नाम—आजाद, वीरभद्र, विद्याभूषण, कैलाशपति, सतगुरुदयाल अवस्थी और धन्वन्तरी बताये थे। मैं, भैया आजाद और भगवती भाई द्वारा दल के पुनः संगठन के प्रसंग में केन्द्रीय समिति के सदस्यों के दूसरे नाम बता चुका हूं। यह नाम थे—आज़ाद, भगवतीचरण, सेठ दामोदरस्वरूप, वीरभद्र, कैलाशपति और यशपाल। भगवती भाई, दामोदरस्वरूप और मेरी जगह विद्याभूषण, धन्वन्तरी और सतगुरुदयाल अवस्थी का आ जाना किसी निर्वाचन अथवा जनमत के आधार पर न हुआ था। जैसे पहली केन्द्रीय समिति हम लोगों ने आपस में गढ़ ली थी उसी प्रकार परिस्थिति और आवश्यकतानुसार दूसरी बनाली गयी होगी। किसी भी केन्द्रीय समिति का कोई भी सदस्य अपने प्रान्त के साथियों द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि नहीं था इसलिये वह सदस्य अपने प्रान्त के साथियों के प्रति कोई उत्तरदायित्व भी अनुभव न करता था। प्रान्तों के सदस्य भी ऐसे संगठनकर्ताओं को अपने सिर पर थोपा हुआ ही मान सकते थे।

हमारा संगठन वैयक्तिक अनुमति और वैयक्तिक सूत्रों द्वारा संगठित होता था इसलिये हम एक दूसरे के प्रति जनवादी उत्तरदायित्व और अधिकार अनुभव नहीं करते थे। यह हमारी सबसे बड़ी कमज़ोरी थी। एक ही नेता के निर्देश पर चलने वाले संगठन या आन्दोलन का ढंग सदा ऐसा ही होगा। ऐसे उत्तरदायित्व की कमी ही हमारे साथियों की सबसे बड़ी निर्बलता थी और संकट पड़ने पर दल के प्रति उनके विश्वासघात का कारण भी बन जाती थी। प्रत्येक साथी अपने वैयक्तिक साहस और नैतिक बल पर ही निर्भर कर सकता था।

यह कह देना भी अप्रासंगिक न होगा कि जनवादी दृष्टिकोण से हिसप्रस का संगठन आधुनिक क्रान्तिकारी आन्दोलनों और संगठनों की अपेक्षा पिछड़ा हुआ था परन्तु हिसप्रस का वातावरण और भावना अपने से पहले क्रान्तिकारियों की अपेक्षा अधिक जनवादी था। आज़ाद द्वारा कमाण्डर-इन चीफ के अधिकार से केन्द्रीय समिति का निर्णय स्वयं बदल देने का कारण उस निर्णय के

प्रति अनेक साथियो के असतोष की भावना को जान लेना ही था । मैंने अवसर पाकर भी अपन विरोधियो पर गोली न चलाकर, बार-बार केन्द्रीय समिति के सामने या दूसरे साथियो के सामने अपना मामला रखन की ही माग की, इसका कारण भी दल के भीतर जनमत पर विश्वास और भरोसा ही था ।

काकोरी की घटना से पहल 'हिन्दुस्तान प्रजातन्त्र दल' के क्रान्तिकारियो मे रामप्रसाद बिस्मिल और उनके प्रतिद्वन्द्वियो म एक बार ऐसा ही झगडा किसी कारण पर उठ खडा हुआ था । उस समय निर्णय क लिये जनमत की बात न सोची गयी थी बल्कि सचमुच नदी किनारे जाकर परस्पर गोली चला कर ही फैसला कर लना सम्भव समझा गया था । हम लोग उस अवस्था म न थे । आजाद म तानाशाह की महत्वाकाक्षा बिलकुल न थी । 'मैं कुछ नही कहता, जैसा सब लोग कह' या 'आपस मे तय कर लो ।' यह आजाद के अभ्यासगत मुहावरे थ, व्यवहार भी ऐसा ही था परन्तु गुप्त सगठन का विकास और रूप ही ऐसा न था कि सभी निर्णय सदा जनवादी ढग से किय जा सकते ।

वर्तमान क्रान्तिकारी आन्दोलन भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की तुलना म हिसप्रस के साथियो की एक निर्बलता सैद्धान्तिक स्पष्टता की कमी थी । समाजवाद को हम लोगो ने लक्ष्य मान लिया था परन्तु सिद्धान्त रूप स उस लक्ष्य का परिचय हमारे अधिकाश सदस्यो के मस्तिष्क म बहुत धुन्धला था । समाजवाद के प्रति हमारा आकर्षण विचारात्मक की अपेक्षा भावात्मक ही था । यह कहना अत्युक्ति न होगी कि इस लक्ष्य का जो कुछ परिचय हमारे दल म था वह अधिकतर पजाब के साथियो के प्रभाव से ही था । पजाब के भी सभी साथियो के लिये यह बात समान रूप से नही कही जा सकती । आतिशीचक्कर के अवसर पर इन्द्रपाल की लिखी घोषणा केवल विदेशी सत्ता से विद्रोह और राष्ट्रीय भावना की ही पुकार थी, किसी नयी सामाजिक व्यवस्था की नही ।

अधिकाश म हमारे दल की मुख्य प्रेरणा विदेशी सत्ता का विरोध ही था । विदेशी सत्ता के विरोध की भावना सर्वसाधारण मे मौजूद थी और हमारे दल म अधिकतर एसे ही लोगो के आकर्षित होने की सम्भावना रहती थी जो अपनी मध्यवर्गीय या निम्न-मध्यवर्गीय स्थिति मे जीवन की विषमताओ को उग्ररूप मे अनुभव कर रहे थ और जिनमे साहस की मात्रा सर्वसाधारण से कुछ अधिक थी । विदेशी सत्ता के विरुद्ध आमरण सघर्ष की भावना का मुख्य पहलू विध्वसात्मक था । हम लोगो की विचारधारा म यह पहलू उग्र तो था परन्तु निर्माणात्मक पहलू समाज के नव-निर्माण की भावना उतनी स्पष्ट और सबल न थी जितनी आज के एक साधारण समाजवादी कार्यकर्ता म पायी जाती है । इसी निर्माणात्मक भावना से बल ग्रहण करके साधारण समाजवादी कार्यकर्ता भी पूर्वापेक्षा अधिक धैर्य का परिचय दे सकते है ।

आजाद और कुछ साथियो ने विदेशी सत्ता के विरोध को ही प्राणपन से ग्रहण करके अपने अस्तित्व को उसी मे डुबो दिया था । यह बात उनके जीवन की दो घटनाओ से स्पष्ट है । आजाद ने सोलह-सत्रह वर्ष की आयु म सत्याग्रह आन्दोलन मे सजा पायी थी । आयु कम होन के कारण उस समय उनके हाथों मे लगायी गयी हथकडियां ढीली चूडी की तरह हाथो से बाहर निकल आती थी । उन्हें जेल म रखने लायक न समझ कर केवल बारह बेंत लगा दन की सजा दे दी गयी थी । बारह बेंत का अर्थ है—कपडे उतार कर हाथ पाव टिकटिकी पर बाध कर चूतडो पर इस प्रकार बेंत लगाना कि खाल फट जाय । आजाद ने आह-ऊह किये बिना दांतो म होठ दबाकर बेंतो की मार सह ली थी परन्तु बेंतो की इस मार न उनके मन म विदेशी सत्ता के प्रति घृणा और विरोध उनके मन मे कितना गहरा बैठा दिया होगा, यह कल्पना कठिन नही । आजाद के जीवन की दूसरी घटना थी काकोरी केस म फरार होने की अवस्था मे उनके अपने साथियो को फासी पर लटका दिये जान के समाचार सुनना । उस समय आजाद की आंखो मे क्रोध के आसू आ गये थे । एक तोडेदार बन्दूक बिस्तर मे बाध कर तैयार हो गये थे कि काकोरी के मुकद्दमे की तहकीकात करने वाले अफसरो को गोली मार कर स्वय भी मर जायेंगे । उनके साथी कठिनता से ही उन्हें धैर्य से काम लेने के लिये समझा सके थे ।

दिल्ली म दल भग कर देने के बाद आजाद को कुछ दिन तक कानपुर म और फिर इलाहाबाद म ऐसे साथियो मे साथ रहने का अवसर मिला जिनसे वे समाजवाद के सम्बन्ध म काफी विचार-विनिमय कर सकते थे । इस अवसर का प्रभाव भी उन पर बहुत गहरा पडा । मैंने और हमारे अधिकाश साथियो ने भी मार्क्सवाद का कायदे से तुलनात्मक अध्ययन अपनी गिरफ्तारियो के बाद जेलों म ही किया ।

हिसप्रस के साथी समाजवाद को यदि पूर्णत वैज्ञानिक रूप मे नही तो भावना से काफी दृढता से पकडे हुये थे । साधारणत काकोरी के साथियो की अपेक्षा हमारी समाजवादी प्रेरणा विशेष उग्र थी । इस का सब से बडा प्रमाण है कि हमारे साथियो मे से कोई भी जेल से लौट कर काग्रेस के पूजीवादी सगठन मे न मट पाया परन्तु काकोरी के अनेक साथी बडे उत्साह से काग्रेस को जनवादी सस्था मान कर या अन्य कारणो से उसमे सहयोग दे रहे हैं । हिसप्रस के साथियो मे से केवल दुर्गा भाभी और सुशीला जी ने ही काग्रेस के कार्यक्रम को अपनाने की चेष्टा की थी । जब कांग्रेस विदेशी सत्ता-विरोधी सयुक्त मोर्चे का रूप छोड कर समाजवादी प्रवृत्तियो के प्रति असहिष्णु हो गई, दुर्गा भाभी एक समय दिल्ली प्रान्तीय काग्रेस की प्रधान रह चुकने पर भी काग्रेस से अलग हो गयी ।

सुशीला जी ने अलबत्ता काग्रेस से सम्बन्ध बनाये रखने का यत्न जारी

प्रति अनेक साथियों के असन्तोष की भावना को जान लेना ही था। मैंने अवसर पाकर भी अपने विरोधियों पर गोली न चलाकर, बार-बार केन्द्रीय समिति के सामने या दूसरे साथियों के सामने अपना मामला रखने की ही मांग की, इसका कारण भी दल के भीतर जनमत पर विश्वास और भरोसा ही था।

काकोरी की घटना से पहले 'हिन्दुस्तान प्रजातन्त्र दल' के क्रान्तिकारियों में रामप्रसाद बिस्मिल और उनके प्रतिद्वन्द्वियों में एक बार ऐसा ही झगड़ा किसी कारण पर उठ खड़ा हुआ था। उस समय निर्णय के लिये जनमत की बात न सोची गयी थी बल्कि सचमुच नदी किनारे जाकर परस्पर गोली चला कर ही फैसला कर लेना सम्भव समझा गया था। हम लोग उस अवस्था में न थे। आज़ाद में तानाशाह की महत्वाकांक्षा बिलकुल न थी। 'मैं कुछ नहीं कहता, जैसा सब लोग कहें' या 'आपस में तय कर लो।' यह आज़ाद के अभ्यासगत मुहावरे थे, व्यवहार भी ऐसा ही था परन्तु गुप्त संगठन का विकास और रूप ही ऐसा न था कि सभी निर्णय सदा जनवादी ढंग से किये जा सकते।

वर्तमान क्रान्तिकारी आन्दोलन भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की तुलना में हिसप्रस के साथियों की एक निर्बलता सैद्धान्तिक स्पष्टता की कमी थी। समाजवाद को हम लोगों ने लक्ष्य मान लिया था परन्तु सिद्धान्त रूप से उस लक्ष्य का परिचय हमारे अधिकांश सदस्यों के मस्तिष्क में बहुत धुन्धला था। समाजवाद के प्रति हमारा आकर्षण विचारात्मक की अपेक्षा भावात्मक ही था। यह कहना अत्युक्ति न होगी कि इस लक्ष्य का जो कुछ परिचय हमारे दल में था वह अधिकतर पंजाब के साथियों के प्रभाव से ही था। पंजाब के भी सभी साथियों के लिये यह बात समान रूप से नहीं कही जा सकती। आतिशीचक्कर के अवसर पर इन्द्रपाल की लिखी घोषणा केवल विदेशी सत्ता से विद्रोह और राष्ट्रीय भावना की ही पुकार थी, किसी नयी सामाजिक व्यवस्था की नहीं।

अधिकांश में हमारे दल की मुख्य प्रेरणा विदेशी सत्ता का विरोध ही था। विदेशी सत्ता के विरोध की भावना सर्वसाधारण में मौजूद थी और हमारे दल में अधिकतर ऐसे ही लोगों के आकर्षित होने की सम्भावना रहती थी जो अपनी मध्य-वर्गीय या निम्न-मध्यवर्गीय स्थिति में जीवन की विषमताओं को उग्ररूप में अनुभव कर रहे थे और जिनमें साहस की मात्रा सर्वसाधारण से कुछ अधिक थी। विदेशी सत्ता के विरुद्ध आमरण संघर्ष की भावना का मुख्य पहलू विध्वंसात्मक था। हम लोगों की विचारधारा में यह पहलू उग्र तो था परन्तु निर्माणात्मक पहलू समाज के नव-निर्माण की भावना उतनी स्पष्ट और सबल न थी जितनी आज के एक साधारण समाजवादी कार्यकर्ता में पायी जाती है। इसी निर्माणात्मक भावना से बल ग्रहण करके साधारण समाजवादी कार्यकर्ता भी पूर्वापेक्षा अधिक धैर्य का परिचय दे सकते हैं।

आजाद और कुछ साथियों ने विदेशी सत्ता के विरोध को ही प्राणपन से ग्रहण करके अपने अस्तित्व को उसी मे डुबो दिया था। यह बात उनके जीवन की दो घटनाओं से स्पष्ट है। आजाद ने सोलह-सत्रह वर्ष की आयु म सत्याग्रह आन्दोलन मे सजा पायी थी। आयु कम होने के कारण उस समय उनके हाथो मे लगायी गयी हथकडिया ढीली चूडी की तरह हाथों मे बाहर निकल आती थीं। उन्हें जेल मे रखने लायक न समझ कर केवल बारह बेंत लगा देने की सजा दे दी गयी थी। बारह बेंत का अर्थ है—कपडे उतार कर हाथ पाव टिक-टिकी पर बाध कर चूतडो पर इस प्रकार बेंत लगाना कि खाल फट जाय। आजाद ने आह्-ऊह किये बिना दातों म होंठ दबाकर बेंतो की मार सह ली थी परन्तु बेंतो की इस मार न उनके मन मे विदेशी सत्ता के प्रति घृणा और विरोध उनके मन मे कितना गहरा बैठा दिया होगा, यह कल्पना कठिन नही। आजाद के जीवन की दूसरी घटना थी काकोरी केस म फरार होने की अवस्था मे उनके अपने साथियो को फासी पर लटका दिये जाने के समाचार सुनना। उस समय आजाद की आखों म क्रोध के आसू आ गये थे। एक तोडेदार बन्दूक बिस्तर मे बाध कर तैयार हो गये थे कि काकोरी के मुकद्दमे की तहकीकात करने वाले अफसरो को गोली मार कर स्वय भी मर जायेंगे। उनके साथी कठिनता से ही उन्हें धैर्य मे काम लेने के लिये समझा सके थे।

दिल्ली मे दल भग कर देने के बाद आजाद को कुछ दिन तक कानपुर मे और फिर इलाहाबाद म ऐसे साथियो के साथ रहने का अवसर मिला जिनसे वे समाजवाद के सम्बन्ध मे काफी विचार-विनिमय कर सकते थे। इस अवसर का प्रभाव भी उन पर बहुत गहरा पडा। मैंने और हमारे अधिकाश साथियो ने भी मार्क्सवाद का कायदे से तुलनात्मक अध्ययन अपनी गिरफ्तारियो के बाद जेलों मे ही किया।

हिसप्रस के साथी समाजवाद को यदि पूर्णत वैज्ञानिक रूप मे नही तो भावना से काफी दृढता से पकडे हुये थे। साधारणत काकोरी के साथियो की अपेक्षा हमारी समाजवादी प्रेरणा विशेष उग्र थी। इस का सब से बडा प्रमाण है कि हमारे साथियो मे से कोई भी जेल से लौट कर काग्रेस के पूजीवादी सगठन मे न सट पाया परन्तु काकोरी के अनेक साथी बडे उत्साह से काग्रेस को जनवादी सस्था मान कर या अन्य कारणो म उसम सहयोग दे रहे हैं। हिमप्रस के साथियो मे से केवल दुर्गा भाभी और सुशीला जी ने ही काग्रेस के कार्यक्रम को अपनाने की चेष्टा की थी। जब काग्रेस विदेशी सत्ता-विरोधी सयुक्त मोर्चे का रूप छोड़ कर समाजवादी प्रवृत्तियों के प्रति असहिष्णु हो गई, दुर्गा भाभी एक समय दिल्ली प्रान्तीय काग्रेस की प्रधान रह चुकने पर भी काग्रेस से अलग हा गयी।

सुशीला जी ने अलबत्ता काग्रेस से सम्बन्ध बनाये रखने का यत्न जारी

रखा। इस का कारण भी स्पष्ट है। वे भावुकता के उबाल से हमारे दल मे आ तो अवश्य गयी थी परन्तु उनकी सैद्धांतिक स्पष्टता कितनी थी, इस का प्रमाण मुझे १९३८ मे जेल से अपनी रिहाई के बाद मिला। सयोगवश मैं दिल्ली गया था और स्वर्गीय कम्युनिस्ट साथी बहालसिह के साथ सुशीला जी से मुलाकात करने भी गया था। उस अवसर पर सुशीला जी की कही एक बात याद है। शायद बहालसिंह को ताना देने के लिये ही हो, उन्होने कहा था—"मुझे तो एक ट्यूटर रख कर समझना होगा कि सोशलिज्म है क्या ? ' सुशीला जी की बात सुन कर खेद ही हुआ था कि बेचारी व्यर्थ ही इतने दिन 'हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसियेशन' की सदस्य बन जाने के कारण परेशान रही। यह भी समझ मे आया कि क्यो वे हमारे कार्यक्रम को आधे रास्ते मे छोड कर अलग हो गयी थी। यदि हिसप्रस के अधिकाश साथियो के विचारो और व्यवहार को ही हिसप्रस की विकास दिशा का सकेत माना जाय तो उसे हम किसी न किसी रूप मे समाजवाद की ओर ही झुका पाते है।

दल के टूट जाने से हम सभी दुखी थे परन्तु दल टूट गया था। आजाद को स्थिति सुलझाने का और कोई उपाय दिखाई न दिया था। मुझे अपनी स्थिति ही सब से असहाय जान पड रही थी, क्योकि पूरे विश्वास स मेरा साथ देने वाले लाहौर के निम्न-मध्यम वर्ग के प्राय सभी साथी एक ही हल्ले मे गिरफ्तार हो गये थे।

विकट निराशा अनुभव हो रही थी। उस निराशा म कवल एक ही सूक्ष्म सा अवलम्ब था, भैया आजाद की अन्तिम बात—"सोहन, इस समय और कुछ नही हो सकता। यह तो निश्चय है कि हम जान बचाने के लिये पान बीडी की दुकान खोल कर दिन नही काटेंगे। तुम जब भी कुछ करन की बात सोचो, मेरा भरोसा करना।"

आजाद ने मुझे दिल्ली और कानपुर मे उन से सम्बन्ध स्थापित कर सकने के लिय दो पते बता दिये थे।

(शेष तीसरे भाग म)